के एस भारद्वाज

उपन्यास

1947

कुछ कही, कुछ अनकही

मगर मरना मना है

PEN TO PRINT PUBLISHING

1947

कुछ कही, कुछ अनकही,

मगर मरना मना है

(उपन्यास)

प्रोफेसर के एस भारपूर्व निदेशक प्राचार्य,
भगवान परशुराम शिक्षण प्रशिक्षण संस्थान, गोहाना,
सोनीपत, हरियाणा
2025

समर्पण

दूसरों को साथ देने वाले अकेले कैसे रह सकते हैं?
सात्विक हृदय निर्मल मन स्थाई साथी हुआ करते हैं.

प्राक्कथन

लेखक परमार्थ में भरोसा रखता है और वह इस उपन्यास में एक ऐसे किरदार का सृजन करने में सफल हो जाता है जो ताजिंदगी परमार्थ को अपना स्थाई लक्ष्य बना लेता हैं. पाठकों की प्रतिक्रियाओं का ह्रदय स्वागत.

1

अब तक क्षशाँक बासठ बसंत देख चुके हैं. ऐसा भी नहीं है कि वे इतने भाग्यशाली रहे हों कि सिर्फ बंसत ही देखे हों. सच तो यह है कि हर सांसारिक की तरह उन्होंने भी पतझड़ देखे हैं. सच्चाई तो यह भी है कि उन्होंने पतझड़ अधिक और बसंत कम देखे हैं.

मगर इस सब में अनूठा क्या है? सबके साथ ऐसा ही तो होता है. बसंत कम पतझड़ अधिक. मगर क्षशाँक एक बात में अनूठे हैं. उनकी माँ के द्वारा खिलाये पिलाए गए संस्कार उनके काम आते रहे हैं और क्षशाँक आगे बढ़ते रहे हैं.

माँ ने संस्कार दिए ही नहीं बल्कि खिलाये थे. पिलाये थे. इसलिए वे संस्कार उनके रोम रोम में बस गये हैं. वे संस्कार उनके तन, मन और मस्तिष्क के स्थाई अंग बन गए हैं.

पतझड़ आने पर माँ कहा करती थी, “क्षशाँक, घबराओ नहीं वत्स, ये पतझड़ भी गुजर जायेगा. पतझड़ आया है तो बसंत भी आएगा.”

इतना सुनते ही क्षशाँक को ऐसा लगने लगता था जैसे माँ ने ज़ख्मों पर मरहम लगा दी हो. उनके इसी आश्वासन पर उनके रोम रोम में उर्जा भर जाती थी. मन पंछी की तरह आसमान में उड़ने लगता था. उज्जवल भविष्य की तरंगें नदी बन और बेताब होकर सागर से मिलने को बेताब हो जाती थी और आगे बढ़ जाती थी. पाँव थिरकने लगते थे. नृत्य करने को मन ललक उठता था.

माँ का साया कितना सुखद होता है, ये अहसास भी उनके जाने के बाद ही अधिक होता है. जब माँ होती है तो उनसे लड़ते हैं, झगड़ते हैं, इच्छा पूरी न होने पर पाँव पटकते हैं और कभी कभी तो माँ से रूठ भी जाते हैं.

मगर माँ तो माँ होती है. सब नखरे सहते हुए माँ वैसे ही मुस्कराती रहती थी जैसे सबकी माँ मुस्कराती रही होंगी. उचित मांग को मानने में माँ देर नहीं करती थी. मगर अनुचित मांग पर त्योरी चढ़ाने में देर नहीं करती थी जिसे देख कर क्षशाँक इतने अधिक सहम जाते थे कि अपनी मांग को ही भूल जाते थे.

क्षशाँक को सहमते देख कर उनकी स्नेहभरी मुस्कान उनके चेहरे पर तैर जाती थी. क्षशाँक को मनचाही राहत मिल जाती थी. उसके ज़हन में वो स्नेहिल मुस्कान आज तक चस्पा है जो माँ की याद को ताज़ा बनाए हुए है.

बासठ वर्ष आयु कुछ कम नहीं होती. आज क्षशाँक के सम्मुख बासठ वर्ष का अतीत चलचित्र की मानिंद आँखों के सामने तैर रहा है. जब सम्पूर्ण अतीत सामने आ रहा है तो माँ की यादें क्यों कर याद न आएँगी?

क्षशाँक अचानक अचकचा जाते हैं क्योंकि बुजुर्गों की कही बात उनको याद आ जाती है, "जब अंत निकट आता है तो सारा अतीत आँखों के सामने तैरने लगता है."

"तो क्या मेरा अंत निकट है," अति प्रसन्न हो कर सोचा था क्षशाँक ने.

उसी समय उनको वो सब भी याद आ गया था जो धुव तारे की बगल में एक छोटे तारे की ओर इशारा करते हुए माँ पूछती थी, "क्षशाँक! देखो, वो ध्रुव तारा है. वह अचल है. अपने स्थान पर अडिग है. उसकी बगल में एक छोटा सा तारा है. क्या तुम्हें वो नज़र आ रहा है?"

क्षशाँक तुरंत कहते, "हाँ अम्मा, हाँ. हमें वो तारा साफ़ नज़र आ रहा है. क्या आपको नज़र नहीं आ रहा?"

"आ रहा है न वत्स, आ रहा है. तभी तो तुझे दिखा पा रही हूँ."

"फिर?"

"जब किसी को वो तारा नज़र आना बंद हो जाए तो कहा जाता है कि उस व्यक्ति की मृत्यु नज़दीक है."

माँ की कही बात याद आते ही क्षशाँक खिड़की की ओर लपकते हैं और उसी पर जा जमते हैं. बाहर झाँकने लगते हैं. ध्रुव तारे पर नज़र गड़ा देते हैं और उस छोटे से तारे को ढूँढने लगते हैं. छोटा तारा नजर आ गया है. मन को बेचैनी से भरा सुकून मिला है.

तारे को देख कर उसने सोचा था, "जिंदगी कितनी प्यारी है मगर निराली अधिक है?"

छोटे थे फिर भी क्षशाँक बहुत तार्किक थे. जब माँ उस छोटे तारे को दिखाती तो वे तर्क कर बैठते. अम्मा जी, "ये कैसे हो सकता है? तारे और किसी के जीवन का क्या संबंध?"

माँ का उत्तर भी उतना ही तार्किक होता, "हाँ बेटा हाँ, रिश्ता होता है. तारा छोटा है. जैसे जैसे इंसान की उम्र बढ़ती है नज़र कमजोर होने लगती है. नज़र कमजोर होने का अर्थ है कि मृत्यु निकट."

क्षशाँक कहाँ पीछे रहने वाले थे. उन्होंने कहा, "सुंदर, मेरा सहपाठी चश्मा लगाता है क्योंकि उसकी नजर कमजोर है. तो क्या उसकी मृत्यु निकट है?"

"अरे दुष्ट, शुभ, शुभ बोल. सुंदर अपने माता-पिता की एकमात्र औलाद है."

डपट खा कर क्षशाँक सहम गए थे. किसी अनहोनी के भय से अंदर ही अंदर खौफज़दा हो गए थे. चुप रहने के सिवाय उनके पास कोई विकल्प भी नहीं था. अत: वे चुप हो गए थे.

माँ ने संस्कार भी यही खिलाया पिलाया था, "तर्क करो. उस से ज्ञान में वृद्धि होती है

मगर कुतर्क और वितर्क से बचना चाहिए क्योंकि उससे विवेक का लोप हो जाता है."

माँ को हराने हेतु 'कुतर्क' और 'वितर्क' शब्दों की कुंजी क्षशाँक के हाथ लग जाती और वे प्रश्न दाग देते, "अम्मा, 'कुतर्क' और 'वितर्क' में क्या अंतर है?"

"तर्क सकारात्मक होने के कारण चर्चा को सामान्य सहमति की ओर ले जाता है. वितर्क खुद को सही साबित करने का प्रयास होता है और कुतर्क का उद्देश्य दूसरे को गलत साबित करना होता है. यानि दूसरे पर विजय प्राप्त करना उसका उद्देश्य होता है," माँ समझाती.

उनका उत्तर सुन कर क्षशाँक चकरघिन्नी बन जाते. सारा दिन तर्क, कुतर्क एवं वितर्क को जानने और समझने में गुजर जाता. माँ के भाषा ज्ञान पर वे मंत्रमुग्ध हुए बिना नहीं रहते. न तर्क कर पाते और न वितर्क. कुतर्क का तो प्रश्न ही नहीं उठता था.

आज माँ नहीं हैं. वे तर्क, वितर्क और कुतर्क सुन लिया करती थी. जहाँ ज़रूरत होती थी, क्षशाँक को सुधार दिया करती थी.

मगर आज वे अकेले हैं. न कोई तर्क सुनने वाला है न वितर्क. कुतर्क को सुनने वाले तो आज रहे ही नहीं. ये प्रजाति एकदम दुर्लभ हो गई है. हर कोई अहंकार में डूबा है और हार मानने को अपनी तौहीन समझता है. तर्क, वितर्क और कुतर्क सुनते ही खाने को दौड़ते हैं.

मगर माँ तो माँ होती है. अपने बच्चे की हर बात वो सुन सकती है. तर्क भी, वितर्क भी और कुतर्क भी. जहाँ सुधार की दरकार हो, सुधार देती है. माँ, माँ है ना? माँ माँ होती है.

2

क्षशाँक का जन्म हुए पाँच वर्ष हो चुके थे. यानि पाँच बसंत देख चुके थे. ये दूसरी बात है कि पाँच वर्षीय क्षशाँक को बसंत का अर्थ और महत्व अब तक ज्ञात नहीं हुआ था.

बासठ वर्षीय क्षशाँक को पाँच वर्षीय क्षशाँक की याद हो आई थी. याद आनी ही थी क्योंकि जब कुछ काम धाम रह नहीं जाता है तो साठ पार लोग स्मृतियों के सहारे ही समय काटा करते हैं. पाँच वर्षीय क्षशाँक की याद आते ही उनकी बूढ़ी आँखों में चमक छा गई थी.

इकसठ पार कर चुके क्षशाँक आज उसी पायदान पर खड़े हैं जिस पर पाँच वर्षीय क्षशाँक खड़े थे. इसलिए उनको याद आ गई थी महजबीन दादी और उसके साथ आने वाली उनकी पोती सुगंधा.

जब भी महज़बीन दादी आती तो सुगंधा उनके पल्लू से वैसे ही बंधी चली आती जैसे वो उसी के साथ अटकी हो और जैसे ही वो आती तो क्षशाँक के ज़हन में सुगंध बिखेर देती.

पाँच वर्षीय क्षशाँक महक उठता और कोशिश करता कि सुगंधा उसके और निकट आये. सुगंधा तो निकट नहीं आती मगर पाँच वर्षीय क्षशाँक चुपचाप सुगंधा के नज़दीक सरक जाता. न उसकी दादी को आभास होता न क्षशाँक की अम्मा को क्योंकि वे दोनों तो अपने ही खयालों उलझी रहती थी.

घर के पिछवाड़े लगी बगिया में सुगंधा और क्षशाँक खिसक जाते. खूब धमाचौकड़ी मचाते. मखमली बीरबहूटियों को गौर से देखते रहते. मन भर जाता तो क्षशाँक अमरूद के पेड़

से फल तोड़ कर सुगंधा को देता.

इस पर सुगंधा तुनक कर कहती,"ये तो तोते ने झूठा कर रखा है. मैं कोई तोती हूँ जो उसका झूठा खाऊँ?"

क्षशाँक खिलखिला कर हँसा और बोला, "अरी, तूँ तो छोरी है. तोती कैसे?"

"तोते का खाया अमरूद जो दे रहे हो."

क्षशाँक कुछ समझे नहीं. वे बोले, "क्या मतलब?"

सुगंधा ने चहकते हुए कहा, "झूठा बीबी ही तो खाती है. तोते का झूठा किया हुआ उसकी तोती खाए. मैं क्यों खाऊँ?"

उसकी बात सुन कर क्षशाँक को झटका लगा था. झटका क्यों लगा था, बासठ वर्षीय क्षशाँक को आज तक भी ज्ञात नहीं? उसने पूछा था, "ये किसने कहा कि बीबी को पति का झूठा खाना चाहिए?"

"दादी ने. और अम्मा भी यही कहती है," भोली भाली सुगंधा ने कहा.

यह सुन कर क्षशाँक को जोर का एक झटका और लगा था. लड़कपन था. समझ कम थी. फिर भी उसे वो सलाह बुरी लगी थी.

माँ ने यही संस्कार तो खिलाया पिलाया था कि किसी को किसी का झूठा नहीं खाना चाहिए. क्षशाँक को बुरा लगना ही था.

उसने सोचा था कि सुगंधा की ये दादी और उसकी अम्मा कितनी खडूस हैं? उनको इतना भी नहीं पता कि किसी का झूठा किसी को नहीं खाना चाहिए.

इस मामले में क्षशाँक को सुगंधा अधिक समझदार लगी थी क्योंकि उसने तोते के झूठे फल को खाने से इंकार कर दिया था. कारण जो भी हो, उसने इंकार तो कर ही दिया था.

क्षशाँक भागा चाकू लाने रसोई की ओर. चाकू लेकर आया, तोते के खाए भाग को एक ओर कर के काटा और दूसरा भाग सुगंधा को देते हुए कहा, "ले, झूठे को हमने अलग कर दिया. इसे तो खा सकती हो न?"

सुगंधा खिल खिल कर हँस पड़ी और बोली, 'हाँ, अब ये ठीक है."

जैसे ही सुगंधा ने अमरूद में अपने मोती जैसे दाँत गड़ाए तो क्षशाँक को बहुत खुशी हुई थी.

वो बोली, "तुम भी तो खाओ."

उसकी बात मानते हुए क्षशाँक ने तोते द्वारा खाए हुए भाग को चाकू से साफ़ किया और शेष भाग को खुद खा लिया.

संयोग कुछ ऐसा हुआ कि दोनों एक स्वर में बोल उठे थे, "अमरूद कितना मीठा है?"

अमरूद का स्वाद याद आने पर बासठ वर्षीय क्षशाँक के मुँह पानी आ गया था, और मन ही मन सोचा था काश! आज दाँत होते.

मनन करते हुए वे बोले, “आह! सुगंधा भी तो बूढ़ी हो गई होगी? बूढ़ी ही क्या? हो सकता है जन्नत में जा बसी हो? बच्चे जनते जनते उसमें ताकत ही कितनी रही होगी कि बासठ वर्ष तक जीये? लोग कहते हैं कि मुसलमान बच्चे बहुत अधिक पैदा करते हैं.”

मन में बैठी अम्मा ने वैसे ही दुत्कारा जैसे उन्होंने एक बार पहले भी दुत्कारा था, “अरे दुष्ट, शुभ, शुभ बोल.”

दुत्कार सुन कर बासठ वर्षीय क्षशाँक वैसे ही सहम गए थे जैसे वे पहले सहम जाया करते थे. उन्होंने इधर उधर देखा. कोई नहीं दिखा.

उन्होंने सोचा, “दिखाई कोई नहीं दे रहा है. फिर दुत्कारा किसने?”

अपने वहम पर वे मुस्कराए बिना नहीं रह सके थे और चहक उठे थे, “माँ, आप कितनी अच्छी थी?”

बासठ वर्षीय क्षशाँक वर्तमान से अतीत में फिर जा पहुँचे. ढ़लती उम्र में यादें ही तो अवलंबन बना करती हैं.

बुढ़ापे में समृति लोप भी हो जाया करता है. तभी उनको याद आया था, “अरे, सुगंधा ने तो उसके सामने दम तोड़ दिया था.”

याद आगे बढ़ी. करीब तीन सप्ताह तक न महजबीं दादी आई थी और न ही सुगंधा. बालक क्षशाँक ये जानने को बेताब हो उठा था कि अब वे आना बंद क्यों कर बैठी हैं? मगर पूछे तो किससे?

उस दिन महज़बीं दादी के साथ जो लड़की आई थी, उसको पाँच वर्षीय क्षशाँक पहचान न पाए थे. अपनी अम्मा के कान में फुसफुसाए, “ये लड़की कौन है?”

अम्मा तो उत्तर न दे पाई थी कि महज़बीं दादी बोल उठी, “अरे निगोड़े, ये तेरी बहू है.”

अम्मा और दादी एक साथ ठहाका लगा कर हँस पड़ी थी जिसके कारण पाँच वर्षीय क्षशाँक पर गाज सी गिर पड़ी थी.

वे बोले, “हम न करेंगे इससे शादी. ये तो काली कलूटी है. चेहरे पर काले काले दाग हैं.”

अम्मा और दादी फिर खिलखिला पड़ी.

दादी बोली, “अरे! निगोड़े, ये भी क्या? तूँ तो जिद करता था कि शादी करेगा तो सुगंधा से? आज तुझे हो क्या गया है?”

“ये सुगंधा थोड़े ही है. वो तो गोरी चिट्टी है. इसके मुँह पर तो दाग ही दाग हैं. वे भी काले काले,” पाँच वर्षीय क्षशाँक ने ठुमकते हुए कहा था.

अब की बार अम्मा बोली, “बेटा, ये वही सुगंधा है. मगर इसको चेचक हो गया था. चेहरे पर भी चेचक के फफोले हो गए होंगे. वे अब ठीक हो गए हैं. कुछ समय बाद दाग भी मिट जायेंगे.”

यह सुन कर पाँच वर्षीय क्षशाँक स्तब्ध रह गया था.

3

बासठ वर्ष का सफर कुछ कम नहीं होता. जिंदगी के इतने लंबे सफर के दौरान अनेक पड़ाव आते हैं. अनेक सोपान आते हैं. सुखद कम और दुखद अधिक. पिताजी का स्थानातरण हुआ और सुगंधा पीछे छूट गई.

मगर सुगंधा की याद आज तक ताज़ा है.

क्षशाँक बारह वर्ष के हुए. कुछ समझ विकसित हुई. सुगंधा की महक अब भी ज़हन में बसी थी. प्रेम बीज जो पाँच वर्षीय क्षशाँक के दिल में सुगंधा ने बोया था, वो अब अंकुरित हो कर पौधा बनने लगा था.

उसकी कक्षा में एक छात्र था जिसे सभी सहपाठी नफरत किया करते थे क्योंकि उसका एकमात्र अभिभावक बहुत गरीब था और नाई का काम करता था. सहपाठी उसे नव्वा नव्वा कर कर चिढ़ाते रहते थे.

छात्र का नाम था भालचन्द्र.

सब उसे नफरत करते थे मगर क्षशाँक उससे करते थे स्नेह. पता नहीं क्यों, क्षशाँक को वह बहुत मासूम लगता था? माँ उसकी थी नहीं, अत: उसे कभी कभार खाना भी खुद बनाना पड़ता था.

सहपाठी उसे नव्वा के अतिरिक्त भालू भालू कह कर भी चिढ़ाते रहते थे. एक दिन भालचन्द्र की सहनशक्ति का घड़ा ऐसा लबालब भरा कि वो चिढ़ाने वाले छात्र से भिड़ गया था और उसकी नाक पर मुक्का मार बैठा.

नाक से खून बहने लगा.

शिकायत प्राचार्य के पास पहुँची. प्राचार्य बहुत सख्त थे. वैसे भी गरीब संग सभी सख्त हुआ करते हैं. प्राचार्य ने भालचन्द्र को बुलवा भेजा. उसी के साथ क्षशाँक के कानों में उनके बेंत की तड़ाक तड़ाक आवाज़ गूँजने लगी.

जब भालचन्द्र प्राचार्य के पास जाने लगा तो क्षशाँक ने उसके कान में धीरे से कहा कि अपने आपको निर्दोष साबित करने हेतु गवाही के लिये वह उसका नाम दे सकता है.

“नहीं दोस्त, मैं मार खा लूँगा मगर आपका नाम न लूँगा. आपके पिताजी को पता चलेगा तो वे आपको पीटेंगे कि आप किसी के झगड़े में क्यों पड़े?”

उसका तर्क सुन कर क्षशाँक की आँखों में पानी आ गया था मगर चुप रह गया था. जैसे ही भालचन्द्र प्राचार्य से मिलने या उनके हाथों पिटने कक्षा कक्ष से बाहर निकला, क्षशाँक चुपचाप उसके पीछे पीछे भी लग लिया.

जैसे ही प्राचार्य ने अपनी बेंत उठाई क्षशाँक उनके कार्यालय में घुसा और कहा, “सर, मुझे कुछ कहना है?”

प्राचार्य ने अपने चश्मे के मोटे मोटे शीशों के भीतर से जो क्षशाँक को घूरा तो उसकी सिट्टी पिट्टी गुम हो गई.

मगर वो तो भालचन्द्र को बचाने के लिए गए थे. अत: अपने आपको संभाला और संजोया; और कहा, "सर, नाक से खून मुक्का मारने से नहीं बल्कि फर्श पर गिरने से निकला है."

"लेकिन भालचन्द्र ने मुक्का तो मारा था न?"

"जी सर, मगर मुक्का मारा क्यों, ये भी तो अहम प्रश्न है?"

"क्या मतलब?"

"सर अगर कोई आपको आपके नाम से पुकारने की बजाय आपका नाम बिगाड़ कर बोले तो आप कितने दिन सहन कर सकोगे?"

"कुतर्क करते हो? बुलाऊँ तुम्हारे पिताजी को?" प्राचार्य गरजे.

न जाने क्षशाँक के अंदर उस समय इतना साहस कहाँ से आ गया था कि वे कह बैठे, "ठीक है सर. बुला लीजिए. मगर हम अन्याय के खिलाफ बोलते रहेंगे."

प्राचार्य ने क्षशाँक का वो रूप पहली बार देखा था. अब तक वे उसे बहुत मासूम, शरीफ और पढ़ाकू किस्म का छात्र समझते रहे थे. उसकी चुनौती भरी बात सुन कर वे चौकन्ना हुए और बोले, "कहो, क्या कहना है?"

"सर, आपका नाम क्या है?"

"फिर बकवास? क्या तुम्हें मेरा नाम नहीं पता?"

"पता है सर. मगर पूछना ज़रूरी है."

"सुगन चन्द्र," प्राचार्य ने कहा.

"शुक्रिया सर. अगर मैं आपको सुगनु, सुगना या सुग्गा कह कर पुकारूं तो आप कब तक सहोगे? आप तो शायद एक बार भी न सहेंगे क्योंकि आप हम से बड़े हैं, आप हमारे प्राचार्य हैं और मैं आपका छात्र. शायद सुनते ही बेंत उठा लें."

क्षशाँक ने तर्क किया था या वितर्क या कुतर्क उसे आज तक नहीं पता मगर उसको सुन कर प्राचार्य महोदय धम्म से अपनी कुर्सी में धमक गए थे और अपना सिर पकड़ लिया था.

क्षशाँक को मन ही मन बहुत खुशी हुई थी. इज़हार करना चाहते थे मगर बेंत का डर अब भी मन में समाया हुआ था.

उधर माँ का खिलाया पिलाया संस्कार भी राह रोके हुए था, "तर्क करो. उस से ज्ञान की वृद्धि होती है मगर कुतर्क और वितर्क से बचना चाहिए क्योंकि उससे विवेक का लोप हो जाता है."

प्राचार्य काफी देर तक अपना माथा पकड़े बैठे रहे थे. क्षशाँक की आंतरिक खुशी तिरोहित हो चुकी थी और अब उसका स्थान बेंत के खौफ ने ले लिया था.

उसे लग रहा था जैसे प्राचार्य महोदय के अंदर ही अंदर ज्वालामुखी कुलबुला हो रहा हो और वो न जाने फट कर कब लावा उगलने लगे?

"तुम्हारी नज़र में दोषी कौन है?" प्राचार्य ने पूछा.

प्रश्न सुन कर क्षशाँक की जान में जान आई.

उसने कहा, “सर, आप बड़े हैं. हमारे शिक्षक हैं. दोषी कौन और निर्दोष कौन. ये फैसला तो आपको ही करना है. हमारा काम था आपके सम्मुख सच्चाई रख देना. वो हम रख चुके. अब आप ही देखें कि दोषी कौन?”

“तुम्हारी हिम्मत देख कर हम भ्रम में पड़ गए हैं. आपकी राय जानना चाहते हैं.”

बेंत का खौफ क्षशाँक पर एक बार फिर से तारी हो गया था. सोचा, “प्राचार्य कहीं हमें किसी जाल में तो नहीं फंसा रहे हैं?”

सोच ही रहे थे कि उसके मुख से शब्द फूट पड़े, “सर, दोनों?”

“दोनों कैसे?”

“सर चोटिल को नाम न बिगाड़ना चाहिए था और मुक्का मारने वाले को वैसी ही सहनशक्ति रखनी चाहिए थी जैसी वो महीनों से रखता आ रहा था.”

“क्या कहा? महीनों से? फिर भालचन्द्र ने शिकायत क्यों नहीं की?”

“सर, गरीब में इतना साहस कहाँ कि वो बलशाली के खिलाफ शिकायत करे? अगर चोटिल शिकायत न करता तो भालचन्द्र तो आज भी शिकायत नहीं करता. मुझे तो अचरज इस बात पर है कि शांत और सुशील भालचन्द्र में मुक्का मारने का साहस आ कहाँ से गया था?”

प्राचार्य ने अपने चश्मे के मोटे मोटे शीशों में से चोटिल की ओर घूरा. वे घूरते ही रहे, घूरते ही रहे.

क्षशाँक ने देखा कि चोटिल की निक्कर से बूँदें टपक रही हैं और वो खुद आँखें नीची किये खड़ा है.

प्राचार्य मुस्कराए और बोले, “दुष्ट कहीं के, फिर ऐसी गल्ती न करना. भागो, जाओ अपनी कक्षा में.”

क्षशाँक समझ नहीं पाए कि वे चोटिल को चेतावनी दे रहे थे, मुक्का मारने वाले को या उसे? भलाई उन तीनों को इसी में लगी कि वे चुपचाप बाहर आ गए.

बाहर आकर क्षशाँक हँसते हुए बोले, “यारो, आप दोनों को पिटाई से बचा लाये हैं. धन्यवाद भी न कहोगे?”

वे दोनों मुस्कराए और उसके गले लग कर हँस पड़े. क्षशाँक ने सुकून की साँस ली. माँ के खिलाये पिलाये संस्कार काम आ रहे थे.

मगर बासठ वर्षीय क्षशाँक आज एक बार फिर से उसी चक्रव्यूह में फँसे थे, “उस दिन प्राचार्य से हमने तर्क किया था, वितर्क किया था या कुतर्क किया था?”

माँ की आवाज़ बासठ वर्षीय क्षशाँक के कान में गूंज उठी थी, “तर्क सकारात्मक होने के कारण चर्चा को सहमति की ओर ले जाता है.”

“जी अम्मा जी. मगर आपने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया.”

“तुम उतने ही उतावले हो जितने बचपन और युवावास्था में हुआ करते थे. तुम बिल्कुल नहीं बदले,” माँ ने मुस्कराते हुए कहा था.

“आपने ही तो कहा था कि प्रश्न करने से कभी न हिचकना चाहिए,” हमने माँ द्वारा खिलाये पिलाये संस्कारों की याद दिलाते हुए कहा.

“तो सुनो वत्स. क्योंकि तुम्हारी दलीलों से सब सहमत हो गए थे. इस लिए वो तर्क थे. वे वितर्क या कुतर्क होते तो तुम तीनों की पीठ पर बेंत के निशान होते,” ठहाका लगाते हुए उन्होंने कहा.

बासठ वर्षीय क्षशाँक को अपनी पीठ पर बेंत पड़ने का तेज दर्द महसूस हुआ. अपनी मूर्खता पर वे भी मुस्कराए बिना नहीं रह सके थे.

तभी उन्होंने अचकचा कर इधर उधर देखा. उनको कोई नज़र नहीं आया. उन्होंने सोचा, “ये आवाज़ माँ की थी या मेरा भ्रम?”

जो भी हो, माँ की आवाज़ सुन कर बासठ वर्षीय क्षशाँक चकराए थे, फिर धीमे धीमे मुस्कराए थे और कह उठे थे, “माँ माँ होती है. स्वर्गवासी होकर भी संतान को राह दिखाती रहती है.”

4

अतीत से निकल कर बासठ वर्षीय क्षशाँक वर्तमान में एक बार फिर लौट आये थे और बोले, “आह! स्वर्गवासी सुगंधा! आप कहाँ होंगी? ईश्वर से विनती है कि आप जहाँ भी हों, खुश हों और सुख में हों.”

यह सोच कर बासठ वर्षीय क्षशाँक को मानसिक और आत्मिक सुकून मिला था और वे अपने आप पर ही मुस्करा उठे थे.

क्षशाँक पन्द्रह वर्ष के हुए. कक्षा नौ में वे सभी के चहेते बन चुके थे. कारण था उसका गोरा चिट्टा चेहरा, कजरारी आँखें, घुंघराली लटें और सबसे ऊपर उसका शालीन व्यवहार.

अब तक वे तर्क, वितर्क, कुतर्क के अर्थ और अंतर ठीक से समझ चुके थे. अत: अगर उनको कहीं कुछ कहना सुनना पड़ता तो वे सिर्फ तर्क करते थे और वो भी एक सीमा में रह कर.

विवादास्पद वितर्कों और कुतर्कों से वे सदा बचते रहते थे. इसी कारण अधिकतर छात्र उससे चिढ़ते थे क्योंकि वो अपने शालीन व्यवहार के कारण लड़कियों का सबसे अधिक चहेता बन चुका था.

एक लड़का था रामू. सड़क छाप सा. पक्का गुंडा. शरीर बलिष्ठ. अकड़ कर चलना. सब पर रौब मारना. जो उसके दबाव में न आये, उसको और जोर से धमकाना. फिर भी न माने तो उठा कर पटक देना या अपना पैर अड़ा कर गिरा देना.

“तूँ लड़कियों के पास मत बैठा कर,” उसने एक दिन क्षशाँक को चेतावनी दे डाली.

“हम उनके पास नहीं बैठते. वे हमारे पास बैठती हैं,” क्षशाँक ने तर्क देते हुए कहा.

“मुझे सीख न दे. जैसे ही कोई लड़की तेरे पास बैठे, तूँ उसके पास से उठ जाया कर. किसी दूसरे बेंच पर बैठ जाया कर,” उसने सुझाव दिया.

क्षशाँक घबराए मगर कुछ बोले नहीं.

“जवाब नहीं दिया,” वो गुंडा गुर्राया.

“क्या जवाब दूँ? बताया न कि वे हमारे पास बैठती हैं न कि हम.”

“हमने भी तो बोला न कि जैसे ही कोई लड़की तेरे पास आ कर बैठे, तूँ उठ जाया कर. बात समझ में नहीं आई क्या?” उसने अपनी राय, चेतावनी या धमकी पुन: दे डाली.

“हम ऐसा नहीं कर सकते,” क्षशाँक बुदबुदाए.

“क्या बोला? जरा जोर से बोलो तो?”

“कुछ नहीं.”

“समझ गए न?”

क्षशाँक चुप रह गए थे क्योंकि उसकी गुंडई आँखों के सामने तैर गई थी. उस समय उसे ऐसा लगा जैसे पिटाई के कारण उसका पूरा शरीर दूख रहा हो.

दरअसल उन दिनों बहुत कम लड़कियों को शिक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य मिला करता था. इसी कारण क्षशाँक की कक्षा में सिर्फ तीन लड़कियाँ थी. जो पहले आती वो उसके पास बैठ जाती, शेष दो को एक साथ बैठना पड़ता.

तीनों की कोशिश ये रहती कि सबसे पहले वो पहुँचे. मगर बेचारी लड़कियों को घर में अनेक काम करने पड़ते थे. ढ़ोरों का गोबर समेटना. पानी भरना. साफ़ सफाई करना और बुहारना. ऊपर से सभी मर्दों के हुक्म बजाना.

वे लड़कों की तरह आज़ाद थोड़े ही होती हैं. जिसको भी देर हो जाती वह मन मसोस कर रह जाती. इस पर वह लड़की मुस्करा देती जो क्षशाँक के साथ बैठी होती.

रामू पर तो गाज सी गिर जाती और क्षशाँक की ओर ऐसे घूरता जैसे सौत अपनी सौत को घूरा करती है.

उस दिन तो हद ही हो गई जब माला जो रामू को सबसे अधिक पसंद थी, क्षशाँक के पास आ बैठी थी.

उसने क्षशाँक की गर्दन पकड़ी और बोला, “अबे ओ! तेरी समझ में नहीं आता, मैं तुझे क्या बोला था?”

क्षशाँक की घिघ्घी बंध गई, पैर काँपने लगे. जबान लड़खड़ा गई. कुछ बोलते नहीं बना. उसे लगा जैसे उसने कुछ कहा या किया तो रामू उसकी गर्दन मरोड़ देगा.

अचानक उसे अपने पुराने साथी भालचन्द्र की याद आ गई जिसने उसमें जोश भर दिया.

क्षशाँक ने आव देखा न ताव, अपना घुटना उसकी जांघ में दे मारा. जैसे ही उसे घुटना लगा, वो कराहा और धम्म से फर्श पर गिर पड़ा था.

क्षशाँक को मनचाहा अवसर मिल गया था. उसने उस अवसर का भरपूर फायदा उठाया. अपनी बेंच से वो उठा और कक्षा से बाहर भागा.

“सर, मुझे बचाओ, सर, मुझे बचाओ,” चिल्लाते हुए क्षशाँक प्राचार्य के कार्यालय की ओर भागा.

चीख सुन कर छात्र अपनी कक्षाओं से और शिक्षक अपने कक्ष से बाहर आ गए थे. सभी ये जानने को उत्सुक थे कि आखिर माजरा क्या है?

एक शिक्षक ने क्षशाँक को पकड़ कर पूछा, “क्या बात है? क्यों चिल्ला रहा है?”

“सर, रामू,” इतना कह कर क्षशाँक बेहोश होकर गिर पडा. शिक्षक उसे उठा कर औषध कक्ष की ओर भागा.

चिकित्सक ने उसे देखा भाला और बोली, “सर, फ़िक्र की कोई बात नहीं. घबराहट के कारण बेहोश हो गया है. इसे आराम की ज़रूरत है. आप जाएँ. मैं देख रही हूँ.”

शिक्षक चले गए और जाकर प्राचार्य को बताया.

जैसे ही शिक्षक बाहर गए, चिकित्सक ने क्षशाँक के कान पकड़े और हँसते हुए बोली, “शिक्षक चले गए हैं. आँख खोलते हो या कान उमेठू?”

“सौरी मैडम,” मुस्कराते हुए क्षशाँक ने कहा.

“बात क्या है?”

क्षशाँक ने सारी बात बताई. रामू की गुंडई के बारे में बताया और पूछा, “मैडम, कोई लड़की मेरे साथ बैठती है तो मेरा क्या कसूर?”

क्षशाँक बता ही रहा था कि प्राचार्य ने औषध कक्ष में प्रवेश किया और पूछा, “अब लड़के की क्या हालत है?”

चिकित्सक ने कहा, “कोई फ़िक्र की बात नहीं सर. दवा दे दी है. रामू नाम का कोई लड़का है. वो इसको धमकी देता रहता है. उसी के डर से बेहोश हो गया था.”

चिकित्सक की बात सुन कर प्राचार्य गुस्से से लाल पीले हो गए थे और रामू को तब तक कालिज से बाहर निकाल दिया था जब तक वो अपने पिताजी को बुला कर न लाये और सार्वजनिक माफी न मांगे.

मजबूर होकर तीन दिन बाद रामू अपने नकली पिताजी को लेकर आया था और सबके सामने क्षशाँक और लड़कियों से माफी मांगी थी.

क्षशाँक रामू के पिताजी को जानता था. वो जानता था कि नकली बाप बना कर लाया है. फिर भी वो चुप रह गया था. पता नहीं भय के कारण या किसी कूटनीति के तहत.

उसके बाद रामू में काफी सुधार आ गया था. मगर क्षशाँक को टेढ़ी नज़रों से देखना फिर भी बंद नहीं किया था.

5

क्षशाँक भी रामू के उस अपरोक्ष क्रोध की अनदेखी करता रहता था. उसे इसी में खुशी थी कि रामू ने अब उस तरह धमकी देना बंद कर दिया था जैसे वो पहले दिया करता था.

रामू प्रकरण याद आने पर बासठ वर्षीय क्षशाँक बिस्तर पर लेटे लेटे मुस्कराए बिना न रह सके. उस वक्त की अपनी चालाकी भरी मासूमियत पर वे ठहाका लगा कर हँस पड़े थे.

मन ही मन बोले, "रामू का क्या कसूर था? वो उम्र ही वैसी थी. बस उसकी बेवकूफी ये थी कि वो हेकड़ी दिखाता था. मोहब्बत में हेकड़ी का क्या काम?"

उसी समय उनको सलोनी सी चिकित्सक की भी याद हो आई थी जो उसको उसकी मासूमियत के कारण बहुत प्रेम किया करती थी.

"जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन में कितने ही किरदार आते हैं जो हम पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं," बासठ वर्षीय क्षशाँक ने गर्मजोशी के साथ साँस छोड़ा. उसने देखा कि ममतामई चिकित्सक की याद में उसकी आँख नम हो आई है.

उन्होंने अपनी बूढ़ी आँखों को भीगे रुमाल से पौंछा और बुदबुदाए, "काश, उस चिकित्सक माँ से मैं एक बार फिर मिल पाता?"

"अरे नादान, जब हम स्वर्गवासी हो गई है तो तेरी चिकित्सक माँ भी वहीं होंगी जहाँ हम हैं," आवाज़ उसकी माँ की थी जो उसके कानों में प्रवेश कर गूंज रही थी.

क्षशाँक ने अचकचा कर इधर उधर देखा था मगर दिखाई कुछ नहीं दिया.

जो भी हो, माँ की आवाज़ सुन कर बासठ वर्षीय क्षशाँक मुस्कराए थे और कह उठे थे, "माँ माँ होती है. स्वर्गवासी होकर भी संतान को राह दिखाती रहती है."

अब सोलह वर्षीय क्षशाँक डिग्री कालिज की यादों में खोये हुए थे. सतरवां बसंत देख रहे थे. बी.ए प्रथम वर्ष के छात्र थे. अपने सुलेख के कारण हिंदी प्राध्यापक के चहेते बन चुके थे.

उसकी जिंदगी में पहली बार पतझड़ आया था जब उसके पिताजी गंभीर रूप से बीमार हो गये थे. घर से चिकित्सालय और चिकित्सालय से घर, फिर नहा धो कर कालिज, कालिज से सीधा चिकित्सालय; उसकी जिंदगी कोल्हू के बैल सी हो गई थी.

पढ़ाई चौपट.

माँ ने महसूसा था और खिलाया पिलाया संस्कार याद दिलाया था, "क्षशाँक, घबराओ नहीं वत्स, ये पतझड़ भी गुजर जायेगा. पतझड़ आया है तो बसंत भी आएगा."

"जी अम्मा जी."

पिताजी ठीक हुए. पहली बार नास्तिक क्षशाँक ने उस ईश्वर के सम्मुख शीश नवाया था जिसको किसी ने नहीं देखा था और देखा था तो बिरलों ने.

गाड़ी पुन: पटरी पर आ गई थी. पढ़ाई भी ठीक से होने लगी थी. उसी समय उसे अपने तन, मन और मस्तिष्क में कुछ बदलाव महसूस होने लगे थे. पहले लड़कियाँ उसे पसंद करती थी, अब उसे लड़कियाँ अच्छी लगने लगी थी.

उसे लगा जैसे उसमें एक और रामू जन्म ले रहा हो. फर्क सिर्फ इतना था कि वो रामू

उजड्ड था, मोहब्बत करता तो था मगर मोहब्बत का अर्थ नहीं समझता था.

अपने अंदर हुए उन बदलावों की याद आते ही बासठ वर्षीय क्षशाँक ने अपने बूढ़े शरीर में भी बिजली जैसी धारा बहती महसूस हुई. उनको लगने लगा था जैसे वो फिर से जवान हो गये हैं. थोड़ी देर बाद उन्होंने आह भरी थी. बुदबुदाते हुए बोले उठे थे, "काश! हमारा प्रेम भी परवान चढ़ पाता."

उसकी कक्षा में क्षेमा नाम की एक लड़की थी. पढ़ाई में क्षशाँक से कम न थी. सुंदर चेहरा मोहरा और सुतवा बदन. दोनों एक दूसरे को चाहने लगे थे. मोहब्बत की पींगें बढ़ाने लगे थे. वे लेक्चर पर ध्यान कम देते, एक दूसरे की ओर तकते रहते थे. दोनों के विषय भी समान थे.

एक दिन अंग्रेजी के प्रोफेसर ने क्षशाँक को क्षेमा की ओर तकते हुए देख लिया था और उन्होंने डपटते हुए कहा था, "क्षशाँक, आपका ध्यान किधर है?"

"सर, क्षेमा की ओर."

इतना सुनना था कि छात्र तो ठहाका लगा कर हँस पड़े थे और क्षेमा हो गई थी पानी पानी. उसे क्षेमा की नाराजगी भरी तिरछी नज़र झेलनी पड़ी थी.

प्रोफ़ेसर भी मुस्कराए बिना न रह सके थे. प्रोफेसर क्यों मुस्कराए थे, आज तक क्षशाँक न जान सके.

फिर भी उन दोनों को प्रोफेसर साहब की सामयिक नसीहत और प्रशंसात्मक टिप्पणी सुननी पड़ी थी. उन्होंने कहा था, "क्षशाँक, आपकी सच्चाई से हम खुश हैं."

"शुक्रिया सर."

"मगर ये पढ़ाई करने और जीवन बनाने का समय है. माना इस उम्र ऐसा कुछ होता है. यह स्वभाविक और प्राकृतिक है. मगर याद रखो कि इसमें उलझ कर रह गए तो उस खजाने से वंचित रह जाओगे जो तुम्हारा इंतज़ार कर रहा है."

उन दोनों ने प्रोफ़ेसर से माफ़ी मांगी थी और वायदा किया कि अब पढाई पर ध्यान देंगे. शुक्रिया कह कर दोनों बाहर आये तो क्षशाँक को क्षेमा की मीठी झिड़की एक बार फिर सुननी पड़ी थी.

"कितने बुद्धू हो तुम?"

"वो क्यों और कैसे?"

"सबके सामने मुझे शर्मिंदा कर दिया."

"हम प्रेम करते हैं क्षेमा. प्रेम में शर्मिंदगी क्यों?"

"वो तो ठीक है. मगर कुछ मर्यादाएं भी तो होती हैं न? क्या अपनी प्रेमिका को सरेआम बेपर्दा करना मर्यादा की अवहेलना नहीं थी?"

क्षशाँक को बात समझ आई और उसने क्षेमा से क्षमा मांगते हुए कहा था, "उपयुक्त और अनुपयुक्त में अंतर करना कितना कठिन काम है?"

“क्या मतलब? मैं समझी नहीं.”

“प्रोफ़ेसर सर ने हमारी तारीफ की. आप हमें डपट रही हो. उधर माँ ने कहा है झूठ कभी नहीं बोलनी चाहिए. अब आप ही बताइए कि किसकी राय उपयुक्त है और किसकी अनुपयुक्त?.”

“ओह! सो तो है. फिर आज माँ जी के सामने जाकर भी सच बोलना और जो उनकी प्रतिक्रिया हो, मुझे कल बताना.”

“वे पूछेंगी तभी तो सच बोलने की नौबत आयेगी.”

“ठीक कहा, मगर आज की इस घटना को तो खुद बता सकते हो न.”

“हाँ, इसमें कोई हर्ज नहीं.”

अर्थशास्त्र की कक्षा का समय हो गया था. दोनों कक्षा में जा कर बैठ गए. क्षेमा क्या सोच रही थी, उसे ज्ञात नहीं मगर वो उसी उलझन में फँसा था कि उचित और अनुचित में अंतर करना कितना कठिन है? उसकी समझ से परे था ये तय करना कि कब सच बोलना चाहिए और कब झूठ?

घर गया और माँ को पूरी बात बताई. माँ हँसी और बोली, “ओह! आज ज्ञात हुआ कि मेरा बेटा जवान हो गया है.”

“क्षेमा का नाम लेकर मैंने ठीक किया था या गलत?”

“गलत.”

“आपने तो संस्कार खिलाया पिलाया था कि झूठ कभी नहीं बोलनी चाहिए. और अब झूठ बोलने की कह रही हो.”

“पुरुषों को स्त्रियों की लाज रखनी चाहिये.”

“फिर?”

“आप उसका नाम न लेकर माफी भी मांग सकते थे और कह सकते थे कि अब लेक्चर में पूरा ध्यान दूँगा. इससे आप क्षेमा को शर्मिंदा होने से बचा सकते थे और झूठ से भी बच सकते थे.”

“ओह!”

“कल जाकर क्षेमा से माफ़ी मांग लेना.”

“जी, माफी तो मांग चुका हूँ.”

माँ हँसी और बोली, “अच्छे खाविंद बनोगे.”

क्षशाँक माँ के गले से लग कर झूल गए थे और कहा था “आप कितनी अच्छी माँ हो?”

“तुम दोनों एक दूसरे को बहुत चाहते हो न?”

शर्माते हुए क्षशाँक ने आँखें नीची कर ली थी. वो बहुत कुछ कहना और बोलना चाहता था मगर बोल कुछ नहीं पाया था और न ही कुछ बता पाया था.

“आपके पिताजी से आज ही बात करूँगी. वे मेरा कहना नहीं टालेंगे.”

“पिताजी, अच्छे खाविंद हैं.”

“चल हट. बदमाश कहीं का.”

खिलखिलाता हुआ क्षशाँक बाहर भाग गया था.

बासठ वर्षीय क्षशाँक ने करवट बदली. एक आह भरी और मन ही मन कहा, “माँ माँ होती है.”

मगर उनका प्रेम परवान चढ़ने से पूर्व ही परम्पराओं की बलि चढ़ गया था. क्षेमा राजपूत थी और क्षशाँक ब्राह्मण. उसका मुच्छड़ बाप ऐसा अड़ा कि न अपनी बेटी की सुनी न क्षशाँक और क्षशाँक के परिवार की.

बासठ वर्षीय क्षशाँक ने एक बार फिर आह भरी मगर अब की बार दो बार. एक सुगंधा के लिए और दूसरी क्षेमा हेतु.

आह भरते हुए उन्होंने एक बार फिर करवट बदली थी. उनको माँ की याद आ गई थी क्योंकि टूटे हुए उसके दिल पर मरहम उन्होंने ही तो लगाई थी.

माँ ने यह कह कर क्षशाँक को अपने वक्ष से लगा लिया था, “वत्स, प्रेम बलि चाहता है. तुम दोनों ने बलि दी है. तुम्हारा प्रेम अधूरा नहीं बल्कि परवान चढ़ा है.”

बासठ वर्षीय क्षशाँक ने माँ के वक्ष की उष्णता को महसूस किया था और मन ही मन बोले थे कि माँ तो आखिर माँ ही होती है.

“कहाँ होंगी स्वर्गीय सुगंधा और कहाँ होगी क्षेमा? हे ईश्वर! वे जहाँ भी हों, अच्छे से हों,” बासठ वर्षीय क्षशाँक अपने खयालों में खो गए थे.

ईश्वर ने उनकी सुनी या नहीं, ज्ञात नहीं मगर शुभेच्छा प्रकट करने पर क्षशाँक को काफी सुकून मिला था.

उसी समय उनको अपनी माँ की वो नसीहत याद आ गई थी जिसने उनके चाल. चरित्र और सोच का निर्माण किया था.

वे अक्सर कहा करती थी, “क्षशाँक, याद रखना वत्स. दूसरों के शुभ की चाहत रखना ही ऋषित्व है. अगर जिंदगी में शांति चाहते हो तो हर किसी का शुभ सोचो. शुभ न सोच सको तो अशुभ तो कभी नहीं सोचना.”

“ठीक है अम्मा जी. आप फ़िक्र न करें. ऐसा ही होगा,” आज्ञाकारी क्षशाँक तुरंत कह दिया करते थे.

इस पर माँ मुस्करा कर अपने पुत्र क्षशाँक को अपने वक्ष से लगा लिया करती थी जिस पर पुत्र भी गदगद हो जाया करता था.

“माँ, माँ होती है,” करवट बदलते हुए बासठ वर्षीय क्षशाँक कह उठे थे.

अंग्रेजी में स्नातकोत्तर करने हेतु क्षशाँक ने विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया था. निवास से विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय से निवास रोज आना जाना पड़ता. विश्वविद्यालय के करीब रहना उसके लिए संभव नहीं था. कारण आर्थिक तंगी और बुज़ुर्ग माता पिता की सेवा. वे उनको अकेला किसके भरोसे छोड़ते?

एक दिन जब वे विश्वविद्यालय जा रहे थे, बुरका पहने एक महिला उनके पास आ कर बैठ गई थी. थोड़ी देर वे चुपचाप बैठी रहीं. कुछ समय बाद वे बोली, "आप क्षशाँक जी हो न?"

बुरका ओढ़े स्त्री के मुख से अपना नाम सुन कर क्षशाँक चोंके. उनको अपने कानों पर संदेह हुआ. हो सकता है उनको भ्रम हुआ हो. ये सोच कर वे चुप रह गए.

थोड़ी देर बाद महिला फिर बोली. "आप ने ज़वाब नहीं दिया. आप क्षशाँक जी है ना?"

क्षशाँक को अब कोई संदेह नहीं रहा था. दूसरी बार किये गए प्रश्न का उत्तर न देना उनको अनुचित लगा था.

वे बोले, "हाँ. मगर आप हमें कैसे जानती हैं?"

"मैं तो आपको बचपन से जानती हूँ. आप भूल गए होगे, मैं कैसे भूल सकती हूँ?"

"आप अपना बुरका उतारो तो पहचानूँ."

"शारदा माताजी और पिताजी कैसे हैं?"

"वे ठीक हैं. बहुत बुज़ुर्ग हो गए हैं. सेहत फिर भी अच्छी है. आप हम सब को कैसे जानती हो?" क्षशाँक ने हैरान होते हुए फिर से पूछा.

प्रश्न सुन कर उसने अपने मुँह पर से हिजाब हटाया और बोली, "लो! पहचानो. ये आपकी परीक्षा है."

क्षशाँक ने उसके चेहरे को गौर से देखा. चेहरा जाना पहचाना लगा मगर वे फिर भी पहचान न सके.

"माफ करना. हम आपको पहचान नहीं पाए. हम पहले कहीं मिले हैं क्या?"

"अरे मिले ही नहीं, साथ साथ खेले कूदे हैं. अब भी नहीं समझे क्या?"

क्षशाँक का सिर घूम गया. वे कुछ न समझ पाए. मन ही मन वे चिंतन कर रहे थे कि कौन है ये जो न केवल हमारा बल्कि माताजी का भी नाम जानती है?

"माफ करना मैडम. हम आप को पहचान नहीं सके. आप ही अपना परिचय दें तो बेहतर हो," क्षशाँक ने संकोच करते हुए कहा.

"क्या मैडम मैडम लगा रखा है? याद करो आपने ये किससे और किसके बारे में कहा था कि हम न करेंगे इससे शादी. ये तो काली कलूटी है. चेहरे पर दाग हैं."

क्षशाँक को करारा झटका लगा. मस्तिष्क की शिराएँ झनझना उठी. पाँच वर्षीय क्षशाँक की याद ताज़ा हो आई.

"ओह! सुगंधा ?"

“ज़हे नसीब, आप ने पहचाना तो. इसका मतलब, थोड़ी सी ही सही, हमारी कुछ याद तो अब भी शेष है,” सुगंधा ने कहा.

“पहले प्यार को कौन भूल सकता है?”

“आप तो भूल ही गए थे.”

“न, न, भूले नहीं थे. एक तो आपने हिजाब पहना हुआ था. दूसरे, आपका चेहरा मोहरा काफी बदल गया है,” क्षशाँक ने कैफियत देते हुए कहा.

“बच्चे जनते जनते औरतों का बार बार मरण और जन्म होता रहता है,” उसने कहा था.

“ओह!”

“मगर आप बिल्कुल नहीं बदले. वही छरहरा शरीर. घुंघराले बाल. हाँ, मूँछें ज़रूर आ गई हैं. फिर भी पहचानने में कोई भूल नहीं हुई?”

“कितने बच्चे हैं?”

“एक.”

“बस!”

“अरे, यही वो खडूस कहा करता था.”

खडूस शब्द सुन कर क्षशाँक चोंके और बोले, “खडूस कौन?”

“मेरा खाविंद?”

“क्या वे अब नहीं रहे?”

“वो हमें पता नहीं. वो पीछे पड़ा रहता था और हम एक बच्चे से अधिक नहीं चाहते थे. रोज रोज का झगड़ा. हमने उसे छोड़ दिया.”

“ओह! महजबीं दादी कैसी हैं?”

“बटवारे के बाद हुए दंगों में मेरे अपने सभी मारे गए. मुल्क बँट गए. सियासतदानों को सियासत मिली और आमजन को मिली मौत और बरबादी,” कह कर वो चुप हो गई.

दर्दनाक बात सुन कर क्षशाँक स्तब्ध. उसने देखा कि सुगंधा की आँखों से आँसू टप टप गिर रहे हैं.

थोड़ी देर बाद क्षशाँक ने देखा कि वो अपनी आँखें पोंछ रही है. क्षशाँक को बहुत दुःख हुआ. मगर वे कर भी क्या सकते थे? विभाजन की विभीषिका उन्होंने अपनी आँखों से देखी थी.

फिर भी हिम्मत जुटाते हुए उन्होंने कहा, “फिर?”

“फिर चाचा ने मुझे उस खडूस के हवाले कर दिया और खुद पाकिस्तान चले गए. अब अपने वतन में मेरा यहाँ कोई नहीं. छोड़ो वो सब. आप बताओ. आप कहाँ जा रहे हो?”

“हम एम.ए कर रहे हैं. विश्वविद्यालय जा रहे हैं?”

“अरे, विश्वविद्यालय के आस पास क्यों नहीं रहते? इतने लम्बे सफर के बाद पढ़ते लिखते क्या होगे?”

“बताया न कि माताजी पिताजी काफी वृद्ध हैं. उनको किसके भरोसे छोड़ूँ? आर्थिक हालात भी ठीक नहीं. इधर रहने से खर्च बढ़ेगा.”

“ओह! मेरा कहना मानोगे?”

“बोलो.”

“आप मेरे पास रहें. ईश्वर का शुक्र है. आमदनी अच्छी है. आपकी देखभाल कर मुझे अच्छा लगेगा,” वे बोलीं.

“आपका बेटा है. वो क्या सोचेगा? दूसरी बात, माताजी पिताजी को किसके भरोसे छोड़ू?”

“बेटा तीन साल का है. बच्चा है. आपसे जल्दी ही घुल मिल जाएगा. कोई दिक्कत नहीं.”

“सुगंधा, आप कितनी अच्छी हैं. आपकी अच्छाई का मान रखना इस दोस्त का फर्ज है. फिर भी आने जाने की हमें आदत हो गई है. आपका बहुत बहुत शुक्रिया.”

“जैसी आपकी इच्छा. मेरा घर विश्वविद्यालय के पास ही है. आज मैं आपको दिखा दूँगी. जब मन करे, मिल जाया करें. मेरा कोई नहीं. किसी और को अपना बनाया नहीं. आप जानते ही होंगे कि अकेली औरत का समाज में रहना कितना दुष्कर होता है? आपसे मुझे कोई खतरा नहीं,” खुशबू ने कहा था.

“यही तो हम कहना चाहते थे. आपके पास हम अधिक आये गए तो आपका जीना दूभर हो जायेगा.”

“ओह! आप भी कितने अच्छे और दूरंदेशी हैं? मगर आप संकोच न करना. मेरा बेटा आपसे मिल कर बहुत खुश होगा. वो कई बार कह चुका है कि सबके दादा और चाचा हैं. उसका कोई नहीं.”

“ओह!” कह कर क्षशाँक ने गहरी लंबी साँस छोड़ी.

सुगंधा चोंकी और बोली, “आप ठीक हैं ना?”

“हम ठीक हैं. बच्चे की पीड़ा सुन जान कर मन दुखी हो गया था. दादा चाचा की संगत में इसी उम्र में तो बच्चों का मनोवैज्ञानिक विकास हुआ करता है.”

“वही तो. आप पर भरोसा कर सकती हूँ. किसी और पर नहीं. सभी उलटी शिक्षा दिया करते हैं. इसी कारण मुझे मुस्लिम समाज से भी दूरी बनानी पड़ी. मैं उस बस्ती में रहती हूँ जिसमें एक भी मुस्लिम नहीं.”

सुन कर क्षशाँक चुप रह गए. कहें भी तो क्या कहें?

“कुछ बोले नहीं,” सुगंधा ने टोका.

“आप ठीक कह रही हैं. मगर निंदा करने में सनातनी भी मुस्लिम्स से कम नहीं.”

“थोड़ा सा फर्क तो है ही,” उसने कहा था.

उसने जो कहा था, क्षशाँक को मानना पड़ा था. उसका बस स्टाप आ गया था. वो बोली, “आइये, घर दिखा दूँगी. बेटे से भी मिलना हो जायेगा.”

“इस समय वो किसके पास है?”

“एक आया रखी हुई है. वो विधवा है. उसका भी कोई नहीं. ईश्वर ऐसे ज़रूरतमंदों को मिला ही दिया करता है. देखो न, आपको भी आज उसने कैसे मिला दिया?”

“ईश्वर पर इतना भरोसा?”

“भरोसा करने से मन को सुकून मिलता है. ईश्वर है या नहीं, इस पचड़े में पड़ें बेवकूफ लोग,” पहली बार खिलखिलाते हुए उसने कहा था.

“आपकी हँसी वैसी की वैसी है. अगर आप मिलते ही हँस पड़ती तो आपको हम तुरंत पहचान लेते,” हँसी में शरीक होते हुए क्षशाँक ने कहा.

“सच?”

“जी, एकदम सच.”

“क्या जी जी लगा रखी है. वैसे ही सुगन्धा कहो न जैसे कहा करते थे.”

उसका घर आ गया था. आया ने प्रणाम किया और बच्चे से बोली, “लो, चाचा आ गए. इनको प्रणाम करो.”

बच्चे ने क्षशाँक के पैर छूए. क्षशाँक ने गोद में उठा कर उसे चूम लिया.

“नाम क्या है बेटा?”

“मोहन.”

मोहन नाम सुन कर क्षशाँक चोंके. सुगंधा ने ताड़ लिया. वो बोली, “कट्टरता से दूर रखना चाहती थी. इसलिए नाम मोहन रखा.”

“इसके अब्?”

सुनते ही सुगंधा ने क्षशाँक के होठों पर ऊँगली रख दी और आगे कुछ न कहने का संकेत कर दिया. उसके संकेत से क्षशाँक सहम गये थे.

संकेत समझ कर वे बोले, “सुगंधा , आप कितनी ज़हीन हैं. कहते हैं नाम में क्या रखा है? मगर आपने साबित कर दिया कि नाम में भी बहुत कुछ रखा है.”

“क्या मतलब?”

“बच्चे ने पैर छुए. नाम का ही तो असर है.”

आया कॉफी ले आई थी. कॉफी पी कर क्षशाँक बोले, “अच्छा, फिर मिलते हैं.”

“अब कब”

“जब भी आपका ईश्वर चाहेगा,” कह कर क्षशाँक मुस्कराए और विश्वविद्यालय की ओर

बढ़ गए थे.

7

बासठ वर्षीय क्षशाँक सोचने को मजबूर हो गए थे कि सुगंधा और वे हमउम्र थे. छोटी उम्र में ही वो कितना लम्बा सफर तय कर चुकी थी. विभाजन के समय भड़के दंगों में उसका परिवार खत्म हो गया था. विवाह हुआ था. एक बेटा हुआ. फिर पति को छोड़ना पड़ा था क्योंकि वो उसके स्वभाव के अनुकूल न था.

उसके बाद स्वतंत्र जीवन जीने हेतु अलग रहने लगी थी. अपना काम शुरू किया और वह इस लायक हो गई थी कि उसे आश्रय देने की तजवीज़ पेश कर सकी थी.

“स्त्री कितने दृढ़ जीवट वाली होती है. बच्चे पैदा करना कोई बच्चों का खेल नहीं. वो खुद कहती थी कि हर बच्चे के जन्म पर स्त्री मर मर कर पुन: जन्म लेती है,” सत्रह वर्षीय क्षशाँक ने मन ही मन कहा था.

क्षशाँक अपनी सोच में इतने डूबे थे कि उनको पता तक नहीं चला कि कब वे विश्वविद्यालय पहुँच गए. उनको होश तब आया जब शबनम ने उसे टोका, “क्षशाँक! उधर कहाँ जा रहे हो? अपनी अंग्रेज़ी संकाय तो इधर है.”

“ओह! माफ करना, शबनम. हम अपने ही खयालों में कहीं खोये हुए थे.”

“चलो माफ किया. मगर ये तो बताओ कि खयालों में खोना कब से और किसके लिए शुरू किया है? हमें भी तो पता चले कि वो कौन है जिसने सीधे सादे क्षशाँक का दिल जीत कर हम से छीन लिया?”

“खयाल और भी तो हो सकता है.”

“तो बताओ समस्या क्या है? चुटकियाँ बजाते बजाते हम हल कर दिया करते हैं?” शबनम ने चहकते हुए कहा.

“समस्या कोई नहीं. बस यूँ ही.”

“फिर तो कोई है? बता दो वरना हमें जासूस छोड़ने पड़ेंगे.”

“अरे, बचपन की एक साथी पन्द्रह सोलह वर्ष बाद मिल गई थी. उसी के बारे में सोचते सोचते आगे निकल गए थे.”

“आपकी इसी निष्ठा और समर्पण ने तो हमें आपका मुरीद बना रखा है. उम्मीद करती हूँ कि वो मेरी सौत तो नहीं ही होगी,” हँसते हुए वो बोली.

“अरे, ऐसा कुछ भी नहीं है. वो विवाहित हैं और एक बच्चा भी है. आप लड़कियाँ भी कितनी ईर्ष्यालु होती हो,” ठहाका लगाते हुए क्षशाँक ने कहा.

“नाम से मुस्लिम लगती है.”

“वो कैसे? सुगंधा और शबनम जैसे नाम सभी संप्रदायों में मिलते हैं,” क्षशाँक ने कहा.

“हाँ, सो तो है. चलो. देर न करो. पृथ्वी सर का पीरियड है. देर होने पर वे अपने चश्में में

से ऐसे घूरा करते है कि पेशाब निकल जाता है," शबनम ने कहा.

"कभी आपका भी निकला क्या?"

"चल हट. बदमाश कहीं का."

दोनों जोर से खिलखिला पड़े थे.

उनकी ठहाके भरी हँसी को सुन कर झरोखों में बैठे कबूतर इधर उधर उड़ गए थे. पास की कक्षा से प्रवक्ता बाहर निकल आये थे और चिल्लाये थे, "कौन बदतमीज़ हैं ये?"

सिर पर पैर रख दोनों भागे. पीछे मुड़ कर भी न देखा था.

वही हुआ था जिसका डर था. जब वे कक्षा के द्वार पर पहुँचे तो देखा कि पृथ्वी सर पढ़ाना शुरू कर चुके थे. अनुमति लेने की भी हिम्मत न हुई थी. दोनों द्वार पर खड़े रहे थे. पृथ्वी सर उनकी ओर घूरते और फिर पढ़ाने लग जाते.

क्षशाँक और शबनम आँखें नीची किये खड़े रह गए थे. न इजाज़त मांगने की हिम्मत जुटा पा रहे थे और न ही द्वार पर खड़े रहने की. दोनों के पैर कपकपा रहे थे.

अचानक पृथ्वी सर दहाड़े, "खबरदार! फिर कभी देर से आये तो."

"दोनों एक साथ बोले, "थैंक यू सर. कभी नहीं सर, कभी नहीं."

उसके बाद शबनम को कभी देर न हुई थी. सदैव समय पर कक्षा में पहुँचती.

एक दिन शबनम ज़ल्दबाज़ी में सड़क पार कर रही थी. सड़क पार करने वालों के लिए हरी बत्ती भी थी. नियमानुसार गाड़ियों को रुक जाना चाहिए था. फिर भी एक ट्रक धड़धड़ाता हुआ आया और उसे कुचलता हुआ भाग निकला.

उस दिन जब वो कालिज नहीं पहुँची तो क्षशाँक को फ़िक्र हुई. एक लड़की से उसका अता पता लिया और उसके घर पहुँचा तो देखा कि वहाँ मातम छाया हुआ है.

क्षशाँक ठिठका.

साहस जुटा कर थोड़ा आगे बढ़ा और देखा कि ताबूत में एक शव रखा जा रहा है. वो तेजी से आगे बढ़ा और देखा कि शबनम का क्षत विक्षत और लहू लुहान खूबसूरत चेहरा अब भी वैसे ही मुस्करा रहा है जैसे वो मुस्कराया करती थी.

वे पास की दुकान पर गए, पुष्प खरीदे, अपनी दिवंगत साथी के शव पर रखे और चुपचाप लौट गए.

मातम मनाते लोग उसे लौटते देख रहे थे. वे क्या सोच रहे थे, क्षशाँक को उसकी परवाह नहीं थी? वो अपनी साथी पर पुष्प चढ़ा कर अपना स्वधर्म निभा चुके थे. मगर अंदर ही अंदर उसका हृदय क्रंदन कर रहा था.

उसने मन ही मन सोचा था कि काश! पृथ्वी सर उतने सख्त न होते जितने वे हो जाया करते हैं?

अगले दिन उसने पृथ्वी सर से कहा था, "सर, आपकी सख्ती ने शबनम को मार डाला."

गम से भरे दिल की झोंक में वह वो सब कह चुका था जो उसे नहीं कहना चाहिए था. वो खुद हैरान था कि उसने आरोप लगाने जैसी जुर्रत की कैसे? उसने ये भी नहीं सोचा था कि उस आरोप का पृथ्वी सर क्या असर होगा?

वही हुआ.

"क्या बकते हो?" गुस्से में लाल पीले होकर वे दहाड़े.

"सच कहा है सर. अगर आप उसके साथ उतनी सख्ती न करते तो आज वो जिंदा होती."

सभी छात्र मुँह बाए कभी क्षशाँक की ओर और कभी पृथ्वी सर की ओर हैरान होकर देख रहे थे.

"क्या मतलब? देर होने पर हम आप लोगों को टोकें भी नहीं?"

"आपने उस दिन उसको द्वार पर खड़े रख कर कितना ज़लील किया था? वो बहुत संवेदनशील थी. क्या उसके बाद वो कभी भी देर से आई थी?"

"उसे घर से ज़ल्दी चलना चाहिये था. इतनी भी क्या ज़ल्दी थी कि ट्रक भी नहीं देखा?"

"लड़कियाँ हम पुरुषों की तरह फुरसत में नहीं होती सर. उनको घर में अनेक काम करने होते हैं?"

यह सुन कर पहली बार पृथ्वी सर चुप रह गए थे. क्षशाँक अपनी जीत पर मन ही मन संतुष्टि महसूस कर रहे थे. मगर संतुष्टि ज़ल्दी ही काफूर हो गई थी जब पृथ्वी सर बोले, "कुतर्क करते हो."

"नहीं सर. कुतर्क नहीं, तर्कसंगत सच्चाई बयाँ की है. सच बोलना कुतर्क नहीं होता."

"कल अपने पिताजी को बुला कर लाओगे," सर ने आदेश दे डाला था.

"हम आपके प्रश्नों के उत्तर दे तो रहे है, सर."

"तुम उदंड जो हो गए हो. आप कक्षा में तब तक नहीं आओगे जब तक अपने पिताजी को बुला कर नहीं लाते हो."

क्षशाँक को पहली बार महसूस हुआ था कि सच बोल कर वो बुरी तरह फँस गया है. माँ का खिलाया पिलाया संस्कार उसके गले की हड्डी बन गया था. इधर खाइ तो उधर खड्ढा. एक ओर पृथ्वी सर का आदेश और दूसरी ओर पिताजी का क्रोध. उन को बुलाने का अर्थ था उनका भीषण गुस्सा झेलना.

उसके बाद क्षशाँक कालिज जाते, पुस्तकालय में बैठे पढ़ते रहते और शाम को घर लौट जाते. सात आठ दिन यूँ ही निकल गए थे.

उस दिन पृथ्वी सर कोई किताब लेने पुस्तकालय आये थे और क्षशाँक को वहाँ बैठे और पढ़ते देखा था. वे उसके पास पहुँचे, कंधे पर हाथ रखा और बोले, "उठो. हमारे साथ आओ."

क्षशाँक उठा और यंत्रवत उनके साथ हो लिया. उसकी ये पूछने की भी हिम्मत नहीं हुई कि कहाँ?

क्षशाँक को लेकर वे अपने निजी कक्ष में पहुँचे और बोले, “आप ठीक कहते हो क्षशाँक. संवेदनशील और भावुक शबनम संग मुझे उतना सख्त नहीं होना चाहिए था जितना हम हो गए थे. पिताजी से इतना डरते हो और हम से मुँहजोरी करते हो?”

माँ का खिलाया पिलाया संस्कार कि सर्वप्रथम गुरु, शेष बाद में, क्षशाँक को याद आ गया था और वे यंत्रवत अपने गुरुदेव के चरणों में झुक गए थे. गुरुदेव ने कंधों से पकड़ कर उसे ऊपर उठाया था और अपने गले से लगा लिया था.

शिष्य और गुरुदेव की आँखें झरना बनी हुई थी. शायद उनकी अपनी अपनी अश्रुधारा उन दोनों के गुनाहों को धो रही थी.

बासठ वर्षीय क्षशाँक की आँखें आज फिर धोखा दे गई थीं. वे झरना बनी हुई थीं. रह रह कर उसे ममतामई माँ, माँ सरीखी ममतामई चिकित्सक, मौन इश्क में सराबोर सुगंधा, सहनशील क्षेमा और संवेदनशील शबनम की एक साथ याद आ रही थी.

उन्होंने पास रखा भीगा रुमाल उठाया और अपनी नम आँखों पर फेर लिया. रुमाल ने आँसू सोख लिए थे. फिर भी उनकी आँखें नम थी. हों भी क्यों न? पाँच पाँच दिवंगतों की याद जो आ रही थी.

अकस्मात उनके मुख से शब्द फूट पड़े थे, “सभी हमउम्र साथी हमें छोड़ गए और हम है कि उनकी मौतों का बोझ अब तक झेल रहे है. ये सिलसिला कब तक चलेगा? पतझड़ कब तक आता रहेगा? कब तक पतझड़ झेलने होंगे? माँ कहा करती थी पतझड़ आया है तो बसंत भी आएगा. मगर बसंत आएगा कब?”

सोचते सोचते वे अधीर हो उठे थे.

बूढ़ी आँखें अश्रुपूरित हो गई थी. आंसुओं का स्त्रोत पुन: सक्रिय हो उठा था. जो आँखें अब तक उनको धोखा देती रही थी, आज उनका साथ दे रही थी. पहली बार उनकी आँखें झरना बनी हुई थी.

उनको अपनी आँखों पर आज गर्व हो आया था.

अचानक उनको अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि पी. बी. शेले याद आ गए थे. ‘ओड तू द वेस्ट विंड’ में वे भी तो वही कहते है जो माँ कहा करती थी.

कहता हैं भविष्य का शंख,
आज शीत है तो दूर नहीं बसंत.

माँ और महान कवि के कथन याद आने पर क्षशाँक ने काफी राहत महसूस की थी. उनको लगा था जैसे उनकी रगों में नई ऊर्जा प्रवाहित हो रही है. बूढ़ा शरीर फिर से जवान हो गया है.

“मैं बिस्तर में क्यों पड़ा हूँ?” अकस्मात उन्होंने अपने आप को कोसा.

फुर्ती के साथ उन्होंने बिस्तर छोड़ा. वे बाहर आये. देखा कि उनकी छोटी सी बगिया में पौधों के आस पास खर पतवार उग आई है. पौधे कुम्हला गए हैं.

“ओह! हम भी कितने मूर्ख हैं? बसंत भला आएगा कैसे?” कह कर उन्होंने खुरपी उठाई.

पोंधों के साथ उग आई खर पतवार हटाई.

फिर उन्होंने फव्वारा उठाया और पौधों को पानी देने लगे. जल मिलते ही पौधे रंग बदलने लगे. उनके मुख से निकला, “ये हुई न बात. अब आएगा बसंत.”

8

क्षशाँक की विश्वविद्यालय आने जाने की समस्याओं को माँ ने समझा था और पिताजी को भी अवगत करा दिया था. उसके बाद उन्होंने अपने मकान को किराये पर चढ़ा कर एक मकान विश्वविद्यालय के करीब खरीद लिया था.

दो महीने गुजर गए थे. क्षशाँक सुगंधा से न तो मिले थे न ही उनके घर गए थे.

तीसरे महीने सुगंधा का सन्देश एक छात्र की मार्फत मिला था. उसने उलाहना देते हुए कहा था, “मोहन आपको बहुत याद करता रहता है. कब तक उसे झूठे आश्वासन देती रहूँ? लगता है आपको मोहन से मिला कर बहुत बड़ा गुनाह कर बैठी हूँ.”

सुन कर क्षशाँक को झटका लगा था.

उन्होंने सुगंधा से मिलने की बात अब तक अपनी माँ को नहीं बताई थी. माँ ही उनकी सबसे बड़ी हमराज थी. वही उसकी परामर्शदाता थी.

शाम घर पहुँचे और माँ को सारी बात बताई तो वे बहुत खुश हुई. उन्होंने भी दादी महज़बीं के बारे में पूछा था. जब क्षशाँक ने विभाजन की त्रासदी के बारे में बताया तो वे रो पड़ी थी.

क्षशाँक स्तब्ध क्योंकि उसने अपनी माँ को पहली बार रोते हुए देखा था. वे तब भी न रोई थी जब क्षशाँक का छोटा भाई अल्पायु में ही गुजर गया था.

माँ को रोते देख कर क्षशाँक हैरान रह गए थे. जब वे कुछ शांत हुई तब उन्होंने पूछा था, “माँ, आप तो इतनी साहसी हो कि अब तक आपको कभी रोते नहीं देखा था. आज ऐसी क्या बात हुई?”

“वत्स, वो किसी एक की मौत नहीं थी. वो इंसानियत की मौत थी. वो उस सभ्यता की मौत थी जिसे गंगा जमुनी तहजीब कहा जाता है. हम अपनों की मौत सह सकते हैं मगर इंसानियत की कभी नहीं.”

माँ का वो रूप देख कर क्षशाँक गौरवान्वित अनुभव कर रहे थे. आज उनको समझ आया था कि अल्पायु बेटे की मौत को भी वे कैसे सहन कर गई थीं?

“माँ, अब एक बात बताएं. हमें सुगंधा के घर जाना चाहिए या नहीं?”

“आपकी अंतरात्मा क्या कहती है?”

“हम तो दुविधा में हैं.”

“दुविधा क्यों और कैसी, वत्स?”

“वो अकेली रहती हैं. उसके पास बार बार जाने से उसकी बदनामी हो सकती है.”

“खुशी हुई कि हमारा बेटा स्त्री की इतनी कद्र करता है. मुझे उसका फोन नम्बर दो. हम उससे बात कर लेते हैं.”

“हम फोन मिला देते हैं. बता देंगे कि आप उनसे बात करना चाहती हैं,” कह कर क्षशाँक ने सुगंधा का नम्बर मिला दिया था.

“लगता है चाची जी को हमारे बारे में आपने आज ही बताया है,” सुगंधा ने शिकायती लहजे में क्षशाँक को कहा था.

“हाँ. आपका अंदाज़ ठीक है. लो बात करो,” कह कर क्षशाँक ने फोन माँ को दे दिया था.

“अरे सुगंधा बेटी! आपके बारे में जान कर हमें बहुत खुशी हुई. एक काम किया करो. जब भी मोहन क्षशाँक को याद करे तो उसे लेकर इधर आ जाया करो. कोशिश ये करना कि रविवार को आओ. उसे कहना ये आपकी दादी का घर है.”

माँ ने फोन स्पीकर पर लगा रखा था.

सुगंधा बोली, “बहुत बहुत शुक्रिया चाची जी.

“बेटी, अपने आप को अकेली कभी नहीं समझना. ये घर आप का भी उतना ही है जितना क्षशाँक का. जो हुआ, भूल जाओ बेटी. स्वीकार करने में ही आनंद है.”

“जी चाची जी. स्वीकार ही तो हम ने किया था. इसी रविवार को हम आप के दर्शन करने आते हैं. क्षशाँक तो हम को पहचान नहीं पाए थे. आप पहचान पाओगी क्या?”

“अरे जब आप का परिचय हो चुका है, और आप रविवार को आने की कह रही हो तो क्यों न पहचानूँगी? आना, क्षशाँक के साथ ही आ जाना. वो आप को लेकर आएगा.”

सुगंधा अपने बेटे के साथ आई. पुरानी यादें ताज़ा हो गई. माँ और सुगन्धा काफी देर तक बातें करती रही. क्या क्या बातें हुई, क्षशांक को कुछ मालूम नहीं?

फिर भी वो खुश था कि सुगंधा को एक घर मिल गया था जहाँ वो अपने मन की परतें खोल सकती थी.

शाम को जब सुगंधा जाने लगी तो माँ ने पुन: कहा, “आते रहना बेटी. ये आपका घर है. इस पर तुम्हारा हक उतना ही है जितना क्षशांक का.”

“जी चाची जी,” कह कर सुगंधा ने माँ के पैर छुए थे और अपने बेटे को लेकर लौट गई थी.

माँ और क्षशांक उनको जाते देख रहे थे. क्षशांक ने देखा कि माँ की आँखें आज एक बार फिर नम हो गई थी.

हैरान हो कर उसने पूछा था, “आपकी आँखें आज एक बार फिर से नम है. भला क्यों?”

“इंसानियत के कत्ल-ए-आम को जाता देख रही हूँ वत्स. क्या तुम्हें नहीं लगता कि इंसानियत का क़त्ल कैसे हुआ है और कौन कौन उसके शिकार हुए है?” माँ ने आँखें पोंछते हुए कहा था.

“जी अम्मा जी, आप ठीक कह रही हैं.”

“इंसानियत के खून की नजीर है सुगंधा. न जानें ऐसी ऐसी कितनी ही सुगंधायें होंगी?” आह भरते हुए अम्मा जी ने कहा था.

क्षशांक निशब्द. कहे तो भला क्या कहे? स्तब्ध करने वाला कुछ तो उसके अंतर्मन में भी रिस रहा था. वह भी अंदर ही अंदर रो रहा था.

सुगंधा और उसका बेटा दोनों दूर हुए जा रहे थे और क्षशांक उनको जाते हुए देख रहा था. उसी समय उसे महसूस हुआ था जैसे उसकी आँखों ने दूर जाते दो प्राणियों को देखते रहने से मना कर दिया हो.

“ये कैसी अनुभूति है?” मन ही मन उसने सोचा.

अम्मा जी ने उसकी मनोदशा को जान लिया था. वे बोली, “वत्स! ये और कुछ नहीं. ये अपराध भावना है.”

“मगर मैंने तो किसी का अहित किया नहीं. फिर मुझे अपराध भावना क्यों हो?”

“माना कि आपने किसी को चोट नहीं पहुंचाई मगर मानवता तो हम सब के कारण शर्मसार हुई थी न? मानवता के नाते हम सबके धागे परस्पर जुड़े है वत्स,” कह कर अम्मा जी चुप हो गई.

क्षशांक उस पर चिंतन कर रहा था जो अम्मा जी ने कहा था.

“हे ईश्वर! सबको सद्बुद्धि दे. मानवता फिर शर्मसार न हो.”

“हे ईश्वर! सबको सद्बुद्धि दे. मानवता फिर शर्मसार न हो.”

9

इस प्रकार सुगंधा से पुराना रिश्ता तरो ताज़ा होकर फिर से जीवंत हो उठा था. हरा भरा हो गया था. लहलहाने लगा था. सुगंधा को घर मिल गया था. मोहन को चाचा. क्षशाँक को अपना पहला प्यार.

पाठक सोचते होंगे कि बच्चों का भी भला कोई पहला प्यार होता है? ऐसे नादान पाठकों को समझना चाहिए कि प्यार तो होता ही है बच्चों का. बड़ों का प्यार तो वासना से भरा होता है. वासना की पूर्ति न होने पर कटुता तक पैदा हो जाती है. वो प्यार कैसा जिसमे कटुता आ जाए?

क्षशाँक बहुत खुश था. वो खुश था कि उसकी मित्र उसे पुन: मिल गई थी. उसका अतीत जीवंत हो उठा था. बचपन लौट आया था. बचपन के खेल याद आ गए थे. अमरूद तोड़ कर आपस में बाँट कर खाने की याद उसके मुँह में पानी लाने के लिए काफी थी.

सुगंधा से पूछ कर क्षशाँक बतायेगा कि क्षशाँक से पुन: मिल कर उसे कैसा लगा था?

बासठ वर्षीय क्षशाँक ने एक बार फिर करवट बदली थी. सुगंधा की याद आने पर झुर्रियों से भरे उनके चेहरे पर रौनक छा गई थी. उसे लगने लगा था जैसे उसकी रगों में जवानी

का खून फिर से दौड़ने लगा हो.

वे बुदबुदाए थे, “माँ तो माँ होती है. संतान को राह दिखाती रहती है. सुगंधा के संदर्भ में उसकी दुविधा उन्होंने कितनी आसानी से दूर कर दी थी.”

उसी समय उन्हें नटखट मोहन याद आ गया था. उनको याद आया कि वो आइसक्रीम का कितना शौक़ीन था? जब भी आइसक्रीम वाले की आवाज़ सुनाई देती, वह बाहर भाग जाता और अपनी मनपसंद आइसक्रीम ले आता और विक्रेता से कहता, “पैसे चाचा से ले लेना.”

“बच्चों में कितना अपनापन होता है?” सोचा था बासठ वर्षीय क्षशाँक ने.

आज न माँ हैं न सुगंधा. न क्षेमा और न शबनम. पढ़ने लिखने के बाद मोहन को विदेश जाने का अवसर मिला था. वो भी विदेश भाग गया था.

सुगंधा ने अपने बेटे को यह कह कर बहुत समझाया था, “बेटा! जो मज़ा छज्जू के चौबारे, वो बल्ख न बुखारे. इसलिए, विदेश न जा. अपना देश सर्वश्रेष्ठ.”

मगर पुत्र अपनी माँ की सलाह न मान कर विदेश निकल गया था. माँ से मोह तोड़ कर और माँ के प्यार को ठुकरा कर वो विदेश जाने का मोह न त्याग पाया था.

मोहन ममता से नाता तोड़ कर किसी विदेशी शहर में जा बसा था. इधर सुगंधा फिर अकेली रह गई थी. लगता था अकेलापन ही उसके नसीब में लिखा था.

क्षशाँक ने उसे बहुत समझाया था कि पुरुष को बाहर निकलना ही पड़ता है. यही कुदरत है. फिर भी मोहन के जाने के चार महीने बाद सुगंधा ने ऐसी खाट पकड़ी कि वो उठ ही न पाई.

सुगंधा भी तो आखिर माँ थी. माँ तो माँ होती है. उसकी भावना को कोई माँ या माँ जैसा ह्रदय ही समझ सकता है.

क्षशाँक ने दवा दारु करने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी थी. फिर भी सुगंधा की सेहत में कोई सुधार नज़र नहीं आ रहा था. दरअसल, शरीर की बीमारी का इलाज़ हुआ करता है और हो भी सकता है मगर आहत भावनाओं का इलाज़ तो अब तक कोई संभव हुआ नहीं है.

जिस दिन सुगंधा के साँस पूरे हुए, क्षशाँक उसके करीब बैठे थे. पहली बार हाथ पकड़ कर उसने कहा था, “अपना घर बसा लेना. कब तक अकेले रहोगे?”

“ठीक हैं,” रुआंसा होते हुए क्षशाँक ने कहा था.

“हमारा अंतिम संस्कार सनातन विधि से कराना. हम मुस्लिम से सनातनी हो गए थे.”

“अरे, कब?”

“जब आप दोबारा मिले थे.”

“कभी बताया क्यों नहीं. माँ हमारा विवाह करवा देती.”

“विवाह तो मन का मन से होता है मित्र श्रेष्ठ. वो हो ही चुका था. फिर ढ़कोसलों की क्या दरकार?”

उस टिप्पणी को सुन कर क्षशाँक हतप्रभ रह गया था.

“आह! इश्क हो तो ऐसा. इश्क तो यही होता है,” मन ही मन वे बुदबुदाए थे.

“आपने कुछ कहा क्या?”

“हाँ, पूछ रहे थे कि मोहन को सूचना दे दें क्या?”

“छोड़ो न! उसकी हम क्या लगती हैं? सूचना देने पर भी वो नहीं आया तो आपको और तकलीफ होगी. एक बार तो वो भी दुविधा में पड़ जाएगा कि जाऊँ या नहीं. छोड़ो, क्या फायदा?”

विश्व में बढ़ रहे निपट स्वार्थ और आत्म केंद्रितता को क्षशाँक मन ही मन कोस रहे थे. सुगंधा उन्हें विवाह करने की सलाह दे रही है. विवाह कर भी लें तो क्या भरोसा कि उनको भी मोहन जैसा ही पुत्र मिले?

“क्या सोच रहे हो, मित्र श्रेष्ठ?”

प्रश्न सुन कर क्षशाँक चोंके थे और बोले, “कुछ नहीं.”

उनके अंतिम शब्द थे, “आपके माथे पर पड़े बल तो कुछ और ही कह रहे हैं.”

यह कह सुगंधा शांत हो गई थी. क्षशाँक उठे और उसके मुख को चादर से ढ़क दिया था.

सुगंधा की अंतिम इच्छानुसार सनातन विधि से उसका अंतिम संस्कार कराया और उसकी समाधि बनवा दी. उस पर लिखवाया, “यहाँ सोई हुई है वो कर्मवीर जिसने अपार कष्ट झेलते हुए जीवन जीया क्योंकि मरना मना हैं.”

विदाई के पलों की यादों ने बासठ वर्षीय क्षशाँक की आँखों को नम कर डाला था. उन्होंने पास रखा गीला रुमाल उठाया और अपनी गीली हुई खुश्क आँखों को पोंछ डाला.

“आँखें भी कितनी कृतघ्न होती हैं? एन मौके पर आँखें धोखा दे जाती हैं. और देखो जीवन भी कैसा खेल है? साँप सीढ़ी सा,” बुदबुदाते और आह भरते हुए बासठ वर्षीय क्षशाँक ने करवट बदल ली थी.

सब बिछुड़ जाते हैं. ममतामई माँ भी जो अपनी संतान को अपनी जान से भी अधिक चाहती है. जीवन संगिनी तो बस मौत ही है. जन्म से लेकर अंत तक मौत साथ देती है. अकेला कभी नहीं छोड़ती. फिर भी लोग ऐसे अभिन्न मित्र से डरते रहते है.

“लोग मौत से आखिर डरते क्यों हैं?” पुन: सोचा था क्षशाँक ने.

तभी उसे याद आया था कि उसने कही पढ़ा था, “मौत कड़वी सच्चाई है तो जिंदगी मीठा धोखा.”

उपरोक्त कथन याद आने पर वे मुस्कराए बिना नहीं रह सके थे. तभी उनको याद आ गई थी अपनी वो नज्म जो उन्होंने कभी ऐसी ही परिस्थितियों में लिखी थी.

मौत ही तो है हमारी जीवन संगिनी,

जीवन संगिनी से बेवफाई कैसे करें?
उसी ने तो जीवन भर दिया है साथ,

नज्म याद आने पर उनको कुछ राहत महसूस हुई थी. उनको ऐसा लगा था जैसे वे अब अकेले नहीं हैं. कोई अदृश्य साथी है जो उनके साथ है.

और वो अदृश्य साथी थी मौत.

क्षशाँक ने जीवन के फलसफे को जान और पहचान लिया था. समझ भी लिया था कि सब कुछ क्षणभंगुर है. सब नश्वर है. हम भी. तुम भी. वो भी. कुछ भी तो स्थाई नहीं है. अगर ताजिंदगी कोई साथ देता है तो वह है मौत.

मौत सुख देती है. सब कष्टों को दूर कर देती है. मौत सबसे बड़ी और श्रेष्ठ चिकित्सक है. उसके पास सभी बीमारियों का इलाज़ है. संसार के सभी बखेड़ों से इंसान मुक्त हो जाता है. इसीलिये मौत का दूसरा नाम है मुक्ति.

उसी समय उनको याद आ गए थे अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध कवि राबर्ट ब्राउनिंग.

राबर्ट भी तो मौत को मीत मान कर उसका स्वागत किया करते थे. याद आने पर बासठ वर्षीय क्षशाँक का चेहरा पुष्प की मानिंद खिल उठा था. राबर्ट का दूसरे लोक पर अटूट विश्वास था. इसीलिये तो वे काल का इंतज़ार करती बीमार एलिजाबेथ से मोहब्ब्त कर सके थे.

एलिजाबेथ मृत्यु शैया पर पड़ी थी और राबर्ट उसके पास बैठे थे. अपने प्रेम को क्षण क्षण मौत के मुँह में जाते देख रहे थे और कह रहे थे, “प्रिये, हम इस लोक में बहुत दिनों तक नहीं मिल पाए. कोई फ़िक्र नहीं. निश्चित मानो कि हम उस लोक में ज़रूर मिलेंगे.”

राबर्ट का अपने प्रेम और दूसरे लोक पर इतना अटूट विश्वास था कि वे पल पल मरती अपनी प्रेमिका से कह पाए थे कि वे फिर मिलेंगे. इसीलिए तो वे मृत्युशैया पर पड़ी एलिजाबेथ बैरट ब्राउनिंग से बेइंतहा मोहब्बत कर पाए थे. वो भी उस देश में जिसमें प्रेमी प्रेमिकाएं कपड़ों की तरह बदले जाते हैं.

“मोहब्बत चीज़ ही ऐसी है,” वह बुदबुदा उठे थे. मोहब्बत में डूबते उतरते बासठ वर्षीय क्षशाँक का चेहरा उस समय दमक रहा था.

“सुगंधा, क्या हम भी दूसरे लोक में मिल सकेंगे?” सोचते हुए उन्होंने एक गहरी लंबी साँस ली और करवट फिर बदल ली.

“क्यों नहीं? प्रेम सच्चा हो तो उसे असफलता का मुँह कभी नहीं देखना पड़ता,” एक आवाज़ आई.

आवाज़ सुन कर बासठ वर्षीय क्षशाँक की उत्कंठा बढ़ने लगी थी. “प्रेम के बिना प्रेमिका और प्रेमी के बिना प्रेमिका हो कैसे सकते हैं,” उसने सोचा था. आवाज़ किधर से आई थी, उसने

खोजने की कोई कोशिश नहीं की क्योंकि वो जानता था कि आवाज़ आखिर थी किसकी?

10

क्षशाँक ने मौत को बहुत करीब से देखा था. मौत को देख कर वह निर्द्वन्द्व हो चुका था. वीतरागी कहना तो अधिक हो जायेगा, मगर संसार में रूचि नगण्य रह गई थी. अब उसने मौत को अपना स्थाई साथी मान लिया था. लेकिन सिर्फ मान लेने से क्या होता है?

जिन्दगी के फलसफे को समझने के बाद भी वे माँ और सुगंधा की यादों को नहीं भुला पा रहे थे. माँ तो माँ होती है. उनको कैसे भुलाया जा सकता है?

मगर अपने अंतिम क्षणों में सुगंधा ने जो रहस्य खोला था, उसने उसके हृदय को अंदर तक न केवल झकझोर दिया था बल्कि उसे स्नेह और प्रेम से तरबतर भी कर दिया था.

"वाह, प्रेम की देवी सुगंधा, वाह! तुझे बार बार नमन. जहाँ भी आप हों, स्नेह और प्रेम की वर्षा करती रहें," बासठ वर्षीय क्षशाँक ने सुगंधा और उसके प्रेम की स्मृति में स्तुति करते हुए कहा था.

माँ और सुगंधा के जाने के बाद क्षशाँक के जीवन में जो रिक्तता आ गई थी, वो भी मौत की तरह स्थाई बन गई थी. सुगंधा जैसे अंतरंग मित्र ने भी उसको विवाह करने का सुझाव दिया था मगर वो सुझाव उनके गले नहीं उतर पा रहा था.

"चुपचाप इकतरफा प्रेम करते हुए जब सुगंधा वर्षों तक रह सकती है तो क्या हम उसकी याद में जीवन नहीं गुजार सकते?" क्षशाँक ने सोचा था.

दोपहर तक का समय महाविद्यालय में युवाओं संग अच्छा गुजर जाया करता था. जॉन कीट्स और विलियम वर्डवर्थ को वे तन्मय हो कर पढ़ाया करते थे.

मगर यौवन से छलकते युवा छात्र सैमुअल टेलर कोलरिज, लॉर्ड बायरन, पर्सी बिशे शेली, राबर्ट ब्राउनिंग और विलियम ब्लेक के लिए आग्रह करते तो उनको लगने लगता था जैसे उनका शिक्षक जीवन सफल हो रहा है. उनको भी छात्रों का अनुरोध बहुत अच्छा लगता था.

मगर जैसे ही वे घर लौटते तो उनको घर का सूनापन काटने को दौड़ता. सब उजड़ा उजड़ा लगता. सहायिका खाना खिला कर घर लौट जाती थी. उसके बाद तो समय काटना और भी दूभर हो जाता था.

तभी सुगंधा की सलाह पुन: याद आ जाती, "अपना घर बसा लेना. कब तक अकेले रहोगे?"

दूसरे क्षण ही वे अपना सिर झटक कर उन विचारों को अपने मन मस्तिष्क से निकाल कर बाहर फेंक देते.

"चुपचाप इकतरफा प्रेम करते हुए जब सुगंधा वर्षों तक रह सकती है तो क्या हम उसकी याद में जीवन नहीं गुजार सकते?" क्षशाँक ने पुन: सोचा था.

मजबूर होकर उन्होंने एक दिन सहायिका से कहा था, "सुबह का नाश्ता हम बना लिया करेंगे. आप दोपहर आया करो और शाम तक रुका करो."

"वो क्यूँ, बाबू जी?"

"दोपहर बाद आप चली जाती हो. अकेलापन काटने को दौड़ता है. आप होंगी तो मन लगा रहेगा," क्षशाँक ने मासूमियत के साथ कहा था.

यह सुन कर सहायिका खिल खिल कर हँस पड़ी थी.

उसने कहा था, “बाबू जी, मैं सुबह आकर शाम को ही जाया करूँगी. अगर हो सके तो एक काम मेरा कर दिया करना.”

“अरे ऐसा भी क्या? बोलो , वो क्या? बताओ तो,” उद्विग्न होते हुए क्षशाँक ने पूछा.

“मेरा बेटा पांचवीं कच्छा में पढ़ता है. धनाभाव के कारण ट्यूशन मैं रख नहीं सकती. वो इस्कूल से सीधा इधर आ जाया करेगा. बस उसको अपनी निगरानी में रख लिया करें.”

“अरे, इसमें क्या कठिनाई? पहले क्यों नहीं बताया था? मगर इस्कूल नहीं, स्कूल. और कच्छा नहीं कक्षा.”

“आप तो समझ गए न बाबू जी.”

“हाँ, मगर आप भी तो ठीक से बोलना सीखो नहीं तो आपका बेटा भी इस्कूल और कच्छा बोलेगा. बच्चा अपने माता पिता से अधिक सीखा करता है.”

“बाप होता तो क्या बात थी?” आह भरते हुए सहायिका ने कहा था.

“अरे, उनको क्या हुआ? छोड़ गए क्या?”

“हाँ, छोड़ गए. और छोड़ भी ऐसे गए कि लौट कर कभी न आयेंगे,”

“ओह! क्या मतलब? हम समझे नहीं.”

“उनको ईश्वर ने हमसे छीन लिया,” अश्रुपूरित आँखों को पोंछते हुए उसने कहा था.

“ओह! माफ करना.”

“कोई बात नहीं, सर .”

“ईश्वर उनको सद्गति दें. क्या नाम था उनका?”

“कोमल वशिष्ठ.”

“अरे, आप द्विज हो.”

“जी.”

“क्या करते थे कोमल जी?”

“वे भी शिक्षक थे.”

“ओह! आपने पहले कभी कुछ नहीं बताया. आप बच्चे को इधर भेज दिया करो. फिर तो आपके रुकने की भी दरकार नहीं होगी. वो पढ़ता लिखता रहेगा और उसके साथ हमारा मन बहलाव होता रहेगा.” क्षशाँक ने कहा.

“मैं घर जा कर भी क्या करूँगी? यहाँ रहूँगी तो आप का कोई काम धाम कर दिया करूँगी?”

“बच्चे का नाम?”

“आनंद.”

“और आपका?”

“मीरा.”

“ठीक है. आप सुबह नहा धोकर बच्चे को लेकर इधर ही आ जाया करो. आप दोनों भोजन यहीं किया करो. अलग से झंझट क्यों करें?”

“जैसी आपकी आज्ञा?”

कुदरत भी अच्छी नीयत वालों की मदद खुल कर किया करती है. उसने क्षशाँक की भी मदद की.

सहायिका और उसका बच्चा सुबह आने लगे थे. क्षशाँक का सूनापन कम हो चला था. बच्चा वहीं से स्कूल जाता और स्कूल से लौट कर वहीं आ जाता.

खाना खाने के बाद थोड़ा इधर उधर खेलता कूदता और फिर अपना गृहकार्य करता. जरूरत पड़ने पर क्षशाँक उसका मार्गदर्शन करते.

बच्चा होनहार था. महीन दृष्टि का मालिक. कहाँ क्या हो रहा है? कौन क्या कर रहा है? सभी पर कड़ी नज़र रखता. बातों को बड़े गौर से सुनता और मौका मिलते ही अपनी चुटीली टिप्पणी जड़ देता.

अगर उसे हंसोड़ भी कह दिया जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी. उसकी चुटीली टिप्पणियों पर क्षशाँक हँसने को मजबूर हो जाया करते थे.

शाम को वह अपनी माँ के साथ अपने घर लौट जाता था. समय अच्छा गुजरने लगा था.

11

सहायिका मीरा और उसके बच्चे के लौट जाने के बाद उस दिन क्षशाँक न जाने क्यों, बहुत उद्विग्न थे? मन उचाट था. लगता था जैसे अकेलेपन और सूनेपन ने उनको फिर से डस लिया हो?

यक्ष प्रश्न बार बार कचोट रहा था कि सहायिका और उसके बच्चे के लौट जाने के बाद बचा समय कैसे और कहाँ बिताया जाये? इधर उधर घूमना उनको पसंद नहीं था. सिनेमा से भी चिढ़ थी. ताश खेलना बिल्कुल पसंद नहीं था. संगीत पसंद था. मगर गीत संगीत की भूख कहाँ और कैसे शांत हो?

अचानक उनको गुलाब की याद आई जिसकी तारीफ़ सुगंधा कई बार कर चुकी थी. सुगंधा और गुलाब कभी सहेली हुआ करती थी.

मगर विभाजन की त्रासदी में दोनों के घर परिवार नफरत की आग में झुलस गए थे. दोनों सहेलियाँ अकेली रह गई थी मगर हालातों के चलते एक दूसरे से बिछड़ गई थी.

चूंकि दोनों अकेली रह गई थी, दोनों ने साथ साथ रहने का निश्चय किया था मगर सुगंधा के चाचा ने उसे उस दुष्ट के हवाले कर दिया था जिसे उसे बाद में छोड़ना पड़ा था.

खाविंद को छोड़ने के बाद उसे एक बार गुलाब की याद फिर से आई थी. और उसकी

खोज खबर शुरू हुई जो गुलाब के कोठे पर जाकर खत्म हुई.

“अरी, ये तुने क्या किया?” पूछा था सुगंधा ने.

“क्या करती? हमारे पास एक ही हुनर था. उसे ही अपना लिया,” गुलाब ने उत्तर दिया.

“मगर ये काम तो बहुत बदनाम है.”

“हाँ, शुरू में दो चार बार समस्या हुई थी मगर जोरावर ने मदद की और गुंडों को उठा कर कोठे से बाहर फेंक दिया था. उसके बाद तो हमारी ऐसी धाक जमी कि अनाचार और दुर्व्यवहार करने की अब कोई हिम्मत नहीं कर पाता है. अब तो वही आते है जिनको गीत संगीत का शौक हो.”

“यानि आप देह व्यापार नहीं करती?”

“अरी लाल बुझक्कड़, तूँ भूल गई क्या? कैसा करारा थप्पड़ जड़ा था वाजिद को? किसी की क्या मजाल कि मेरी मर्जी के बिना मेरे शरीर को छू तक सके.”

“हाँ, याद है. माफ करना दीदी. चूँकि ये जगह ही बदनाम है. इसलिए शंका हुई थी. मगर ये जोरावर कौन है?”

“अरे, आपको याद नहीं क्या? बचपन का गोरा चिट्टा वही हमारा साथी जो हमें कबड्डी में पटक दिया करता था. याद आया?”

“ओह! वो अब यहाँ क्या करता है?”

“पहलवानी और हम जैसे ज़रूरतमंदों की हिफाज़त. हम उसे वेतन देते हैं. सारा दिन इधर उधर लट्ठ लिए घूमा करता है. खाना खाने हमारे पास आता है. फिर इधर उधर.”

“उसके माँ बाप?”

“वे सब दंगों की भेंट चढ़ गए.”

“हे भगवान! वे तो हिंदू थे. उनको किसने मारा?”

“अरी बावली, दंगों की भी कोई बिरादरी होती है? दंगे जात पात किसकी और कब देखते हैं? जो सामने आया, उसी को मार काट डाला. जो औरत मिली उसी की अस्मत लूट ली. मगर एक बात तो बता. अपने खुदा को भूल कर तेरे ये ईश्वर कहाँ से आ गए?”

सुगंधा उसके प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाई थी और माथा पकड़ कर बैठ गई थी. गुलाब ने ही उसे संभाला था.

“अरे क्या हुआ?”

सुगंधा फिर भी कुछ न बोल पाई थी. सुध बुध भूल कर वो कई दिन गुलाब के पास पड़ी रही थी. वहीं उसका बच्चा मोहन पैदा हुआ था और उस समय गुलाब ने ही उसकी तीमारदारी की थी.

“मौलवी को बुलाती हूँ,” गुलाब ने कहा था .

“नहीं, किसी पंडित को बुलाओ.”

“क्या कह रही हो? क्या तुम हिंदू हो गई हो? ईश्वर को पुकारती हो और अब.”

“हाँ गुलाब, हाँ. लाशों से भरी रेल गाड़ियों को पाकिस्तान से आते देख कर इस्लाम से भी मेरा भरोसा उठ गया है. जालिमों ने छोटे छोटे बच्चों और बुजुगों तक को नहीं छोड़ा था. महिलाओं को नोंच डाला था.”

“मगर वो क़त्ल-ए-आम तो यहाँ भी हुआ था?”

“हाँ, मगर पाकिस्तान में एक भी गाँधी, नेहरु और पटेल नहीं हुआ जो हम जैसे असहायों की आवाज़ बन सके.”

“क्या मतलब?”

“देखो तो, गांधी, नेहरु, पटेल आदि ने दंगों पर कैसे लगाम लगाई थी? दंगों के बाद हम बेसहारों तक को कोई तकलीफ न हुई थी. इसी से इस्लाम से तौबा कर ली.”

“ओह! आगे क्या सोचा है?”

“बचपन से ही मुझे सिलाई कढ़ाई का शौक है. उसी का कुछ कारोबार शुरू करूँगी?”

“उसके लिए धन चाहिए.”

“मेरे पास कुछ जेवर हैं. उनको बिकवा दो. या आप गिरवी रख लो,” सुगंधा ने कहा था.

“फ़िक्र न कर. मेरे पास जो है, तेरा है. तूँ आगे बढ़. जो ज़रूरत हो एक दिन पहले बता दिया करना.”

“तेरा पाई पाई चुका दूँगी.”

“अब थप्पड़ खाना है तो बता. वाजिद तो उस थप्पड़ को आज तक नहीं भूला है,” हँसते हुए गुलाब ने कहा.

“वो कहाँ मिला?”

“एक दिन बाज़ार में मिला था. वो अपनी बीबी के लिए लत्ते कपड़े खरीद रहा था.”

“फिर?”

“वो तो आँखें चुरा रहा था. मगर मैं कहाँ छोड़ने वाली थी?”

“फिर?”

“मैंने उससे सीधा पूछ लिया. पहचानते हो या याद दिलाऊँ?”

“क्या बोला?”

“तुझे कैसे भूल सकता हूँ? आज तक गाल गर्म है. कहो, तुम यहाँ कैसे?”

“लहंगे चोली खरीदने थे. वे लेने आई हूँ,” मैंने कहा.

“इतने सारे?”

“काम ही ऐसा है?”

“यानि?”

“गीत, संगीत और नृत्य का.”

“तो किसी दिन आऊँ?”

“स्वागत. मगर सिर्फ गीत संगीत सुनने. कुछ शरारत की तो थप्पड़? थप्पड़ भी काम न आया तो जोरावर काम तमाम कर देगा. याद है न जो कबड्डी में टक्कर दिया करता था?”

“रस्सी जल गई मगर ऐंठन न गई. कोठे पर बैठ कर भी इतने नखरे?”

“जनाब, न सब कोठे बिकाऊ होते हैं न ही जिस्मफरोशी के अड्डे. मेरे यहाँ संगीत प्रेमी आते हैं न कि सड़क छाप गुंडे.”

“यकीन नहीं होता.”

“यकीन करने को किसने कहा? हाथ कंगन को आरसी की दरकार नहीं हुआ करती,” कह कर हम दुकान से बाहर चले आये थे.

“बहुत खूब, ये मर्द ऐसे ही इलाज़ के काबिल होते हैं. जहाँ औरत दिखाई दी, वहीं लार टपकाने लगते हैं,” हंसते हुए सुगंधा ने कहा.

गुलाब ठहाका लगा कर हँस पड़ी.

12

सुगंधा को चिंतित देख कर गुलाब ने कहा, “क्या सोच रही हो।“

“कुछ खास नहीं.”

“फिर तेरे माथे पर बल क्यों पड़े हैं?”

“अरी, कहा न कि कुछ खास नहीं.”

“मुझ से छिपाओगी तो काम कैसे बनेगा?”

“अरी, तुझसे क्या छिपाना? बस, यही सोच रही हूँ कि काम शुरू कैसे हो?”

“ये बता शुरू में कितना रुपया चाहिए जिससे तेरा काम अच्छे से जम जाए?”

“अनुभव है नहीं. क्या बताऊं?”

“कोई बात नहीं. धीरे धीरे अनुभव हो जायेगा. जब भी रूपये की जरूरत हो, एक दिन पहले बता दिया करना. कोई अड़चन न आने दूँगी.”

“तेरा अहसान जिंदगी भर न भूलूंगी. और तेरी एक एक पाई चुका दूँगी.”

“फिर वही बक बक. अहसान जताना है तो जा किसी और के पास मर,” झिड़कते हुए गुलाब ने कहा.

“अरी, तूँ तो नाराज़ हो गई,” गुलाब को कौली में भरते हुए सुगंधा ने कहा.

“फिर तूँ बेकार की बातें करती क्यूँ है? दोस्तों में न कोई अहसान होता है न ही अफ़सोस और न ही वापिस पाने की कोई चाहत.”

“हाँ, सो तो है. इसीलिए तो सखाभाव प्रेम और विश्वास पर टिका होता है. और प्रेम का कोई मोल नहीं होता,” सुगन्धा ने सहमत होते हुए कहा.

“छोड़ उस सबको. अंदाज़ लगा कर ये बता शुरू में कितना रुपया चाहिए जिससे तेरा काम अच्छे से जम जाए?”

“कहा न कि कोई अनुभव नहीं. वैसे मैं चार पाँच सिलाई की और एक कढ़ाई की मशीन लेना चाहती हूँ.”

“कोई बात नहीं. धीरे धीरे अनुभव हो जायेगा. इन मशीनों की खरीद में पांच छह हज़ार रूपये काफ़ी होने चाहिए. शेष जब भी रूपये की जरूरत हो, एक दो दिन पहले बता दिया करना. कोई रुकावट नहीं आने दूँगी.”

गुलाब ने सुगंधा की मदद की और उसने चार पाँच सिलाई की, एक कढ़ाई की मशीन खरीदी, चार पाँच बेसहारा औरतों को साथ लिया और सिलाई कढ़ाई का काम शुरू कर दिया था जो कुछ महीनों में ही अच्छा खासा चल निकला था.

बेसहारा सुगंधा ने सशक्त होकर अनेक बेसहारा अबलाओं को सहारा दिया था. उसने साबित कर दिया था कि हिम्मते मरदाँ मददे-ख़ुदा. सुगंधा ने हिम्मत की और गुलाब ईश्वर बन कर उसके जीवन में उतरी; और अंतत: कामयाब होती चली गई.

उसके बाद उसने विश्वविद्यालय के पास अपना घर बनाया था जहाँ मोहन की क्षशाँक से पहली भेंट हुई थी. घर छोटा था मगर दिल इतना विशाल कि क्षशाँक तक को जगह दे सकता था और उसने उसकी हर प्रकार की मदद की पेशकश कर दी थी.

याद आने पर बासठ वर्षीय क्षशाँक ने मन ही मन में प्रार्थना की थी, “हे ईश्वर! अगर आप सच में हैं तो मोहब्बत की देवी सुगंधा को जन्नत बख्शना.”

पता नहीं ईश्वर ने उनकी सुनी या नहीं मगर उसके बाद क्षशाँक को काफी आंतरिक खुशी और शान्ति मिली थी. शांति मिलनी ही थी क्योंकि दूसरों के लिए निस्वार्थ भाव से की गई विनती सदा सुखदाई हुआ ही करती हैं.

“माँ भी तो यही कहा करती थी कि मन की शांति के लिए निस्वार्थ भाव से की गई प्रार्थना सदा सार्थक और सुखदाई हुआ करती है,” क्षशाँक ने मन ही मन सोचा था.

उन्हीं के खिलाये पिलाये संस्कार आज तक उनके काम आ रहे थे.

प्रसन्न होकर बासठ वर्षीय क्षशाँक ने सुकून भरा साँस छोड़ा और करवट बदल कर ये सोचते हुए उन्होंने अपनी आँखें मूँद ली थी कि हो सकता है किसी दिवंगत से सपनों में ही साक्षात्कार हो जाये.

वे काफी देर तो आँखें मूँदे पड़े रहे थे. उनको राहत महसूस हो रही थी. इसीलिये आँखें खोलने से परहेज़ कर रहे थे. कुछ देर बाद वे स्वपनों के संसार में उतर गए.

बाहर किसी अजनबी को देख कर या आपसी झगड़े के कार कुत्ते जोर जोर से भौंक रहे

थे. कुछ कुत्ते गुर्रा रहे थे. मेंडक टर्रा रहे थे. कहीं दूर से गीदड़ों की तरह तरह की आवाजें आ रही थी. कुछ गीदड़ तो ऐसे लगते थे जैसे रो रहे हों.

मगर क्षशाँक इतनी गहरी नींद में थे कि उनको मिले जुले उस शोर का आभास तक नहीं हुआ था.

13

सुबह हो चुकी थी. दीवार घड़ी सात बजा रही थी. बाहर चिडियाएँ शोर मचा रही थी. फिर भी बासठ वर्षीय क्षशाँक अपने बिस्तर पर पड़े थे. बिस्तर छोड़ने की कोई इच्छा ही नहीं थी.

वे अब भी स्वपनों के संसार में खोये हुए थे. माँ, चिकित्सक माँ, सुगंधा, सहायिका मीरा, गुलाब और बाबा एक साथ आकर उनके मन मस्तिष्क में विचरण कर लौटे जा रहे थे.

उस शाम भी वयोवृद्ध क्षशाँक अकेले लेटे थे. अब तक वे अपने अकेलेपन के आदी हो चुके थे.

तभी वे अपने अतीत में एक बार फिर पहुँच गए थे. उनको प्रोफेसर क्षशाँक की याद आ गई थी जो सुगंधा के जाने के बाद अकेलापन झेल रहे थे.

उसी समय उनको गुलाब की भी याद आ गई थी. गुलाब सूफियाना मुजरे पेश किया करती थी. सुगंधा की मार्फत वे उससे एक दो बार पहले भी मुलाकात कर चुके थे. वे उठे और गुलाब के कोठे की ओर बढ़ चले.

रात के नौ बजे के आस पास जब वे कोठे पर पहुँचे तो गुलाब सूरदास का भजन पेश कर रही थी.

अब हों नाच्यौ बहुत गोपाल।
काम क्रोध कौ पहिरि चोलना,
कंठ विषय की माल॥
महामोह के नूपुर बाजत,
निन्दा सब्द रसाल।
भरम भरयौ मन भयौ पखावज,
चलत कुसंगति चाल॥

गुलाब इतनी भावविभोर हो कर गीत गा रही थी और नृत्य कर रही थी कि उसे आभास तक नहीं हो रहा था कि कोठे से कौन जा रहा है और कोठे पर कौन आ रहा है?

गीत खत्म हुआ.

गुलाब की आँखें बंद थी. फिर भी उसकी बंद आँखों से अश्रुधारा बह रही थी. भाव विभोर हो कर वो वहीं की वहीं जमीन पर बैठ गई. कुछ देर तक वो यूँ ही बैठी रही. श्रोता दर्शक चुपचाप उठे, पेटी में रूपये डाले और कोठे से उतरते चले गये.

श्रोताओं का शालीन और सदाशय व्यवहार देख कर क्षशाँक स्तब्ध रह गए थे. लोगों को

खुद रुपये डालते देख कर उनको अपनी आँखों पर भरोसा नहीं हो रहा था. न कोई मांगने वाला था न कोई देने वाला. लगता था जैसे गायक और श्रोता दर्शक सब एकाकार हो गए थे.

वे इसी उहापोह में फँसे थे कि उसी समय गुलाब ने आँखें खोली. क्षशाँक अब तक वहीं के वहीं खड़े रह गए थे जहाँ वे कोठे पर पहुँच कर खड़े हुए थे.

जैसे ही गुलाब ने प्रोफेसर क्षशाँक को खड़े देखा तो खुश होते हुए वह बोली, “आइये प्रोफेसर साहिब, आइये. इधर बैठिये.”

दो चार श्रोता दर्शक जो खुद गीत पर मंत्रमुग्ध थे, अब भी मौजूद थे. उन्होंने हैरान हो कर देखा कि ये कौन प्रोफेसर हैं जिनका इतनी गर्मजोशी के साथ इस्तकबाल किया जा रहा हैं?

प्रोफेसर क्षशाँक ने आभार जताते हुए कहा, “आप अपना गायन जारी रखें. हमें व्यवधान डालना पसंद नहीं. सूरदास जी का ये भजन कितना सुख देता है? मन को शांत कर देता है. आपकी मधुर आवाज़ इस गीत में और अधिक रस घोल देती है."

“मुजरा तो खत्म हो चुका है.”

“एक बार फिर हो जाये तो कोई हर्ज नहीं,” प्रोफेसर क्षशाँक ने अर्ज पेश की.

“बहुत बहुत शुक्रिया,” कह कर गुलाब ने पुन: गायन शुरू किया. जब गीत समाप्त हुआ तो वो शेष श्रोताओं को संबोधित करते हुए बोली, “मेरे मेहरबान, मेरे कद्रदान. आज बस इतना ही. कल आइयेगा.”

श्रोता दर्शकों ने पेटी में रूपये डाले और प्रस्थान कर गए. उसके बाद गुलाब ने पूछा, “कहिये, आप कैसे हैं? सुगंधा को साथ क्यों नहीं लाये?”

क्षशाँक को काटो तो खून नहीं. असमंजस में पड़े सोच रहे थे कि क्या उत्तर दें? उत्तर देने से बच भी तो नहीं सकते थे.

धीरे से बोले, “सुगंधा अब इस दुनिया में नहीं रही.”

“क्या कहा?”

“हाँ गुलाब, जो आपने सुना, वो ठीक सुना. उसका स्वर्गवास हो गया है.”

“कब?”

“करीब चार महीने हो गए.”

“चार महीने हो गए और आपने सूचना तक नहीं दी. आपको पता है न कि वो मेरी छोटी बहन थी.”

“माफी चाहते हैं. हम खुद इतने अधिक बेहाल थे कि होश ही नहीं रहा था.”

“क्या हुआ था?”

“गम.”

“किस बात का?”

“बेटे से जुदाई का.”

“उसके बेटे को क्या हुआ?”

“वो विदेश चला गया.”

“ओह! ऐसी औलाद खुदा किसी को न दे.”

“सुगंधा बेटे से जुदाई बर्दाश्त न कर सकी. हमने उसे बहुत समझाया था. अच्छे से अच्छे चिकित्सक से इलाज कराया. मगर कुछ काम न आया. उसने एक बार खाट जो पकड़ी, फिर उठ ही नहीं पाई,” क्षशाँक ने आह भरते हुए कहा.

“आपने हमें सूचना तक न दी.”

शायद गुलाब भूल गई थी कि यही एतराज़ वो पहले भी जता चुकी थी और क्षशाँक उसके लिए माफी भी माँग चुके थे.

मगर उसकी मानसिक हालत को देखते हुए उसने पुन: कहा, “हाँ गुलाब, हम से भारी भूल हुई थी. इस लापरवाही के हम गुनहगार हैं. दरअसल हम खुद इतने घबराए हुए थे कि होश ही नहीं रहा. हमसे बहुत बड़ी भूल हुई थी. स्त्री स्त्री की नब्ज़ को अच्छे से जानती पहचानती है. हो सकता है आपकी नसीहत कारगर हो जाती और सुगंधा खाट छोड़ देती.”

इतना कह कर क्षशाँक अपने पैर के अंगूठे से फर्श खुरचने लगे थे.

बेचैन गुलाब ने बेचैन क्षशाँक की ओर देखा था और उसकी बेचैनी को समझा था.

वो उठी, उनकी पीठ पर हाथ रखा और बोली, “आप नाहक ही अधीर हो रहे हैं. अगर मैं आपकी जगह होती तो शायद मैं भी वैसे ही बेचैन हो जाती जैसे आप हुए होंगे.”

क्षशाँक चुप रहे.

“आप हाथ मुँह धो लें. भोजन तैयार है.”

क्षशाँक उठा और गुसलखाने की ओर बढ़ गया. जब तक वो लौटा दस्तरखान लगाया जा चुका था. दोनों ने चुपचाप भोजन किया. कक्ष में इतना सन्नाटा छाया हुआ था कि वे अपनी साँसों की आवाज़ तक सुन सकते थे.

स्पष्ट था कि सभी एक ही मुद्दे पर सोच रहे होंगे और वो मुद्दा था संसार की क्षणभंगुरता.

14

भोजन के बाद क्षशाँक ने इजाज़त मांगी थी तो गुलाब ने कहा था, “बारह बज चुके हैं. अब कहाँ वापिस जाइएगा? आज यही आराम करें.”

“ऐसी कोई बात नहीं. कोई गाड़ी ले लूँगा. चलता हूँ.”

“ऐसा भी क्या? ये घर भी आपका ही है. आज यहीं आराम करें. आपका मन भी विचलित है. घर में अकेले क्या करियेगा?”

“आपको तकलीफ होगी.”

“अरे, तकलीफ कैसी? तीन कमरे हैं. जिस कक्ष में आप की इच्छा हो, आराम करें.”

“जैसा आप उचित समझें.”

अगले दिन गुलाब ने पूछा, “सुगंधा के इंतकाल के चार महीने बाद आप आये थे. कोई विशेष सबब?”

“हाँ. हम अपनी माँ और सुगंधा को भुलाने पर भी उनको नहीं भुला पा रहे हैं. समय काटे नहीं कटता. अगर आप इजाज़त दें तो आपकी महफ़िल में आ जाया करें?”

“ज़हे नसीब, प्रोफेसर साहब. ये तो हमारी खुशनसीबी होगी. मगर आप है शिक्षाविद. लोग आप पर कीचड़ उछालेंगे जो हम बर्दाश्त नहीं कर पायेंगे.”

“मगर संगीत की दुनिया में आपके चरित्र और आपकी कला की बहुत शोहरत और इज्ज़त है. फिर हम पर उँगली क्यों उठेगी?”

“हम दोनों के पेशे के कारण. लोग तो बात का बतंगड़ बना ही डालते हैं ना?”

“ओह! ठीक कहा. देखो गुलाब, लोग भूल जाते हैं कि किसी पर ऊँगली उठाने पर तीन उँगलियाँ उँगली उठाने वाले की ओर होती है.”

“ठीक कहा प्रोफेसर साहब. हो सकता है उन उँगली उठाने वालों में हम भी शरीक हों.”

कटाक्ष सुन कर क्षशाँक एकबारगी सकपका गए थे. मगर दूसरे क्षण ही संभलते हुए बोले, “हाँ गुलाब, हो क्यों नहीं सकते? आखिर हम भी तो इसी संसार के तुच्छ प्राणी हैं. मगर अपवाद भी तो होते हैं.”

“क्या मतलब?”

“अपवाद न होते तो न आप आप होती और न ही हम हम होते और आपके पास आते?”

“ओह! बहुत बहुत शुक्रिया. एक सलाह दें, प्रोफेसर साहब.”

“जी, कहिये. आपका हक है.”

“आप विवाह क्यों नहीं कर लेते?”

सलाह सुन कर क्षशाँक चौंके और मन ही मन बोले कि हर कोई विवाह की सलाह दे देता है. वे इस उलझन में पड़े थे कि उत्तर क्या दिया जाये, तभी गुलाब ने दूसरा प्रश्न दाग दिया था.

वह बोली, “क्या सोच रहे हो?”

“जब सुगंधा बिना विवाह के वर्षों तक मोहब्बत करते हुए जीवन जीती रही तो क्या हम उसकी याद में जीवन नहीं गुजार सकते?”

“मुझे पता है वो आपसे बेइंतहा मोहब्बत करती थी. मगर आपको इस बात का इल्म कैसे हुआ?”

“मरने से कुछ समय पूर्व उसने कहा था, “हमारा अंतिम संस्कार सनातन विधि से कराना. हम मुस्लिम से सनातनी हो गए थे.”

“फिर?”

हमने उससे पूछा था, “कब?”

“जब आप दोबारा मिले थे,” उसने कहा था.

हमने फिर पूछा था, “आपने कभी बताया क्यों नहीं. माँ हमारा विवाह करवा देती.”

“विवाह तो मन का मन से होता है, मित्रश्रेष्ठ. वो हो ही चुका था. फिर ढ़कोसलों की क्या दरकार?” सुगंधा ने कहा था.

“वाह! सुगंधा वाह! क्या सूफियाना इश्क था?” गुलाब ने तारीफ़ करते हुए कहा.

“जानती हो गुलाब कि उनको सुन कर हम भी स्तब्ध रह गए थे. हतप्रभ थे. हैरान थे कि मन ही मन बेइंतहा मोहब्बत करते हुए भी सुगंधा ने हमें कभी अहसास तक नहीं होने दिया था कि वो हमसे मोहब्बत करती है. एक बात बताओगी?”

“पूछो,” गुलाब ने कहा.

“जब सुगंधा मोहब्बत करते हुए दशाब्दियाँ गुजार सकती है तो क्या हम उसकी याद में जीवन नहीं गुजार सकते?”

“माफ करना प्रोफेसर साहब. हम आपकी मोहब्बत पर बिल्कुल शक नहीं करते. मगर यह भी सच है कि स्त्री बिना विवाह के मोहब्बत कर जीवन गुजार सकती है परन्तु पुरुष कदापि नहीं. पुरुष अपनी मोहब्बत को भूल सकता है स्त्री कभी नहीं.”

गुलाब द्वारा पुरुष मानसिकता की समीक्षा सुन कर क्षशाँक भौचक्के रह गए थे. गुलाब ठीक थी. माँ और सुगंधा के जाने के बाद उनका जीवन नीरस हो गया था. उनको उनका अकेलापन बींधता था. निर्जनता उनको काटने को दौड़ती थी.

इसीलिए तो वे गुलाब के पास आये थे.

काफी देर तक क्षशाँक को चुप रह जाना पड़ा था. गुलाब उनको देख कर हल्के हल्के मुस्करा रही थी.

“माफ करना प्रोफ़ेसर साहब. आपकी भावनाओं को आहत करना हमारा मकसद नहीं था. हम जानते हैं कि आप भी सुगंधा को बहुत चाहते थे और आपने भी अपनी मोहब्बत का इज़हार कभी नहीं किया. इसलिए, हम जानती है कि आप उस नामुराद की याद में जीवन गुजार सकते हैं. मगर उस समय और आज के समय में बहुत फर्क आ गया है.”

“वो क्या?” पूछा था क्षशाँक ने.

“उस समय आप दोनों एक दूसरे को देख कर खुश रहा करते थे. वो सूफियाना मिजाज़ की थी और आप भी. ऐसी जोड़ियाँ दुर्लभ हुआ करती हैं.

“शुक्रिया. फिर?”

“कुदरत ने वो खुशी या सूफियाना इश्क अब आपसे छीन लिया है. इसीलिए मशविरा दिया था कि आप विवाह कर लें.”

“मशविरा विचारणीय है. देखते हैं,” कह कर क्षशाँक उठ लिए थे और गुलाब से इजाजत

माँग ली थी.

“नाराज़ होकर न जाइयेगा. हम सुगंधा की जगह तो ले नहीं सकते. सच बात तो यह है हम उसके काबिल भी नहीं हैं. मगर याद रखियेगा कि सुगंधा के बाद हम आपके एकमात्र खैर ख्वाह है,” गुलाब ने मायूस होते हुए कहा था.

“अरे, नाराज़ क्यों होंगे? आप न केवल सुगंधा की राजदां हैं बल्कि हमारी भी भरोसेमंद साथी हैं. अब हम चलते हैं.”

“अब कब आइयेगा?”

“जब याद करोगी.”

“क्यों? अपनी मर्जी से कभी नहीं आइयेगा?”

“आपने कहा था न कि ऊँगली उठेंगी. हमें दुविधा में न डालो.”

“ठीक कहा. हम आपकी खैर ख्वाह हैं. कभी हमारा रुक्का मिले तो उसकी तौहीन न करना.”

“कभी नहीं,” कह कर क्षशाँक उठ खड़े हुए थे, जीने की ओर बढ़े और नीचे उतर गए.

15

घर लौटते क्षशाँक को नीचे उतरते ही रिक्शा मिल गया था. वे उसकी ओर लपके और बोले, “ज़ल्दी चलो.”

रिक्शा आगे बढ़ चला.

अपने झरोखे पर खड़ी गुलाब नम आँखों की कोरों से क्षशाँक को जाते हुए देख रही थी. उनको देख कर वह मंत्रमुग्ध थी.

आज उसे महसूस हुआ था कि मोहब्बत इबादत से कम नहीं. वो तब तक वहीं खड़ी रही जब तक क्षशाँक उसकी आँखों से ओझल नहीं हो गए थे.

उसको उस समय लगा था जैसे क्षशाँक वो उपासक हैं जिसके सामने से विग्रह अकस्मात हटा लिया गया हो या खुद ही लुप्त हो गया हो. और वो खुद उपासक है तथा उसकी आँखों के सामने से उसके अराध्य ओझल हुए जा रहे हों.

उसने गहरी आह भरी और अपने कक्ष में लौट कर औंधे मुँह शैया पर गिर पड़ी. काफी देर तक वो यूँ ही पड़ी रही. उसकी परिचारिका तीन चार बार आकर उसे उठा चुकी थी. मगर वो फिर भी पड़ी रही.

उसे क्या हुआ था और ऐसा क्यों हुआ था, गुलाब खुद नहीं जान पाई थी.

दोपहर तक वो यूँ ही पड़ी रही. परिचारिका कई बार आकर लौट चुकी थी. वह खुद हैरान थी कि उसकी बाई जी को हुआ क्या है?

दोपहर के भोजन का समय हुआ. परिचारिका फिर आई और कहा, “बाई जी उठिए,

भोजन तैयार है.”

“हमारा मन नहीं है. हमें तंग न करो. तुम भोजन कर लो,” कह कर गुलाब ने मुँह फेर लिया.

“आप नहीं उठेंगी और भोजन नहीं करेंगी तो हम भी भोजन नहीं करेंगी,” परिचारिका ने तुरुप का इस्तमाल करते हुए कहा.

तुरुप काम कर गई. मजबूर होकर गुलाब को उठना पड़ा था मगर भोजन बड़े ही अनमने ढ़ंग से किया. भोजनोपरांत वो फिर बिस्तर पर लेट गई.

उधर घर लौटते क्षशाँक ने सुना कि दूर कहीं कोई बंसी बजा रहा है. धुन मधुर थी और कुछ जानी पहचानी लगी थी. धुन दिमाग में उधम मचाये हुए थी. खूब याद किया. मगर कुछ याद नहीं आया कि धुन किस गीत की है. बेकरार होकर उन्होंने अपना सिर झटक दिया था.

मस्तिष्क में बंसी की धुन अब भी धमाल मचाये हुए थी. बेचैन हो कर उन्होंने रिक्शा चालक को कहा, “बंसी की धुन सुन रहे हो न दोस्त? कितनी मीठी है?”

“हाँ साब. एक बूढ़ा है. वो एक दम मस्त है, साब. यदा कदा पार्क में बैठ कर बजाया करता है. न खाने की सुध न पहनने की. अक्सर फटे कपड़ों में रहता है. लोग उसे पगला बाबा कहते हैं,” रिक्शा चालक ने विस्तारपूर्वक जानकारी देते हुए कहा.

“ये धुन कुछ सुनी सुनी सी लगती है.”

“हाँ साब. भाभी फिल्म का ये वही गीत है जिसके बोल हैं चल उड़ जा रे पंछी अब ये देश हुआ बेगाना.”

“ओह! याद आया. शुक्रिया,” क्षशाँक ने आभार जताते हुए कहा.
याद आने पर वे मन ही मन गुनगुनाने लगे,

“तूने तिनका तिनका चुन कर नगरी एक बसाईं,
बारिश में तेरी भीगी काया धूप में गरमी छाई,
गम ना कर जो तेरी मेहनत तेरे काम ना आई,
अच्छा है कुछ ले जाने से दे कर ही कुछ जाना,
चल उड़ जा रे पंछी.”
गुनगुनाते गुनगुनाते उन्होंने आह भरी और बोले, “उड़ गए सभी पंछी. न जानें वो कभी लौटेंगे भी या नहीं?”

रिक्शा चालक बोला, “साब, कुछ कहा क्या?”

“हाँ, हम पूछ रहे थे कि बंसी बजाने वाले ये बाबा किस पार्क में मिलते हैं?”

“साब, सबसे बड़े पार्क में.”

“किस समय?”

“समय का कोई हिसाब नहीं. बोला न कि पगला बाबा मनमौजी है साब. जब मन करता है, आ जाता है. इसी गीत को बंसी पर बजाने लगता है. फिर उसे कोई सुध बुध नहीं रहती.

बजाता रहता है.”

“अच्छा! गीत भी तो अच्छा है.”

“हाँ साब. मगर वो किसी से बात नहीं करता. साब. अगर कोई उससे बात करने की कोशिश भी करे तो भाग खड़ा होता है. मगर आप क्यूँ पूछ रहे हो?”

“बस यूँ ही. बंसी अच्छी बजाते हैं,” कह कर क्षशाँक चुप हो गए थे. दिमाग अब भी अशांत था.

“साब, जिंदगी भी क्या चीज़ है? लगता है पगला बाबा का सब कुछ लुट पिट चुका है,” रिक्शा चालक बोला.

“हाँ, ये आपने ठीक कहा. बाबा इस समय पार्क में हैं. क्या आप मुझे उधर ले चल सकते हो?”

“क्यों नहीं साब?”

“तो चलो. आओ, पगला बाबा को हम भी देख लें. आप वहाँ इंतज़ार कर लेना. उसके बाद हमें घर छोड़ देना. जो मांगोगे, दे देंगे.”

“ठीक है साब,” खुश होते हुए रिक्शा चालक बोला.

थोड़ी देर बाद दोनों बड़े पार्क में थे.

पगला बाबा काठ की बेंच पर बैठे तन्मय होकर बंसी बजाए जा रहे थे. होठों पर बाँसुरी और आँखें बंद. क्षशाँक ने देखा कि बाबा के कदम बंसी की धुन पर हल्के हल्के थिरक रहे हैं.

क्षशाँक उनकी ओर बढ़े.

करीब तीन कदम की दूरी रह गई थी कि बाबा को पदचापों की आहट हुई, उन्होंने आँखें खोली, क्षशाँक को करीब आते देखा, झटके के साथ उठ खड़े हुए और दूसरी दिशा की ओर भाग चले.

“बाबा, रुको तो,” क्षशाँक ने अनुनय करते हुए कहा. मगर सुनने वाला वहाँ कोई नहीं था. बाबा भागते भागते पार्क के बाहर ओझल हो गए थे और क्षशाँक ठगे से खड़े रह गए थे.

रिक्शा चालक हँसा और बोला, “बाबू जी, मैं बोला था न कि पगला बाबा किसी से बात नहीं करता. आपने उसके मस्ती के लम्हों में रुकावट डाल दी. अच्छा नहीं हुआ. अब न जानें वो बेचारा कहाँ कहाँ भटकता फिरेगा?”

“हाँ, आप ठीक कहते हो. अनजाने में हम से पाप हो गया है. यहाँ आराम से बंसी बजा रहा था. मुझे उनके आराम और मस्ती के क्षणों में खलल नहीं डालनी चाहिए थी?” पछताते हुए क्षशाँक ने कहा.

“बाबू जी, कोई बात नहीं. आप तो कुछ अच्छा ही करना चाहते थे. चलिए, आपको घर छोड़ दूँ.”

घर पहुँचे.

रिक्शा चालक को उसका भाड़ा और सौ रूपये देते हुए क्षशाँक बोले, “अगर बाबा आपको

इधर उधर घूमते मिल जाएँ तो उनको भोजन करा देना.”

“अगर नहीं मिले तो?”

“कोई बात नहीं. जब भी वे मिलें तब भोजन करा देना. न मिलें तो भी कोई बात नहीं, ये रूपये आप अपने पास रख लेना,” क्षशाँक ने कहा.

रिक्शा चालक विस्फारित आँखों से क्षशाँक की ओर देख रहा था. जो उसने सुना था, उस पर उसे भरोसा नहीं हो पा रहा था.

फिर वो मुस्कराया और बोला, “जरूर बाबू जी, ज़रूर. अगर बाबा मिले तो ज़रूर खिला दूँगा. आप बहुत अच्छे हैं. मगर बाबू जी, आप किस किस को खिलाइयेगा?”

“एक को ही सही. किसी की भूख तो मिटे,” कह कर क्षशाँक अपने घर की ओर बढ़ गए थे और उधर रिक्शा वाला किसी और सवारी की तलाश में निकल लिया था.

16

क्षशाँक घर पहुँचे. सहायिका और उसका बच्चा बाहर बैठे इंतज़ार कर रहे थे. जैसे ही उन्होंने क्षशाँक को देखा, उनके चेहरे खिल उठे.

उनको प्रसन्न देख कर क्षशाँक को लगा था कि वो नाहक ही परेशान हुआ जा रहा है. और भी तो हैं इस जमाने में जो उसकी परवाह करते हैं.

“ओह! आप कब आये?” क्षशाँक ने पूछा.

वे जानते थे कि वे अपने नियत समय पर आ गए होंगे. मगर अपराध भावना से ग्रस्त होने के कारण उनको और कुछ सूझा नहीं तो वह बेतुका प्रश्न कर बैठे थे.

“अपने नियत समय पर, सर .”

“मुझे अफ़सोस है कि आपको इंतज़ार करना पड़ा. वापिस चले जाते.”

“नहीं सर , मैं अपने कर्तव्य से विमुख कैसे हो सकती हूँ? चाबी दीजिए. क्या बाहर खड़े खड़े ही बातें करते रहेंगे?”

झेंपते हुए क्षशाँक ने चाबी उसके हाथ में देते हुए कहा, “आगे से ऐसा कभी नहीं होगा.”

“आप तो नाहक ही दुखी हो रहे हैं. आप के यहाँ बैठने की जगह तो है. इसलिए, इंतज़ार करना मुश्किल न था.”

“क्या मतलब?”

“सर, आप के यहाँ काम शुरू करने से पहले एक लाला के यहाँ काम करना पड़ा था. न आराम करने की जगह न बैठने की. शुक्र है माया का कि उसने आपका पता दिया था और मुझे उस संकट से मिली थी मुक्ति.”

ताला खुला. सब अंदर गए.

सहायिका ने पूछा, “खाना बनने में तो वक्त लगेगा सर . तब तक कुछ ले लें. चाय या

कॉफी?”

“जो आपकी इच्छा हो, बना लें. हम वही ले लेंगे. हाँ, आनंद को दूध दिया करें. बच्चों को चाय कॉफी ठीक नहीं. उसकी जगह दूध दिया जाना चाहिए.”

“सर, उसकी आदत खराब हो जायेगी. कभी दूध नहीं मिला तो मुश्किल होगी,” सहायिका ने कहा.

“उसके लिए दूध की कमी कभी न होगी. दूध ही दिया करें. दूध से बच्चों की हड्डियों का अच्छा विकास होता है.”

सहायिका कुछ नहीं बोली और चुपचाप रसोई की ओर बढ़ गई. उसके जाने के बाद उनको याद आया कि बोर्नविटा भी रखा हुआ है. जब सुगन्धा बीमार थी तो उसके लिए लाये थे. वे उठे और रसोई की ओर बढ़ गए.

बोर्नविटा का डिब्बा दिखाते और देते हुए बोले, “मीरा, आनंद के दूध में एक चम्मच बोर्नविटा मिला दिया करें. जब ये खत्म होने को हो तो बता देना, दूसरा डिब्बा ला देंगे.”

“जी सर ,” तिरछी और खोजी नज़र से देखते हुए मीरा ने कहा.

बोर्नविटा का डिब्बा देकर क्षशाँक को ऐसी खुशी हुई जैसे वो अपने किसी सगे के लिए अपना धर्म निभा रहे हों. माँ और सुगंधा की रिक्तता भरती सी नज़र आई थी. वास्तव में रिक्तता भरी या वो उनका वहम था, वे जान न सके.

मगर मीरा की तिरछी और खोजी नज़र उनको अंदर तक बींध गई थी. उनको ऐसा लगा जैसे उसकी वो तिरछी नजर उनसे पूछ रही हो, “इतनी मेहरबानी किस मकसद से है, मेरे मेहरबान?”

उसी समय क्षशाँक का स्वमिभान जाग उठा था.

उनके स्वाभिमान ने उन्हें धिक्कारा जैसे कह रहा हो, “बरखुरदार, भूल गए स्त्री की छह इन्द्रियाँ होती हैं. कुदरत उसे छठी इंद्री सिर्फ पुरुष की नज़र को ताड़ने हेतु देती है.”

क्षशाँक ने मन ही मन माना कि अनजाने में उससे अति हो गई है. उसने सोचा कि परोपकार बहुत हो चुका. अब और नहीं. ऐसे परोपकार का क्या लाभ जो परोपकार करने वाले का ही हाथ जला कर राख कर दे. उसके चरित्र पर उँगली उठा दे.

क्षशाँक सोच रहे थे, “कितना दुष्कर है ये तय करना कि उपयुक्त क्या है और अनुपयुक्त क्या? ठीक क्या है और क्या है गलत? इसी प्रकार के चक्रव्युह में वे अनेक बार पहले भी फँसे थे. उस समय माँ ने उस चक्रव्युह से मुझे मुक्त किया था. मगर हम उस चक्रव्युह मुक्ति से भी कोई सबक नहीं सीख सके. आज माँ नहीं हैं, हमें इस ताज़ा चक्रव्युह से निजात कौन दिलाएगा?”

सहायिका कॉफी रख गई थी. मगर वे अपने खयालों में इतना खोये हुए थे कि उनको पता तक नहीं चला कि वो कॉफी कब रख गई थी? इसलिए, वे कॉफी लेना भी भूल गए थे.

थोड़ी देर बाद सहायिका मग उठाने आई तो देखा कि कॉफी यूँ की यूँ पड़ी है. वो यह देख कर हैरान थी कि कॉफी के शौक़ीन सर ने आज अपना मनपसंद पेय कैसे छोड़ दिया?

“सर, ये कॉफी तो ठंडी हो गई है. खाना बनने में अभी देर है. दूसरी बना कर लाती हूं.”

क्षशाँक की तंद्रा टूटी. बोले, “जैसी आपकी इच्छा.”

“आप ठीक तो हैं न, सर?”

“हाँ, क्या हुआ है हमें?”

“ये तो आप जानो. आपने कॉफी नहीं पी. और अब कह रहे हो जैसी आपकी इच्छा. हम आपकी नौकरानी हैं. इच्छा आपकी चलेगी या हमारी?”

“आगे से अपने आप को नौकरानी न कहना. जाओ, कॉफी बना लाओ,” क्षशाँक ने रुष्ट होते हुए कहा.

“जी, ठीक है,” क्षशाँक के तीखे तेवर देखते हुए सहायिका सकपका गई थी.

हड़बड़ा कर वह रसोई की ओर भाग गई.

क्षशाँक सोच रहे थे, “हमें हुआ क्या है? ये झुंझलाहट क्यों? ये हमारा अपराधबोध है या कुछ और?”

वे आत्ममंथन में लगे थे कि तभी बालक आनंद कॉफी का मग लेकर आया और बोला, “अंकल, आपकी कॉफी.”

“तुम भी पीओगे?”

“अम्मा ने कॉफी पिला दी है. ये आपकी है,” आनंद बोला.

“वो कॉफी नहीं, बोर्नविटा मिला दूध होगा,” क्षशाँक ने कहा.

“रंग तो कॉफी जैसा था.”

“हाँ. वो कॉफी बच्चों के लिए होती है. आप रोज वहीं कॉफी पीना.”

खाना बना. सहायिका ने परोसा.

“बच्चों के हाथ चाय, कॉफी कभी नहीं भेजनी चाहिए. वे गिर सकते हैं. हाथ पाँव पर गर्म चाय कॉफी गिरने से वे झुलस सकते हैं,” क्षशाँक ने कहा.

“आपका वो रूप देख कर हम डर गए थे.”

“कौन सा रूप?”

“तीखे तेवर वाला.”

क्षशाँक ठहाका लगा कर हँस पड़े.

“हँसे क्यों?”

“हम कोई भूत है जो आप डर गई थी?”

“भूत से नहीं डरती. मगर क्रुद्ध पुरुष से बहुत अधिक डरती हूँ.”

“मगर हम आप पर नहीं, अपने आप पर क्रुद्ध थे.”

“वो क्यों?”

“आपने हमारी बदनीयती जो पकड़ ली थी.”

“छमा चाहती हूँ, सर. वैसी भूल फिर कभी नहीं करुंगी,” पैर पकड़ते हुए सहायिका बोली.

“अरे, अरे, ये क्या कर रही हो?”

“आपसे छमा की भीख मांगती हूँ, सर. वायदा करती हूँ कि फिर वैसी भूल कभी न होगी,” पाश्चाताप करते हुए सहायिका बोली.

“अच्छा जाओ और भोजन कर लो.”

“आपने छमा कर दिया न?”

“छमा नहीं, क्षमा.”

“आप तो समझ गए हैं न?”

“हाँ, समझ गए थे. शब्दों का उच्चारण ठीक किया करो. जाओ, क्षमा कर दिया है. अब भोजन कर लो.”

“सर, ये हमारे ग्रामीण आंचल का असर है. ‘क्ष” को ‘छ’ बोलते हैं.”

“हाँ, क्षेत्र की बोली, पहनावा, रस्म-ओ-रिवाज़ का असर सदा ही रहता है. मगर कोशिश करो कि शुद्ध उच्चारण हो. उससे आपके बेटे पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा.”

“सर, आदत आसानी से छूटती कहाँ है? फिर भी कोशिश करेंगे क्योंकि आप टोकते रहते हैं. आज तक किसी ने यूँ मार्गदर्शन नहीं किया जैसे आप किया करते हैं.”

तभी क्षशाँक को एक प्रकरण याद आ गया जो उनके अधीनस्थ एक शिक्षक के उच्चारण से जुड़ा था. बोझिल परिवेश को हल्का फुल्का करने हेतु उन्होंने किस्सा यूँ सुनाया.

“एक छात्र बहुत उदंड था. संस्कृत के प्रवक्ता जो बिहारी थे, को बहुत तंग करता था. एक दिन क्रोध में आकर संस्कृत प्रवक्ता ने उसे कहा कि कच्छा से बाहर हो जाओ. लड़का तो बदमाश था ही. वो बोला सर, अगर मैं कच्छा से बाहर हो गया तो आप को कक्षा से बाहर भाग जाना पड़ेगा. सुन कर प्रवक्ता आग बबूला हो गए और उस छात्र को पकड़ कर हमारे पास लाये और शिकायत की. उनकी शिकायत सुन कर हम मुस्कराए, लड़के को डाँटा और बाहर भेज दिया. जब छात्र बाहर चला गया तो संस्कृत प्रवक्ता को हमने समझाया कि कच्छा क्या होता है और कक्षा क्या?”

प्रकरण सुन कर सहायिका पल्लू में मुँह छिपा कर रसोई की ओर भाग गई और क्षशाँक ने राहत की साँस ली थी.

शंका के जो काले बादल स्त्री पुरुष के बीच छा गए थे, वे अब छट गए थे. स्त्री सहज हो गई थी और पुरुष का स्वाभिमान पुन: स्थापित हो गया था. मगर उसके बाद भी पुरुष सहज नहीं हो पाया था.

“स्त्री कितनी लोचशील होती है. काश! पुरुष भी उतना ही लोचशील होता,” मन ही मन

17

यद्यपि मीरा ने क्षमा माँग ली थी मगर उसकी वो क्षमा भी क्षशाँक को काफी देर तक चुभती रही थी. रोम रोम बींध रही थी. उनको अब मीरा का सारा दिन उन्हीं के पास रहना अनुपयुक्त लगने लगा था.

अगले दिन उन्होंने मीरा से पूछा, “आप कितना पढ़ी लिखी हैं, मीरा?”

“सर, बहुत अधिक नहीं. स्नातक पूरी कर पाई थी कि हमारा विवाह कर दिया गया था. आगे पढ़ना चाहती थी. मगर विवाह के कारण पढ़ाई छूट गई थी.”

“अरे, विवाह के बाद भी तो पढ़ सकती थी. कोशिश क्यों नहीं की?”

“सर, एक वर्ष में ही आनंद का जन्म हो गया था. जिम्मेवारी बढ़ गई थी. पढ़ नहीं पाई.”

“कोई बात नहीं. अगर हमारी मानो तो आप दो काम करें.”

“बताइए सर. आपके कहे को तो हम कभी न टालें.”

“आनंद को हमारे पास छोड़ कर और दोपहर खाना खिला कर आप घर लौट जाया करो. छोटे बच्चों को ट्यूशन पढ़ाओ और खुद भी पढ़ो. स्नातक से आगे की पढाई पूरी करो. उससे आपकी आमदनी बढ़ेगी और आपकी अधूरी शिक्षा भी पूरी हो जायेंगी. कहीं कठिनाई आएगी तो हम मदद करेंगे,” क्षशाँक ने सलाह देते हुए कहा.

क्षशाँक का इतना कहना था कि मीरा बोली, “सर, इसका मतलब यह हुआ कि आपने हमें माफ नहीं किया. पढ़ाई के बहाने हमें दूर करना चाहते हो.”

क्षशाँक को इतनी बेबाक प्रतिक्रिया की उम्मीद कतई नहीं थी. मीरा के सटीक अंदाज़ को देख कर भी वे हैरान थे. उन्होंने खुद भी महसूस किया था कि अब असलियत को छुपाना ठीक नहीं होगा. बेहतर यही होगा कि सच्चाई को स्वीकार कर लिया जाये.

“मीरा, जब आपने खुद महसूस कर लिया था उसके बाद क्षमा की तो कोई बात ही नहीं रही.”

“फिर जाने की क्यों कह रहे हैं, सर?”

“मर्यादाओं की रक्षार्थ. हमारे प्रस्ताव से कई लाभ होंगे. आपकी और हमारी प्रतिष्ठा बची रहेगी. आपकी आय बढ़ेगी. और शिक्षा भी पूरी हो जायेगी.”

“यानि आपने अपने आप को हम से दूर करने का पूरा इंतजाम कर लिया है. और बहाना भी ढूँढ़ लिया.”

“अरे दूर कहाँ? रोज तो मिलते रहेंगे.”

“ठीक है, सर. जैसी आपकी आज्ञा.”

क्षशाँक चुप रहे.

“आपने कुछ उत्तर नहीं दिया.”

“जब आपने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया तो उत्तर क्या देते?”

“शाबाशी तो दे सकते थे.”

“ओह!”

“आनंद को लेने तो हमें आना ही पड़ेगा,” उसने कहा.

“नहीं, शाम को हम सैर को निकलेंगे तो आपके घर की ओर आ जाया करेंगे. आनंद को हम छोड़ दिया करेंगे.”

“अंकल, में खुद भी जा सकता हूँ,” आनंद ने अपनी आत्मनिर्भरता का दावा करते हुए कहा.

“रात को पेशाब करने तो अकेले जाते नहीं हो. यहाँ से अकेले जाने की डींग मार रहे हो,” मीरा ने आनंद से कहा.

“रात में तो अँधेरा होता है, मुझे डर लगता है,” आनंद ने अपनी सफाई देते हुए कहा.

“बच्चों को शाबाशी देनी चाहिए. हौंसला बढ़ाना चाहिए. वैसे फ़िक्र न करो, हम खुद शाम को छोड़ आया करेंगे. सैर की सैर और आनंद अपनी अम्मा की गोद में,” क्षशाँक ने मीरा से कहा.

“यानि हमें घर से निकालने का आपने पक्का इरादा और इंतजाम कर लिया है.”

“अरे, कैसी बात करती हो मीरा? आप समझदार हैं. फिर भी जिद किये जा रही हो,” क्षशाँक ने हल्की डपट लगाते हुए कहा.

मीरा ने कोई टिप्पणी नहीं की और भोजन तैयार करने के लिए रसोई की ओर बढ़ गई. क्षशाँक आनंद के साथ बतियाने लगे.

“आज विद्यालय क्यों नहीं गए?”

“अंकल, कैसे बुद्धू हो,” बच्चा बोला.

“बुद्धू बेटे का अंकल हूँ न?”

“हम बुद्धू क्यों? हमें तो पता है कि आज रविवार है और रविवार खेलने कूदने का दिन होता है,” आनंद ने कहा.

बुद्धू शब्द सुन कर मीरा दौड़ी आई और डपटते हुए बोली, “कितनी बार समझाया है कि बड़ों से तमीज से बात करनी चाहिये. बड़ों को बुद्धू बोलते हैं क्या? चलो, चरण छू कर छमा मांगो.”

“ही, ही, ही, ही, अंकल, मम्मी फिर भूल गई. क्षमा को छमा बोल रही हैं. आपने कितना समझाया, फिर भी बुद्धू की बुद्धू बनी हुई हैं,” आनंद बोला.

आनंद की वाचालता कहें या निर्भीकता, को देख कर क्षशाँक हैरान हो गए थे. उन्होंने मन ही मन सोचा कि छह वर्ष का बालक और इतना निर्भीक!

“आपकी अम्मा ने कहा था न कि बड़ों से सम्मान के साथ बात करनी चाहिए. देखो आपकी अम्मा हमें सर बोलती हैं. वे हम से छोटी हैं. फिर भी हम उसका नाम भी आदर के साथ लेते हैं. समझ गए न?”

बच्चा जितना वाचाल था उतना ही विनम्र. जैसे ही क्षशाँक ने उसको समझाया, तुरंत चरण छू कर और कान पकड़ कर क्षमा माँग ली.

“और अपनी अम्मा से?”

“ओह! भूल गया,” कह कर मीरा के चरण छुए और कान पकड़ कर माफी माँग ली.

“बदमाश कहीं का,” कह कर मीरा रसोई की ओर भाग गई.

“अंकल, देखो, अम्मा मुझे बदमाश कह रही हैं. बदमाश कहना ठीक है क्या?”

“वे प्रेम से डाँट रही थी. वैसे भी बड़ों की बात का बुरा कभी नहीं मानना चाहिए,” क्षशाँक ने कहा.

क्षशाँक ने कह तो दिया था मगर खुद सोचने लगे कि छिछली राय ये न करो, वो करो, ये न बोलो, वो बोलो, यूँ न बोलो, यूँ बोला करो आदि काम करती हैं क्या? नीतिगत शिक्षा तो गर्भ से लेकर श्मशान तक देते रहना होता है. तभी मानसिकता में बदलाव आया करता है. माता, पिता, शिक्षकों, समाज और उसके पूरे नेतृत्व को सच्चरित्र होना होता है जो आज नहीं हैं. फिर बच्चों में सुधार होगा कैसे?

तभी मीरा भोजन के लिए बुलाने आ गई. भोजन वे रसोई में नीचे बैठ कर ही किया करते थे.

मीरा ने क्षशाँक को गंभीर मुद्रा में देखा और बोली, “कोई नई समस्या आई है क्या, सर?”

“नहीं तो.”

“फिर चेहरा क्यों लटका हुआ है?”

“पहले भोजन बाद में बातचीत,” क्षशाँक ने कहा, सोफे से उठे और रसोई में जाकर आसन पर बैठ गए. दो थाली लगी थी. क्षशाँक ने कहा कि मीरा अपनी थाली भी लगा लो.

“हम बाद में करेंगी. आप करें.”

क्षशाँक और आनंद ने भोजन किया और बाहर आ गए.

18

थोड़ी देर बाद मीरा आई और बोली, “अब बताएं कि आप गंभीर क्यों थे?”

“अरे कुछ खास नहीं. बच्चों के सामने हमें अच्छा प्रतीक प्रस्तुत करना चाहिए. नसीहत की बजाय वे बड़ों को देख कर ही अधिक सीखा करते हैं,” क्षशाँक ने कहा.

“क्या मतलब?”

“उनको या उनके सामने कोई अपशब्द नहीं बोलना चाहिए. अच्छी अच्छी बातें करनी चाहियें. उसी से वे अच्छी शिक्षा ले पायेंगे. अच्छे संस्कार पनपेंगे. केवल सलाह देने से काम नहीं चला करता या उस सलाह का बहुत कम असर हुआ करता है.”

“ओह! समझी. आगे से हम भी ध्यान रखेंगे,” सहमत होते हुए मीरा ने कहा.

“अति उत्तम.”

“रसोई का काम निपटा दिया है. धोने को कोई कपड़े है क्या?”

“नहीं.”

“नहाते वक्त आप अपने कपड़े स्नानागार में ही छोड़ दिया करें. हम धो दिया करेंगी.”

“अरे नहीं, अम्मा से हमारी पिटाई करानी है क्या?” क्षशाँक ने हँसते हुए कहा.

“क्या मतलब?”

“अरे अम्मा जी ने ही ये आदत डाली थी. अब वो न छूटेगी.”

“तो अब मैं जाऊं?”

“आपकी इच्छा.”

“अरे वाह! एक ओर तो घर से निकालने की तैयारी की हुई है और दूसरी ओर हमारी इच्छा पर छोड़ रहे हैं?”

“हमारा कहना है कि आज हम एक बोर्ड बनवा देते है जिस पर ट्यूशन की सूचना होगी. उसको देख कर पाँच-सात दिन तो बच्चों को आने में ज़रूर लगेंगे. सात-आठ दिन आप यहीं रुक सकती हैं,” क्षशाँक ने कहा जिससे मीरा को लगे कि वे उसे भगाना नहीं बल्कि उसका भला ही चाहते हैं.

“जी, शुक्रिया,” मायूस होते हुए मीरा ने कहा.

“उसके बाद आपका वहाँ रहना ज़रूरी हो जायेगा. कोई बच्चा कुछ पूछताछ करना चाहेगा तो आपको जानकारी देने हेतु वहाँ रहना ज़रूरी हो जायेगा,”

“जी, ठीक है. मैं कल के लिए चावल दाल साफ़ कर लेती हूँ. और कोई काम हो तो बता दीजियेगा.”

यह कह कर मीरा रसोई की ओर बढ़ गई.

“ठीक है. अरे आनंद, आज आप कोई भी पुस्तक नहीं लाये. अब क्या करोगे? चलो, साँप-सीढ़ी का खेल खेलते हैं. मेरे साथ खेलोगे या अपनी अम्मा के साथ?” क्षशाँक ने कहा.

“अम्मा बेईमानी करती हैं.”

“चल हट. बदमाश कहीं का,” रसोई से ही मीरा बोली.

“देखो अंकल, अम्मा ने मुझे फिर बदमाश कहा.”

“वे हँसी कर रही हैं.”

“फिर मैं भी हँसी किया करूँ, अंकल?”

“हे भगवान, ये लड़का है या थानेदार?” कहते हुए मीरा रसोई से बाहर आई और ठहाका लगा कर हँस पड़ी.

क्षशाँक और मोहन हँसे और साँप-सीढ़ी खेलने लगे.

थोड़ी देर बाद मीरा लौट आई.

“लो मीरा, अब आप दोनों खेलो. हम कुछ काम कर लेते हैं.”

“आपको क्या काम है, सर?”

“अरे मीरा, कोई पाठ पढ़ाने से पूर्व हमें भी पढ़ना पड़ता है. छात्र न जानें क्या प्रश्न कर बैठें? इस लिए शिक्षकों को भी तैयार रहना होता है. जब आप पढ़ाने लगोगी तो आपको भी तैयार रहना होगा.”

“ओह!”

“आप कौन कौन से विषय पढ़ाओगी?”

“सर, कच्छा पाँच तक सभी विषय पढ़ा सकती हूँ.”

“अरे बाबा कच्छा नहीं कक्षा.”

“ओह! माफ करना सर फिर भूल हो गई.”

“ठीक है. कल आपके लिए गणित और अंग्रेजी की पुस्तकें खरीद देंगे. सात-आठ दिन आपके पास होंगे. उस दौरान आप तैयारी कर लेना. आनंद! रविवार को आप भी अपनी कोई किताब लेकर आया करो.”

“ठीक है, सर,” दोनों ने हामी भरते हुए कहा.

अगले दिन कक्षा दो से पाँच तक की गणित और अंग्रेजी की पुस्तकें खरीद दी गई और मीरा तैयारी में जुट गई.

एक बोर्ड बनवा दिया गया जिस पर लिखा था गणित और अंग्रेजी की कक्षा, दो से पाँच तक की ट्यूशन हेतु मोबायल नम्बर पर संपर्क करें.

मीरा ने बोर्ड अपने घर के सामने लगा दिया. तीन दिन बाद ही पूछताछ हेतु फोन आने लगे.

क्षशाँक ने देखा कि जैसे ही फोन की घंटी बजती थी, मीरा की आँखें चमकने लगती. इससे उसका आत्मविश्वास बढ़ता चला गया और क्षशाँक को आंतरिक आनंद की अनुभूति होती चली गई.

“आंतरिक आनंद का आनंद कुछ और ही होता है?” क्षशाँक ने सोचा.

उन्हें यह भी महसूस हुआ कि जैसे उनको अपने जीवन हेतु एक मकसद और मिल गया है. मकसद हो तो जीवन सरस हो जाता है. उसमें फिर से गति आ जाती है.

सुगंधा के जाने के बाद उनको उस दिन पहली बार ये अहसास हुआ था कि उनके जीवन

में जो रिक्तता आ गई थी, वो अब भरने लगी है. अब वो अकेले नहीं है. कोई हैं जो उसके साथ हैं.

मीरा ट्यूशन पढाने लगी थी, स्वाध्याय के अतिरिक्त क्षशाँक आनंद का मार्ग दर्शन करते रहते और आनंद अपनी पढ़ाई में आगे बढ़ने लगा था.

जब इंसान व्यस्त हो जाता है तो वो अपने कष्ट भूल जाता है. अपने काम में इतना खो जाता है कि और कुछ याद करने को रह ही नहीं जाता. न बीता हुआ कल याद आता है न आगामी कल की फ़िक्र सताती है.

न अतीत न भविष्य, वह अपने आज में जीने लगता है. “आज में जीना ही तो तो मुक्ति है,” सोचते हुए क्षशाँक ने अपने आप से कहा था.

मीरा और आनंद, दोनों प्रगति पथ पर अग्रसर थे. आनंद तो बालक ठहरा, उसे तो अल्हड़ और बिंदास होना ही था.

मगर क्षशाँक ने देखा कि जैसे जैसे मीरा की आय बढ़ रही थी, उसके मुख मंडल की आभा भी बढ़ रही थी. अब उस पर मजबूरी नहीं, आत्मविश्वास की झलक झलकने लगी थी. मायूसी की जगह उल्लास ने ले ली थी.

उस बदलाव को देख कर क्षशाँक अंदर ही अंदर बहुत खुश था. जो कुछ वह देख रहा था, वह उसे न केवल चकित करने के लिए काफी था बल्कि आंतरिक खुशी के लिए भी काफी था.

दोपहर का भोजन हो चुका था.

एक दिन जब मीरा घर के लिए लौटने लगी तो उसने कहा था, “सर, मैं आपका ऋण कैसे चुकाऊँगी? आपने मेरे जीवन में जो उजाला भरा है, वह क्रांति से कम नहीं. वह मुझे विस्मित करता रहता है. यकीन होते हुए भी अपने ऊपर यकीन नहीं होता.”

सुन कर क्षशाँक मुस्करा दिया था और बोला, “मीरा, ये आपकी मेहनत का नतीज़ा है. जहाँ तक ऋण का ताल्लुक है, सखाभाव अपने आप ही ऋणमुक्त कर देता है. स्नेह बना रहे.”

“फिर भी?”

“फ़िक्र न करो. मौका भी मिल जायेगा,” क्षशाँक ने कहा.

19

शून्य का मिलन शून्य से हो जाए तो मुक्ति मिल जाए. मगर संसार में रहते हुए यह कहाँ संभव हो पाता है? शून्य और शून्य के बीच ही तो संसार का वजूद है. और संसार का अर्थ है काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह; और माया जिससे कोई भी नहीं बच पाया.

काम यानि वासना. यही वासना शून्य को शून्य से मिलने नहीं देती. वासना दो शून्यों के बीच बाधा बनी रहती है. दूसरे छोर पर बसे वृहद शून्य का तो किसी को ज्ञान नहीं मगर यह निश्चित है कि इस छोर पर जो शून्य है, उसे वासना उलझाये रखती है. इसी वासना ने शून्य

विश्वामित्र को वृहद शून्य से वंचित कर दिया था और मिलने नहीं दिया था.

वे भी भटक गए थे.

“ऋषिवर की तुलना में हम तो नाचीज़ हैं. फिर शून्य का शून्य से मिलन हो तो हो कैसे?” मन ही मन में क्षशाँक बुदबुदाए थे.

क्षशाँक इसी उलझन में फँसे थे कि उनको पगला बाबा की पुन: याद आ गई. उन्होंने चुपचाप तय किया कि वे बाबा से एक बार फिर मिलेंगे और जानने की कोशिश करेंगे कि उनको क्या गम है?

आनंद स्कूल गया हुआ था और मीरा लौट गई थी. उन्होंने सोचा कि पार्क की ओर जाया जाये. हो सकता है पगला बाबा मिल जाएँ.

वे उठे और बड़े पार्क की ओर चल पड़े. जैसे जैसे वे पार्क के नज़दीक पहुँचते गए, बाँसुरी की धुन सुनाई देने लगी थी जो संकेत कर रही थी कि जिसकी टोह में वे निकले हैं, वे मिल जायेंगे.

रिक्शा वाले ने क्षशाँक को बताया था बाबा किसी से बात नहीं करते. इसलिए उन्होंने तय किया कि यह कोशिश की जाए कि बाबा उसको अपने पास आते देख ही न सकें.

अत: छुपते छुपाते क्षशाँक उनके पीछे पहुँचे और बोले, “बाबा, प्रणाम.”

प्रणाम सुनते ही बाबा भाग खड़े हुए. क्षशाँक कहते रह गए, “बाबा, रुको तो. हम आपके बेटे हैं और आपके लिए कुछ लाये हैं.”

मगर वे नहीं रुके.

भागते भागते पार्क से वे वैसे ही बाहर हो गए जैसे पहले हुए थे; और इधर क्षशाँक मायूस हो गए. थक हार कर वे अपने घर की ओर लौट चले. घर पहुँचे. थोड़ी देर बाद ही आनंद स्कूल से लौट आया.

“बेटा, आप खाना खा लो.”

“उसके बाद?”

“जो आप कहोगे,” क्षशाँक ने कहा.

आनंद खिल खिल कर हँसने लगा. उसने भोजन किया. फिर बोला, “अब बताओ अंकल. अब क्या करूँ?”

“अब आप अपना गृहकार्य कर लो. कल रविवार है. बड़े पार्क में घूमने चलेंगे.”

“अम्मा को भी ले चलोगे न?”

“वे चलेंगी तो हमें क्या एतराज़? वहाँ बाँसुरी बजाते एक बाबा मिल सकते हैं. उनसे दोस्ती करोगे?”

“जरूर अंकल, ज़रूर.”

आनंद काम करने लगा और क्षशाँक योजना बनाने लगे कि आनंद को उनके पास कैसे

भेजना है और उससे बाबा को क्या कहलवाना है? उनका खयाल था कि हो सकता है बच्चे को देख कर वे खुश हों और भागें नहीं.

जब मीरा को ज्ञात हुआ तो उसने कहा कि हम भी चलेंगे. उसको भी क्षशाँक ने समझा दिया कि बाबा का विरोध करने की बजाय उनको अपना बनाना है.

दो चार सवाल जवाब के बाद मीरा भी समझ गई कि हालातों के अनुसार उसे क्या करना है?

क्षशाँक का अनुमान ठीक निकला. जब आनंद बाबा के निकट गया और उनको चाकलेट दी तो वे मुस्कराए और बोले, "बेटा, तुम खाओ."

"बाबा, ये चाकलेट मैं आपके लिए लाया हूँ. मेरे पास दूसरी है," ये कह कर आनंद उनकी बगल में बेंच पर बैठ गया और चाकलेट खाने लगा.

20

आनंद को चाकलेट खाते देख कर बाबा ने भी अपनी चाकलेट में दाँत गड़ा दिये और खाने लगे.

"अकेले आये हो क्या?"

"नहीं तो, मेरी अम्मा भी साथ हैं."

"वे कहाँ हैं?"

"उधर देखो. वे घूम रही हैं."

"ओह. उसे बुलाओ तो."

आनंद ने अपनी अम्मा को इशारा किया और बोला, "ठीक है बाबा. एक बात कहें?"

"बोलो बेटा."

"अम्मा और मुझे आपकी बाँसुरी बहुत अच्छी लगती है. मैं सीखना चाहता हूँ."

बाबा ठहाका लगा कर हँस पड़े और बोले, "अच्छा! फिर मेरे पास ज़ल्दी क्यों नहीं आये?"

"आज तो आये हैं न बाबा," खिलखिलाते हुए आनंद बोला.

क्षशाँक और उनकी परम मित्र डॉ पोर्शिया कहीं दूर खड़े थे और उन गतिविधियों को उत्सुक हो कर देख रहे थे. बाबा को चाकलेट खाते देख कर वे बहुत खुश हुए. क्षशाँक को अपनी सफलता पर हर्ष हो रहा था.

मीरा टहलते टहलते बाबा और मोहन के पास पहुँच गई और बोली, "आओ बेटा, बहुत घूम चुके. अब घर चलते हैं."

"ये तो मेरा पोता है. तूँ कौन?"

“हाँ बाबा, हाँ. ये आपका ही पोता हैं. और हम आपके बेटे की बहू हैं. आपने मुझे पहचाना नहीं क्या?”

“ओ मेरी बेटी. मुझे छोड़ कर तुम लोग क्यूँ चले गए थे? मेरे बेटे को साथ नहीं लाई क्या?” मीरा को गले लगाते हुए बाबा ने कहा.

“लाई हूँ न. वो देखो. आपका बेटा उधर खड़ा है,” कह कर मीरा ने क्षशाँक की ओर उँगली कर दी और उनको आने का संकेत कर दिया.

जिधर उँगली की गई थी, बाबा ने उधर देखा और क्षशाँक को अपनी ओर आते देखा. क्षशाँक को देख कर वे मुस्कराए और उसे अपनी बाजुओं में भरने दौड़ पड़े.

आज बाबा का व्यवहार अनपेक्षित था. उसे देख कर क्षशाँक और डॉ पोर्शिया हैरान थे. जो बाबा किसी से बात तक नहीं करते थे, देखते ही भाग खड़े होते थे, आज वे क्षशाँक को बाजुओं में भरने को खुद दौड़ रहे हैं.

आस पास खड़े लोग भी यह देख कर बहुत हैरान हो रहे थे.

क्षशाँक तेजी से आगे बढ़े और बाबा को अपनी बाजुओं में भर लिया. कारण भिन्न भिन्न थे मगर दोनों की आँखें झरना बनी हुई थी और एक दूसरे के कंधों को भिगो रही थी.

हालाँकि बाबा के कपड़ों से असहनीय दुर्गंध आ रही थी फिर भी क्षशाँक उनसे लिपटे रहे जिससे उनके किये कराए पर पानी न फिर जाये. मन ही मन वे मीरा की भी तारीफ़ कर रहे थे क्योंकि उसने भी तो उस दुर्गन्ध को झेला था.

“बाबा, अब हम आपको कभी अकेला नहीं छोड़ेंगे. आओ घर चलते हैं,” मीरा ने चरण छूते हुए कहा.

“हाँ अम्मा, बाबा को साथ ले चलो. मुझे बाबा से बाँसुरी बजानी सीखनी है,” आनंद ने कहा.

बाबा मुस्करा दिए और बोले, “हाँ बेटा, हाँ. मैं अपने बेटे को बाँसुरी बजाना सिखाऊँगा, गिटार बजाना सिखाऊँगा. हारमोनियम बजाना सिखाऊँगा. और जो कहोगे, वो सब सिखाऊँगा.”

पाँचों ने एक रिक्शा पकड़ा और घर की ओर रवाना हो गए. क्षशाँक, मीरा और डॉ पोर्शिया के दिमाग में एक ही उथल पुथल मची हुई थी और वो थी कि कैसा है ये क्रूर संसार और क्यों हो जाता है किसी का बाबा जैसा जीवन?

घर पहुँचे.

गर्म पानी से बाबा को नहलाया गया. क्षशाँक ने अपना सफ़ेद कुरता और सफ़ेद पायजामा उनको पहनने हेतु दे दिया जिसे पहन कर सफ़ेद दाढ़ी और सफ़ेद लटों वाले बाबा झक्क सफ़ेद वस्त्रों में एकदम देवदूत लग रहे थे.

जैसा क्षशाँक चाहते थे, एक दम वैसा ही हो रहा था. क्षशाँक बार बार सोच रहा था कि जो कुछ वो देख रहा है, कहीं वो स्वपन तो नहीं?

जो पटकथा उसने लिखी थी, रंगमंच पर सभी किरदार उसे हूबहू खेल रहे थे. कथानक को

मूर्त रूप देने हेतु मीरा और आनंद को जो भूमिका दी गई थी, उसमें शानदार कामयाबी हासिल करने में वे दोनों कामयाब हो गए थे.

उन्होंने बाबा का दिल जीत लिया था.

मगर सुरसा के मुँह की तरह एक विकराल समस्या अब भी राह रोके खड़ी थी. न केवल क्षशाँक बल्कि डॉ पोर्शिया और मीरा भी उस समस्या से जूझ रही थी मगर राह कोई नज़र नहीं आ रही थी.

कहा न कि समस्या विकराल थी, और विकराल समस्या का इलाज़ दुर्लभ और जटिल हुआ करता है, तीनों उसका हल खोजने में जुटे हुए थे.

क्या थी वो जटिल समस्या?.

21

दरअसल वो समस्या थी कि बाबा रात को घबरा कर चिल्लाने लगते, “बेटा, मुझे छोड़ कर न जाओ, मुझे छोड़ कर न जाओ.”

क्षशाँक को अब उनके मानसिक रोग की फ़िक्र हुई. एक डाक्टर को दिखाया. उसने जाँच परख कर कहा कि सेहत एक दम ठीक है. इनको इनके परिवार के पास भेज दो.

“मगर ये कुछ बताते ही नहीं कि ये कहाँ के रहने वाले हैं और इनका परिवार कहाँ है?”

“ओह! इसका मतलब इनकी याददाश्त चली गई है. फिर तो मुश्किल है प्रोफेसर साहब. इस उम्र में याददाश्त का लौटना बहुत मुश्किल होता है. अगर आपको कुछ कठिनाई है तो इनको किसी वृद्धाश्रम में छोड़ दें.”

“नहीं, नहीं, मुझे कोई कठिनाई नहीं है. बस रात को जब ये चिल्लाने लगते हैं तो अगल बगल वालों को तकलीफ होती है,” क्षशाँक ने कहा.

“आपने बताया था कि इनको बाँसुरी बजाने का शौक है.”

“हाँ, हाँ, ये बहुत अच्छी बाँसुरी बजाते हैं.”

“इनकी बाँसुरी की धुन को रिकार्ड कर इनके कमरे में हलकी आवाज़ में बजा कर छोड़ दिया करें. हो सकता है उससे इनके मन मस्तिष्क को शांति मिले और रात की उस घबराहट से निजात मिल जाये,” चिकित्सक ने परामर्श देते हुए कहा.

“मगर वो धुन तो गम भरे गीत की है. हो सकता है वह और अधिक मुसीबत खड़ी कर दे,” क्षशाँक ने कहा.

“ओह! मगर आप उसे भी रिकार्ड कर सकते हो क्योंकि वह इनकी पसंदीदा धुन है. वो भी काम कर सकती है.

“जी, ठीक कहा. हो सकता है शुरू में वही कारगर हो.”

“बिल्कुल. बाद में कोशिश करें कि उस धुन को बजाना छोड़ दें. और किसी खुशी भरे गीत की धुन छेड़ें.”

“हाँ, ये ठीक रहेगा. कोशिश कर के देखते हैं,” क्षशाँक ने कहा.

“ऐसे मामलों में धैर्य की दरकार होती है प्रोफेसर साहब. धीरज बनाए रखिये,” चिकित्सक ने कहा.

क्षशाँक ने मुस्कराते हुए कहा, “डाक्टर, हमारे पास धीरज की कोई कमी नहीं.”

बाबा को लेकर क्षशाँक घर लौट आये.

बाबा को अपनी बाँसुरी की ललक लगी थी. घर पहुँचते ही उन्होंने अपनी मनपसंद तान छेड़ दी.

उधर क्षशाँक ने उसे चुपचाप रिकार्ड करना शुरू कर दिया. बाबा धुन बजाने में मस्त थे और इधर क्षशाँक उसे रिकार्ड करने में व्यस्त.

उस रात जब बाबा सो गए तो क्षशाँक ने रिकार्ड की गई धुन धीमी आवाज़ में बजती छोड़ दी. उस रात बाबा आराम से सोये. मनोचिकित्सक की सुझाई विधि कारगर साबित हो रही थी.

एक दिन जब बाबा अपनी मनपसंद धुन बजा रहे थे तो क्षशाँक बोले, “बाबा, रोज रोज एक ही धुन बजाते रहते हो. कोई नई धुन सुनाओ न?” क्षशाँक ने मनुहार करते हुए कहा.

“क्यों, ये अच्छी नहीं लगती क्या?”

“लगती है. मगर दुःख भरी है.”

“दुःख भरी है. इसीलिये तो संसार के रूबरू कराती है? इसीलिए तुम इस धुन से डरते हो, कायर कहीं के,” बाबा ने झिड़कते हुए कहा.

“नहीं बाबा, नहीं. डर की क्या बात? एक ही धुन को सुनते सुनते मन भर जाता है. कोई दूसरा गीत हो जाए न? मैं एक गीत सुझाऊँ क्या?”

“बताओ.”

“हमदम मेरे, मान भी जाओ, कहना मेरे प्यार का, अरे हल्का-हल्का, सुर्ख लबों पे रंग तो है इक़रार का,” ये ठीक रहेगा न?

“बदमाश कहीं का,” पहली बार ठहाका लगाते हुए बाबा ने कहा था.

मीरा और आनंद भी ठहाका लगा कर हँस पड़े. आनंद बोला, “ये हुई न बात. कोई तो हैं जो अब अंकल को भी बदमाश कह सकता है.”

मीरा ने डपटते हुए कहा, “चुप कर, बदमाश कहीं का.”

“बाबा, देखो, अम्मा मुझे बदमाश कह रहीं है,” आनंद ने शिकायत करते हुए कहा.

मगर बाबा अपनी ही धुन में थे. उन्होंने सबकी कही सुनी को अनसुनी करते हुए सुझाये गए गीत की तान जो छेड़ी, क्षशाँक, मीरा और आनंद झूमते रह गए.

बाबा बाँसुरी बजा रहे थे और वे सब झूम रहे थे.

थोड़ी देर बाद क्षशाँक ने देखा कि गीत की धुन पर मीरा नाचने लगी है. बाँसुरी पर मधुर

धुन और मीरा की पायजेब की छन छन ने समाँ बाँध दिया था और बैठक को संगीत से गुंजायमान कर दिया था.

क्षशाँक को लगा था कि उपचार तो एक का होना था, संयोग कुछ ऐसा हुआ कि एक पंथ दो काज हो गए.

क्षशाँक ये जान कर और अधिक हैरान थे कि सदा खुश दिखने वाली मीरा के मन में दबी कुचली भावनाएं चोर की तरह छुपी बैठी थी जिसकी भनक उनको उस दिन तक लगी ही नहीं थी.

“स्त्री कितनी रहस्यमई होती है,” क्षशाँक ने मन ही मन सोचा था. अपने दुखों को दिल में छुपाये रखती है. हवा तक नहीं लगने देती.

“बुद्धू, रहस्यमई नहीं, सहनशील,” आवाज़ आई. क्षशाँक ने इधर उधर देखा. कोई दिखाई नहीं दिया.

वह हैरान हो गया.

“हैरान न हो. हम हैं आपकी अम्मा.”

क्षशाँक यंत्रवत नतमस्तक हो गया.

बाँसुरी बजाने में बाबा सिद्धहस्त थे. क्षशाँक उनको रोज ही खुशी का कोई गीत सुझाते और बाबा धुन बजाते बजाते मस्त हो जाते. क्षशाँक उनको रिकार्ड करते रहते.

रात को जब बाबा सो जाते तो क्षशाँक उनके कमरे में चुपचाप जाते और टेप की गई धुनों को धीमी आवाज़ में चला कर छोड़ देते.

चिकित्सक की सुझाई गई विधि कारगर साबित हो रही थी. बाबा अब चैन के साथ सोने लगे थे.

इस कामयाबी में मीरा का योगदान भी कम नहीं था. वो बाबा की हर जरूरत का खयाल वैसे ही रखती जैसे वो उनकी पुत्रवधु ही हो. आनंद भी उनको दादा दादा करता रहता और जैसे ही वे कुछ अनमने होते, पीछे जाकर उनको गुदगुदी कर देता.

बाबा हँसते हुए कहते, “बदमाश कहीं का.”

“अंकल, देखो. बाबा हमें बदमाश कह रहे हैं.”

हम सब खिलखिला कर हँस पड़ते.

क्षशाँक को शून्य संग शून्य मिलन का अहसास होने लगा था. उसका अंतर्मन हिलोरें मार रहा था. उसे मंजिल मिल गई थी.

जीवन पटरी पर आ गया था. क्षशाँक, बाबा, मीरा और आनंद सब खुश थे. जीवन पटरी पर आ गया था और अपनी अपनी भूमिका से सभी खुश और संतुष्ट थे.

अचानक गुलाब की सेविका का खत मिला जिसमें लिखा था कि गुलाब की जान खतरे में है. हो सके तो तुरंत मिलें.

खत पढ़ कर क्षशाँक विचलित हो गए थे और शून्य से मिलने के बावजूद एक बार फिर

शून्य से वंचित होने की कगार पर पहुँचने की आशंका गहराने लगी थी.

“ये कैसी विडम्बना है? मंजिल दिखाई देती है फिर भी हम उस तक नहीं पहुंच पाते. पहुँचते पहुँचते पीछे को फिसल जाते हैं. कैसा है ये साँप सीढ़ी का खेल और ये कब तक चलता रहेगा?” मन ही मन वे बुदबुदाए थे.

खत शाम को मिला था. अत: अगले दिन मीरा का उनको इंतज़ार करना पड़ा जिससे बाबा की देख भाल करने वाला कोई तो घर पर हो.

मीरा आई.

क्षशाँक ने उसको बताया कि उसे दो दिन बाबा का खयाल अकेले रखना होगा क्योंकि उनको एक रिश्तेदार के यहाँ जाना है.

मीरा ने कहा, “आप फ़िक्र न करें. अब तक तो मुझे उनकी आदतों की अच्छी खासी जानकारी हो गई है. उनकी ज़रूरतें ही कितनी हैं? मस्त होकर बस बाँसुरी बजाया करते हैं. आप फ़िक्र न करें. कोई समस्या नहीं होगी.”

“जब वे स्नान करें तो खास खयाल रखना होगा. उस समय आप स्नानागार के पास ही रहना. कपड़े पहनते वक्त वे असहज हो जाया करते हैं. कही गिर न जाएँ.”

“आप चिंता न करें. मैं सब खयाल रखूँगी. वैसे रिश्तेदार के यहाँ खैर तो है ना? आप चिंतित लग रहे हैं.”

“हाँ. थोड़ी चिंता है. सब ठीक होगा.”

क्षशाँक ने रिक्शा पकड़ा और गुलाब के कोठे की ओर रवाना हो गए.

कोठे पर पहुँचे. सेविका ने दरवाजा खोला और अपने होठों पर उँगली रख कर चुप रहने का इशारा किया.

क्षशाँक ने देखा कि गुलाब बिस्तर पर बेजान सी पड़ी हुई है. उसका मुँह दूसरी ओर था. इसलिए क्षशाँक को देख भी न पाई होगी. हो सकता है सोई हुई हो.

चौकी पर बैठते हुए क्षशाँक ने सेविका से पूछा, “माजरा क्या है?”

“कई बार पूछा. कुछ नहीं बताती. जिस दिन से आप मिल कर गए हैं, उसी दिन से इनको कोई मनोरोग सा लग गया है. मुजरे भी लगभग बंद हैं.”

“ओह! ऐसा भी क्या हुआ?”

“ज्ञात नहीं. क्षमा करना सर. आपको तकलीफ देनी पड़ी. आपको उनकी अनुमति के बिना बुलाया है. अत: आप भी मेरे खत को गुप्त रखना. उनको यह ज्ञात न हो कि हमने आपको बुलाया है,” सेविका ने तफसील से बताते हुए कहा.

“ठीक है. आप फ़िक्र न करें. सोई हुई हैं या यूँ ही लेटी हैं?”

“ज्ञात नहीं. देखती हूँ.”

सेविका उनके करीब गई और बोली, “बाई जी, प्रोफ़ेसर साहब आये हैं?”

गुलाब ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी.

क्षशाँक ने सेविका को इशारे से अपने पास बुलाया और बोले, “कोई बात नहीं, हम छुट्टी लेकर आये हैं. कोई ज़ल्दी नहीं है. सोने दो. जब उठेंगी तो बात करेंगे.”

“ठीक है,” कह कर और क्षशाँक को समाचार पत्र देकर सेविका पाकशाला की ओर बढ़ गई.

सेविका ने शरबत पेश करते हुए कहा, “नोश फरमाएं. आप तो शाकाहारी हैं न?”

“हाँ. मगर भोजन की फिक्र न करें. घर जाकर हम कर लेंगे. गुलाब उठ जाएँ. बातचीत कर लें. फिर तो लौटना होगा ही.”

“अरे सर, ऐसा कैसे हो सकता है? ग्यारह तो बज ही रहे हैं. कब बाई जी उठी और कब आप फारिग हुए? भोजन नहीं बनाया तो बाई जी भी डाटेंगी.”

“जैसे आपकी मर्जी.”

सहायिका रसोई की ओर बढ़ गई और क्षशाँक समाचार पत्र पढ़ने लगे. मगर उनका मन न तो समाचार पत्र में लग रहा था और न ही किसी अन्य गतिविधि में.

नीचे बाज़ार में शोर गुल हो रहा था जो उनको विचलित किये दे रहा था. एक ओर तो उनको बाबा की फ़िक्र थी और दूसरी ओर इधर गुलाब की. बाबा तो अबूझ पहेली थे ही, अब गुलाब जटिल पहेली बन कर उनके सामने लेटी थी.

वे चाहते थे कि गुलाब को उठाऊँ और पूछूँ कि माज़रा क्या है? मगर उस जटिल पहेली को छेड़ने में भी उनको डर लग रहा था. वह कैसा डर था, वे खुद नहीं जान पाए.

जीवन साँप सीढ़ी के खेल जैसा है. कभी आगे, तो कभी पीछे. कभी ऊपर तो कभी नीचे. बहुत बार तो ऐसा लगता है जैसे हमारे हाथ में कुछ है ही नहीं और समय के हाथों में हम इधर उधर लुढ़कते सिर्फ खिलोने हैं.

22

तभी गुलाब ने करवट बदली और अकस्मात आये अपने मेहमान को देखा.

देखते ही फुर्ती के साथ वह उठ खड़ी हुई और क्षशाँक के घुटनों को पकड़ कर और उनमें अपना मुँह छिपा कर फर्श पर वैसे ही बैठ गई जैसे माफी मांगते हुए कोई अपराधी बैठा हो.

क्षशाँक ने देखा कि उसकी साँस बहुत तेज़ी से चल रही हैं.

“अरे ये क्या करती हो? चलो, उठो, मुँह हाथ धो लो. फिर बात करते हैं,” क्षशाँक ने कहा.

उसने कोई उत्तर नहीं दिया. वो काफी देर तक उसी स्थिति में बैठी रही. कुछ देर बाद क्षशाँक ने दोबारा कहा, “गुलाब! उठो. जाओ. हाथ मुँह धो लें.”

वह बुत बनी वैसे ही बैठी रही.

“गुलाब, हमने आपसे कुछ कहा है. सुनो न?”

इस बार उसका जिस्म हिलता सा महसूस हुआ. मगर क्षशाँक अब भी आश्वस्त नहीं था कि गुलाब ने वास्तव में उसकी सुनी होगी.

“कहीं ये मेरा भ्रम तो नहीं,” उसने सोचा था.

मगर इस बार अपना मुँह छिपाते हुए गुलाब गुसलखाने की ओर बढ़ गई थी. क्षशाँक ने राहत की साँस ली थी और शर्बत की घूँट भरने लगे थे.

खसखस के शर्बत ने उसको ताजगी और राहत दी.

गुलाब लौटी तो क्षशाँक उसके चेहरे को देख कर चौंक गए. एक दम पीला पड़ गया था. गुलाब की गुलाबी छटा उसके चेहरे से गायब हो चुकी थी.

“अरे गुलाब, ये क्या हाल बना रखा है? रोगियों जैसा एक दम पीला पीला चेहरा, आपको हुआ क्या है?”

गुलाब ने कोई उत्तर नहीं दिया. वो चुप रही.

सेविका आई और बोली, “सर, चेहरा इनका पीला न होगा तो किसका होगा? खाना पीना तक छोड़ रखा है. मुश्किल से दो चार कौर जबरन खिलाती हूँ. वो भी बच्चे की तरह. अब हमसे नहीं झेला जाता.”

“तो चली जा न निगोड़ी? रोका किसने है?” झुंझलाते हुए गुलाब ने कहा.

“सता लो, जितना चाहो, सता लो. पता है न कि मेरे पास कोई ठौर नहीं है और मैं आपको छोड़ कर कहीं जा नहीं सकती. इसीलिये रौब झाड़ती रहती हो,” रूँआँसी होते हुए सेविका ने कहा.

मोहब्बत भरे दोनों के झगड़े को सुन देख कर क्षशाँक मुस्करा उठा और कहा, “वाह! मोहब्बत हो तो ऐसी.”

गुलाब उठी और सेविका को गले लगाते हुए कहा, “हम भी तुम्हारे बिना कैसे जियेंगे, लाल बुझक्कड़? तूने ये सोच कैसे लिया कि हम तुम्हारे बिना रह सकते है?”

सेविका खिल खिल कर हँस पड़ी. बोझिल वातावरण कुछ खुशगवार हुआ. क्षशाँक ने राहत की साँस ली और मन ही मन बोले, “शुक्र है. लगता है उपचार या समस्या का समाधान अब सुगम हो जायेगा.”

सेविका ने दस्तरखान लगा दिया था. गुलाब ने कहा, “आइये, भोजन करें.”

“आप भी अपनी थाली लगा लें. साथ साथ करेंगे,” क्षशाँक ने कहा.

“हम बाद में करेंगी. आप शुरू करें.”

“नहीं, शुरू आपको करना है, नहीं तो हम चले,” क्षशाँक ने तुरुप मारते हुए कहा.

“ये हुई न बात,” सेविका ने कहा.

सेविका का नाम था खुशबु. वो दो थालियाँ और चार कटोरियाँ ले आई. भोजन परोसा

और एक कौर तोड़ कर गुलाब के होठों की ओर अपना हाथ बढ़ा दिया.

“अरे, हम कोई बच्ची है क्या?”

“बच्ची से भी अधिक, कड़क हठी,” कह कर और खिलखिलाते हुए खुशबु पाकशाला की ओर भाग गई.

दोनों ने चुपचाप भोजन किया. गुलाब ने पान के दो बीड़े बनाए और क्षशाँक के मुँह में डालने लगी ही थी कि क्षशाँक ने एक बीड़ा लिया और गुलाब के मुँह में रख दिया.

गुलाब मुस्करा दी.

क्षशाँक को लगा जैसे गुलाब के चेहरे की पहले सरीखी लाली लौट रही है. वह हैरान होकर उसको तक रहा था. गुलाब अपने दायें पैर के अंगूठे से फर्श खुरच रही थी.

गुलाब की समस्या से क्षशाँक अब तक अनभिज्ञ थे. वे मन ही मन मंथन कर रहे थे, “गुलाब की समस्या आखिर है क्या?”

मुँह में पान की गिलौरी और दिमाग में असीम हलचल. बिंदास लहजे में उसने अपना सिर झटकते हुए कहा, “हुह.”

“आपने कुछ कहा क्या?” गुलाब ने पूछा.

“आपने कुछ सुना क्या?”

“हुह,” गुलाब ने भी कह दिया.

क्षशाँक अंदाज़ नहीं लगा पाया कि वो सुनने का उत्तर दे रही है या उसकी नकल उतार रही है.

गुलाब अब भी रहस्य बनी उसके सम्मुख बैठीं थी और क्षशाँक बावलों की मानिंद उसको देख रहा था.

सच बात तो यह है कि स्त्री को जानने की किसी ने कोशिश ही नहीं की. हाँ, ये ज़रूर कहा जाता है कि ब्रह्मा जी जो श्रृष्टि के रचयिता माने जाते हैं, वे भी स्त्री को नहीं जान पाए. अगर यही सच है तो ब्रह्मा जी ने स्त्री को बनाया कैसे और क्यों?

क्षशाँक का मानना है कि स्त्री प्रेम का स्वरूप है. चूंकि पुरुष प्रेम के मामले स्त्री से कमतर है, इसी कारण वह स्त्री को जान कर भी नहीं जान पाया.

23

भोजनोपरांत गुलाब और क्षशाँक आमने सामने बैठे थे.दोनों एक दूसरे की आँखों में झाँक रहे थे. यह जानने हेतु कि गुलाब को हुआ क्या है, क्षशाँक उसकी आंखों में डूब उतर रहा था.

क्षशाँक ये जानने हेतु उद्विग्न थे कि गुलाब को तकलीफ क्या है? जो चेहरा गुलाब की तरह खिला रहता था, वो पीला क्यों पड़ गया है? कजरारी आँखें अंदर क्यों धँस गई है? होठों पर भी पपड़ी दिखाई दे रही थी. शरीर की तो कहें ही क्या? उसे अस्थि पंजर कह दिया जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी.

जब उद्विग्नता चरम पर जा पहुँची तो पहल क्षशाँक को ही करनी पड़ी. वे बोले, “गुलाब, ये क्या हुलिया बना रखा है? आपको हुआ क्या है?”

गुलाब चुप रही.

अपने दायें पैर के अंगूठे से वह फर्श कुरेदती रही. तभी खुशबु आई और बोली, “सर, हम भी पूछ पूछ कर थक गए हैं. आप आये हैं. अच्छा किया. आज आपके साथ ठीक से भोजन तो किया.”

“बोलो गुलाब. मन की गांठें खोल देने से मन हल्का हो जाया करता है. हमें नहीं बताना है तो हम चलते हैं. खुशबु को बता देना. फुरसत मिलेगी तो हम फिर आयेंगे.”

तुरुप एक बार फिर काम कर गई.

गुलाब बोली, “प्रोफेसर साहब. आपसे क्या छुपाना? सुगन्धा हमारी सगी बहन तो नहीं थी मगर कम भी नहीं थी. उसका गम हमें खाए जा रहा है. जानती हूँ ये बेवकूफी के सिवाय कुछ नहीं मगर दिल माने तो?”

“एक बात कहें गुलाब.”

“जी. कहिये.”

“आप तो कृष्ण भक्त हैं. फिर ये भ्रम क्यों?”

“समझी नहीं.”

“अब हों नाच्यौ बहुत गोपाल, काम क्रोध कौ पहिरि चोलना, कंठ विषय की माल. महामोह के नूपुर बाजत, निन्दा सब्द रसाल. भरम भरयौ मन भयौ पखावज, चलत कुसंगति चाल,” याद आया.

“ये सब किताबी बातें हैं प्रोफ़ेसर साहब.”

“क्यों?”

“जिंदगी इतनी आसान होती तो सभी मीरा और सूरदास बन जाते,” गुलाब ने कहा.

“हमने भी तो समझौता किया है? सुगन्धा से हमारा स्नेह कुछ कम नहीं था. उसी के गम को भुलाने हेतु हम एक बार आपके पास आये थे. कुछ आपने मदद की और कुछ हम समझे, जीवन आखिर पटरी पर आ ही गया.”

“पुरुष ऐसा कर सकते है. स्त्रियाँ नहीं.”

“ये क्या बात हुई?”

“सोच सोच का फर्क.”

“माना पुरुष स्त्री की सोच एक दूसरे के विपरीत है; मगर ये कहना कि पुरुष का स्नेह स्त्री से कम है, ये तो पुरुषों के साथ नाइंसाफी होगी. पुरुष जाति के साथ ये ज्यादती होगी.”

“हम प्रमाण दे सकते हैं.”

“दीजिए.”

“आप इतने दिन क्यों नहीं आये?”

प्रश्न सुन कर खुशबु रसोई के द्वार पर आ खड़ी हुई और क्षशाँक की ओर देखा. उसके मौन संकेत को वे समझ गए.

“हम आये तो. भूले भी कहाँ हैं? जब हमारे अंतर्मन ने कहा कि आपको हमारी ज़रूरत है, हम दौड़े चले आए,” क्षशाँक ने कहा.

खुशबु ने राहत की साँस ली और मुस्कराती हुई रसोई के अंदर गायब हो गई.

“आप भविष्यवक्ता है क्या?”

“नहीं, भविष्यवक्ता तो नहीं मगर हम परस्पर भाव बोध से अवगत हो जाया करते हैं. दूरबोध या कहें दूर संवेदनशील हैं. अंग्रेज़ी में इसे टैलीपैथी कहते हैं. इसके ज़रिये दूर बैठे व्यक्ति को अपने अजीज के दुःख सुख का आभास हो जाया करता है,” क्षशाँक ने कहा.

“हम आपको बहुत याद कर रहे थे. मगर कहते किससे?”

“गुलाब, इसी को प्रेम मार्ग कहा गया है जिसमें किसी से कहने सुनने की दरकार ही नहीं होती. उसी के कारण तो हमें आभास हुआ था कि आपको हमारी दरकार है.”

सुन कर गुलाब चुप हो गई.

कक्ष में सन्नाटा छाया हुआ था. क्षशाँक चाहते थे कि गुलाब कुछ प्रश्न करे. इस लिए ‘प्रेम मार्ग’ कह कर वे चुप हो गए थे. उनका अनुमान ठीक निकला.

“प्रेम मार्ग,” थोड़ी देर बाद गुलाब ने पूछा.

“हाँ, प्रेम मार्ग.”

“ये क्या होता है?”

“जो आपने चुना और अपनाया है,” क्षशाँक ने कहा.

“फिर ठहराव क्यों?”

“ठहराव इस लिए कि प्रेम मार्ग को चुन तो लिया मगर आपने उसके कायदे को न जाना.”

“क्या मतलब?”

“मतलब ये कि प्रेम मार्ग पर चलते हुए अपने कर्म करते जाना. आपने कर्म पथ छोड़ दिया, ठहराव आना ही था. हमने आपको याद दिलाया था कि आप कृष्ण भक्त हैं. जरा स्मरण करो कि भगवान कृष्ण ने कर्म पथ से च्युत अर्जुन को क्या कहा था?”

“किस बारे में?”

“कर्म सिद्धांतों के बारे में.”

“ओह! आपका संकेत कर्मरत रहो, फल की इच्छा न करो, की ओर तो नहीं है?”

“आपने ठीक अनुमान लगाया हैं गुलाब. कोई कर्महीन किसी से प्रेम क्या ख़ाक करेगा? सुगन्धा से आप प्रेम करती थी और अब भी करती हैं. मगर आप इस प्रेम का वजूद कब तक

रख पाओगी जब आप खुद ही खुश्क और रुक्ष हुई जा रही हो?”

“यानि मैं भूल जाऊँ कि सुगंधा अब नहीं रही?”

“आप फिर भूलती हो. सुगंधा थी, सुगंधा है और सुगंधा रहेगी आपकी यादों में, हमारी यादों में और हो सकता है कि खुशबु की यादों में भी. फिर कैसे कहती हो कि सुगंधा अब नहीं रही. वैसे भी आत्मा अजर अमर है. वही हमारी यादों में रची बसी होती है.”

“फिर हम क्या करें?”

“गुलाब, हमारा फ़र्ज़ आपके मन में उत्सुकता जगाने का था, वह पूरा हुआ.”

“कौन सा?”

“हम चाहते थे आपको राह दिखाना. वो हम कर चुके. आपके ज़हन में आज और अब खुद प्रश्न उपजा है. उत्तर भी खुद ही खोजना होगा. सुना है न कि जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ.”

“और कुछ?”

“बस, शेष कुछ रहा ही नहीं. जो राह दिखाई है, उस पर चिंतन मनन करें. फिर मिलेंगे, अब हम चलते हैं.”

“कुछ मदद नहीं करोगे?”

“प्रेम मार्ग पर चलने में कोई श्रेष्ठी भी किसी की मदद नहीं कर सकता, गुलाब. हम तो नाचीज़ हैं. प्रेम मार्ग तो खुद ही तय करना पड़ता है. सुना होगा न कि प्रेम गली बहुत संकरी, दो न उसमें समाय.”

“यानि उत्सुकता जगाओ आप, और उसे शांत करने की तरकीब सोचें खुद हम? बहुत खूब.”

“बिल्कुल.”

एक अक्षर का उत्तर देकर क्षशाँक कोठे से नीचे उतर गए. उन्होंने पीछे मुड़ कर देखने की भी ज़रूरत नहीं समझी. वे झटका देना चाहते थे. झटका दे चुके थे. मकसद पूरा हो चुका था. फिर पीछे मुड़ कर देखते भी तो क्या?

अपने कोठे की खिड़की पर गुलाब खड़ी थी. वो विस्फारित आँखों से क्षशाँक को जाते हुए देख रही थी और सोच रही थी कि उस शख़्स के शरीर में हाड़, माँस और मज्जा है या वह किसी कठोर धातु का बना है? उसे कोई उत्तर नहीं मिला.

क्षशाँक को जाते हुए वह काफी देर तक देखती रही. जब वो आँखों से ओझल हो गए तो अपने कक्ष में लौट आई.

चिंतन मनन जारी था.

“कृष्ण तो चित चोर हैं. वे किसको राह दिखायेंगे?” वो बुदबुदाई.

खुशबु पास खड़ी थी. बुदबुदाते देख कर उसने पूछा, “बाई जी, आपने कुछ कहा क्या?”

\“तुमने कृष्ण का नाम सुना है क्या?”

“हाँ, वही न जो गोपियों के वस्त्र चुरा लेते थे,” खुशबू ने मुस्कराते हुए कहा.

“नहीं, मैं उस कृष्ण की बात कर रही हूं जिसने गोपियों के पास उद्धव को भेजा था,” गुलाब ने संकेत देते हुए कहा.

“वे दोनों एक ही तो हैं,” ठहाका लगाते हुए खुशबु ने कहा.

“पता नहीं. मगर आज उन्होंने एक उद्धव को मेरे पास भेजा था. गोपियों ने जो हाल उस उद्धव का किया था, वही हाल आज मैंने इस उद्धव का किया है. बने हैं उद्धव?”

“किस की बात कर रही हैं?”

“तुम्हारे प्रोफेसर साहब की. दूसरों को ज्ञान देना कितना सुगम होता है? खुद चल कर दिखाएं तो मानें.”

अपनी बाई जी की तकरीर सुन कर खुशबु हैरान थी. वो समझ नहीं पा रही थी कि वो कहे तो क्या कहे?

अचानक वो बोली, “बाई जी, “एक बात पूछें.”

“पूछो.”

“अगर आपने आज वाले उद्धव की बात नहीं समझी और नहीं मानी तो अब क्या करोगी?”

प्रश्न सुन कर गुलाब मुँह फाड़े खुशबु की ओर देख रही थी. खुशबु जान नहीं पाई कि प्रश्न सुन कर गुलाब हैरान थी या उसके प्रश्न का उत्तर खोज रही थी?

गुलाब को चिंतन मनन करते देख कर खुशबु को वहाँ से खिसक जानें में ही भलाई लगी. चुपचाप वो पाकशाला की ओर बढ़ गई.

24

थोड़ी देर बाद खुशबु ने गुलाब की आवाज़ सुनी.

खुशबु आई, पूछा, “कहिये बाई जी.”

“जरा बिसात तो उठा ला.”

“कौन सी बिसात? जिंदगी की बिसात या शतरंज की?

गुलाब मुस्कराई और बोली, “बहुत बातून हो गई हो.”

“आपके चेहरे पर रौनक जो लानी थी.”

“अच्छा, अच्छा, चल बिसात ले आ. आओ, शतरंज खेलते हैं.”

मनुहार सुन कर खुशबु उछल पड़ी और मुस्कराते हुए बोली, “जी बाई जी, ये हुई न बात. अभी लाई.”

दोनों ने कई बाजियाँ खेली.

खुशबु जीतती रही और गुलाब हारती रही. यह सोच कर खुशबु हैरान थी कि शतरंज की श्रेष्ठ खिलाड़ी गुलाब ज़ान आज जान बूझ कर हार रही हैं या ध्यान कहीं ओर है?

“बाई जी, आपका ध्यान किधर है? खेलने को मन नहीं करता हो तो छोड़ो, कभी फिर सही,” खुशबु ने कहा.

“अरे ना, ना. हम आपको शतरंज खेलना सिखा रही हैं.”

“अब तो मुजरा शुरू होगा न?”

“लोगों को कैसे पता चलेगा?”

“कई श्रोता तो रोज ही पूछते रहते हैं. उनको बता दूँगी. वे अपने आप मुनादी पीट देंगे,” मुस्कराते हुए खुशबू ने कहा.

“ठीक है. साजिंदों के पास शाम छह बज़े की सूचना भेज दो,” गुलाब ने कहा.

उस दिन गुलाब बहुत खुश रही. उसने मन ही मन खुशबु और प्रोफ़ेसर साहब का शुक्रिया अदा किया.

उसी शाम मुजरा शुरू हुआ. गुलाब ने अपना पसंदीदा भजन, “अब मैं नाच्यो बहुत गोपाल,” पेश किया.

इधर गुलाब के पाँव थिरक रहे थे और उधर श्रोता-दर्शक झूम रहे थे. भजन बार बार दोहराया जा रहा था मगर किसी को भी ये आभास नहीं हुआ कि एक ही भजन बार बार दोहराया जा रहा है.

कारण स्पष्ट था. गायक और श्रोता एकाकार हो गए थे. अलगाव तो महसूस ही तब होता है जब इकाइयाँ अलग अलग भागों में बटी हों. यहाँ तो सब एकाकार हो गए थे.

कुछ देर बाद गुलाब ध्यान की मुद्रा में फर्श पर बैठ गई. वह पसीने पसीने हो रही थी. खुशबु ने देखा, श्रोता दर्शकों की ओर मुजरा समाप्ति का इशारा किया और गुलाब को सँभालने हेतु आगे बढ़ी और पंखा झलने लगी.

श्रोता दर्शक उठे, पेटी में इच्छानुसार रूपये डाले और सीढियाँ उतरते चले गए.

कुछ देर बाद गुलाब संयत हुई और बोली, “खुशबु, केवड़े का शर्बत तो पिला.”

इधर गुलाब शर्बत पी रही थी और उधर क्षशाँक झटके पर झटके खा रहे थे क्योंकि वे गुलाब को झटका देकर कोठे से निकल ज़रूर लिए थे मगर वो झटका उन्ही को बार बार जोरदार झटके मार रहा था. वे सोच रहे थे कि क्या गुलाब को इस तरह का झटका मारना ठीक था? क्या वो इस झटके को सहन कर उससे उबर पायेगी?

अगर उस झटके ने नकारात्मक प्रभाव दिखाया तो क्या होगा? उससे तो अब तक किये कराये पर पानी फिर जायेगा.

बासठ वर्षीय क्षशाँक अपने अतीत में पहुँच गए थे. आह भरते हुए उन्होंने करवट बदली और मन ही मन बोले, “उपयुक्त और अनुपयुक्त, उचित और अनुचित में अंतर करना कितना

कठिन होता है?”

“बासठ वर्ष के हो गए हो क्षशाँक; तुम बिल्कुल नहीं बदले. पेंडुलम की तरह दायें बाएं झूलते रहते हो,” परिवेश में जानी पहचानी आवाज़ गूँज उठी.

क्षशाँक के कान खड़े हुए. आवाज़ को पहचाना और वे गदगद हो उठे. चेहरा चमक उठा.

“अम्मा जी, प्रणाम. आप ही बताओ कि मैं करूँ तो क्या करूँ?”

“वत्स, आपने जो किया है, ठीक किया है. सकारात्मक सोच रखो. फिर दुविधा नहीं होगी.”

“आप भी कहाँ बदली हो अम्मा जी? राह दिखाती हुई. वही मीठी मीठी डाँट. मगर आप आती हो, दर्शन दिए बिना ही चली जाती हो, दर्शन तो दिया करें,” क्षशाँक ने रुष्ट होते हुए कहा.

“अपने अंतर्मन में झाँको, वत्स. हम वहीं मौजूद है. दर्शन हो जायेंगे,” कह कर आवाज़ लुप्त हो गई.

25

प्रोफेसर क्षशाँक घर पहुँचे. दरवाजा खुला था. दबे पाँव घर में घुसे और मीरा को घर की साफ़ सफाई करते देखा.

घर को देख कर क्षशाँक चौंके बिना नहीं रह सके. करीने से लगी अलमारी में रखी पुस्तकें उनको न्योता दे रही थी. दीवारों पर लगे चित्र मुस्करा रहे थे.

जो समाचार पत्र यूँ ही पड़े रहते थे, करीने से लगे थे. उनकी मेज पर साफ़ किया हुआ सफ़ेद मेजपोश बिछा था. करीने से कलमदान को दाईं ओर रख दिया गया था.

“अरे, आपने तो घर की काया ही पलट दी. सच कहा है स्त्री ही घर की लक्ष्मी होती है,” तारीफ़ करते हुए प्रोफेसर क्षशाँक ने कहा.

“ओह! आप कब आये? पता ही नहीं चला.”

“पता तो तब चलता जब हम दरवाज़ा खटखटाते और आप उसे खोलती. द्वार खुला था. खटखटाने की दरकार हुई ही नहीं. सीधे चले आये.”

“ओह! दरवाजा बंद करना चाहिये था. भूल हो गई. आप तो कल आने वाले थे.”

“जो काम था, वो जल्दी निपट गया. सो, चले आये. वैसे भी हमें दूसरी जगह नींद ठीक से नहीं आती.”

“ठीक कहा सर. जो मज़ा छज्जू के चौबारे, वो बल्ख न बुखारे,” मीरा ने कहा.

जैसे ही मीरा ने छज्जू वाली कहावत कहीं, क्षशाँक को सुगंधा की याद हो आई. विदेश गमन करते अपने बेटे को भी तो सुगंधा ने यही कहा था जिसको उसने अनसुना कर दिया था.

“आह!” क्षशाँक के मुँह से गहरी आह निकली.

“क्या हुआ सर? आप ठीक है ना?”

“ओह! हाँ. हम ठीक है. मगर आप ये किस झंझट में फँसी हो? क्या क्या साफ़ करोगी? यहाँ तो सब उलट पुलट मिलेगा.”

“कोई और काम तो था नहीं. सोचा घर की सफाई ही कर ली जाए. बस यही कक्ष शेष था. रसोई, आपका शयन कक्ष, बैठक सब कर चुकी हूँ. अध्ययन कक्ष शेष था. वो अब कर रही हूँ,” मीरा ने कहा.

“आनंद कहाँ है?”

“वो सो रहा है. रात उसे बुखार आ गया था. इस्कूल भी नहीं जा सका.”

“इस्कूल नहीं बाबा, स्कूल?”

“ओह! फिर भूल हो गई,” मुस्कराते हुए मीरा ने कहा.

“कुछ दवा दिलवाई या नहीं?”

“सर, तुलसी, अदरक, चुटकी भर हल्दी, काली मिर्च आदि का काढ़ा दो बार पिला चुकी हूँ. लगता है अब बुखार उतना नहीं है जितना रात को था.”

“ठीक है. फिर भी जाँच कर लेते हैं,” कह कर क्षशाँक ने थर्मामीटर से तापमान लिया. बुखार सामान्य पा कर राहत की साँस ली.

“सर भोजन?”

“हम भोजन कर के आये हैं. बाबा को तो भोजन करा दिया होगा?”

“जी, वे आराम कर रहे है.”

“आप दोनों कर लो. अगर कुछ नहीं बनाया है तो खिचड़ी बना लो. वो सुपाच्य होती है. आनंद के लिए ठीक रहेगी.”

“जी सर.”

“हम थके हुए हैं. अब हम आराम कर रहे हैं. आप भोजन कर के लौट जाना.”

“आपके चेहरे से ही लग रहा था कि आप सामान्य नहीं हैं? सिर दर्द है क्या?”

“सिर दर्द तो नहीं है मगर सिर में भारीपन ज़रूर लग रहा है. आराम कर लेंगे तो स्वस्थ हो जायेंगे. फ़िक्र न करें.”

“सर, आप अकेले रहते हो. हम फ़िक्र नहीं करेंगे तो कौन करेगा?”

“ठीक है,” कह कर क्षशाँक अपने शयन कक्ष की ओर बढ़ चले. लेटते ही आँख लग गई.

वे पाँच बजे उठे तो देखा मीरा अभी वहीं हैं.

“अरे, आप लोग गए नहीं?”

“सर, आपको कॉफी पिला कर जायेंगे. अब तबियत कैसी है? चेहरे से तो लगता है कि

कोई सुधार नहीं है."

"पहले से बेहतर हैं. कॉफी बना लें. आनंद उठ गया क्या?"

"नहीं सर. वो उठा नहीं, हमने जगाया नहीं."

"चलो, आप कॉफी बनाओ. आनंद और बाबा को हम बुला लाते हैं."

थोड़ी देर बाद वे तीनों कॉफी पी रहे थे और आनंद बोर्नविटा मिला दूध.

"अंकल, आप कब आये?"

"जब आप सो रहे थे. हम दोपहर ही लौट आये थे. बुखार कैसे हो गया?"

"मम्मी ने ठंडे पानी से नहला दिया. आप इनकी पिटाई करो अंकल."

"बदमाश कहीं का! सच बोलना था न कि बारिश में धमा चौकड़ी मचाते रहे."

"अंकल, देखो तो, मम्मी मुझे फिर से बदमाश कह रही हैं. हम बदमाश है क्या?"

"अगर आपने सच छुपाया है तो बदमाश हो. नहीं तो शरीफ."

"हाँ अंकल, सच तो छिपाया है. बारिश में छप छप करने में कितना मज़ा आता है न अंकल?"

इस पर क्षशाँक ठहाका लगा कर हँस पड़े.

"हाँ, ठीक कहा बेटा. बच्चों को बारिश में नहाना अच्छा लगा ही करता है."

"जब आप बच्चे थे तो क्या आप भी छप छप करते थे? कितना मज़ा आता होगा न?"

"अरे हम ही नहीं. आपकी अम्मा और बाबा भी छप छप करते रहे होंगे."

बाबा ठहाका लगा कर हँस पड़े मगर इस पर मीरा बोली, "सर, आप भी न?"

"क्यों गलत कह रहे है क्या?"

मीरा चुप रही मगर बाबा बोले, "अरे बहू, तुम भूल गई क्या? ज्वार के खेत से लौट रहे थे तो कैसे छप छप करते आये थे?"

"जी बाबा," मीरा ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए हामी भर ली थी जिससे बाबा का भरोसा बना रहे.

मन ही मन क्षशाँक ने मीरा की तारीफ की थी और बाबा से पूछा था, "बाबा, ज्वार के खेत में फिर चलें क्या?"

बाबा मायूस हो गए.

वे उठे और चुपचाप अपने कक्ष की ओर बढ़ गए. क्षशाँक उनको जाते हुए तब तक देखते रहे जब तक वे अपने कमरे में गुम नहीं हो गए थे.

"आपने बाबा को नाहक छेड़ दिया. छप छप की बात से वे कितना खुश थे. उनको छेड़ा न करें," मीरा ने दुःख जताते हुए कहा.

“ठीक कहा,. भूल हो गई. दरअसल हम जानना चाहते थे कि उनके खेत हैं कहाँ?”

“मगर पासा तो उल्टा पड़ गया न? बेहतर यही है कि उनको अपने स्वभाव अनुसार रहने दिया जाए,” मीरा ने कहा.

“ठीक कहा. आगे से ध्यान रखेंगे कि हम कोई ऐसी बात करें जिससे वे बेचैन न हों.”

26

“लगता है बाबा की याददाश्त लौट रही है,” मीरा ने कहा था.

“लौट आये तो अच्छा ही है. हो सकता है उनका पता ठिकाना मिल जाये और वे अपने परिवार से पुन: मिल जाएँ,” क्षशाँक ने कहा.

“अगर परिवार वाले नहीं मिले तो?”

“अरे, हम हैं तो. अब तो बाबा काफी ठीक भी हो गए हैं. अगर आपको तकलीफ होती हो तो उनकी देख भाल हेतु कोई दूसरा सहायक रख लेते हैं,” क्षशाँक ने पूछा.

“अरे नहीं सर. बल्कि मुझे बाबा की सेवा करने में खुशी मिलती है. अपनी सफ़ेद लटों और सफ़ेद दाढ़ी मूँछ में वे कितने सुंदर लगते हैं? एक दम किसी साधु महात्मा जैसे.”

“हाँ, जब मन मस्तिष्क को सुख मिलता है तो तन भी स्वस्थ होने लगता है. इसका श्रेय आपको ही अधिक जाता है. आपने उनकी ऐसी सेवा की है कि आपको ही वे अपनी पुत्रवधु समझने और मानने लगे हैं. आपको बुरा तो नहीं लगता?”

“नहीं सर. बल्कि आपकी सुझाई तरकीब से वे हमें अपना समझने लगे हैं. बाबा के पास आनंद को भेज कर आपने कितनी समझदारी दिखाई थी?” मीरा ने कहा.

“इसमें समझदारी जैसी कोई बात नहीं है. बच्चों से तो पशु पक्षी भी सहज हो कर मिला करते हैं. इसी से ये तरकीब काम कर गई थी.”

“चलो अच्छा है. बाबा को घर मिल गया और हमें एक बुज़ुर्ग. मुझे उनकी सेवा करने में बहुत आनंद मिलता है,” मीरा ने कहा.

क्षशाँक और मीरा की बातें आनंद गौर से सुना करता था. उस दिन भी वह कान लगाए हुए था.

सुन कर वह बोला, “अंकल, ये कौन आनंद हैं जो अम्मा को मिलते रहते हैं?”

क्षशाँक मुस्कराए और बोले, “भई, ये तो अपनी अम्मा से ही पूछो. हमें तो खुद मालुम नहीं कि ये किस आनंद की बात कर रही हैं?”

“बदमाश कहीं का. कच्छा छह में पहुँच गए और पूछते हैं कि आनंद क्या होता है?”

कच्छा सुन कर क्षशाँक और आनंद ठहाका लगा कर हँस पड़े. बाबा अपने कमरे में चले ज़रूर गए थे मगर उनका ध्यान मीरा और क्षशाँक की ओर ही था.

सब को हँसते देख सुन कर और बाहर आते हुए वे बोले, “हँसे क्यों?”

“बार बार समझाने पर भी अम्मा जी कक्षा को कच्छा बोल रही हैं,” आनंद ने कहा.

“ओह! याद आया. जब हम छात्र थे तो हम भी कच्छा ही बोला करते थे. हम लखनऊ में पढ़ते थे. एक दिन गुरु जी ने ऐसा करारा थप्पड़ जड़ा था कि कच्छा दिमाग से सदा के लिए बाहर निकल गया था और कक्षा ने जगह बना ली थी,” बाबा ने ठहाका मारते हुए कहा.

“किस ईस्कूल में पढ़ते थे बाबा?” सवाल पूछते ही मीरा ने अपने होठों पर ऊँगली रख कर क्षशाँक को चुप रहने का संकेत कर दिया था जिससे वे उसके गलत उच्चारण पर उसको टोक न दें.

प्रश्न सुनते ही बाबा ने मीरा की ओर तिरछी नज़र से देखा, वे वहाँ से उठे और पुन: अपने कमरे में चले गये. बाबा प्रश्नों से नाराज़ हो जाया करते थे. क्षशाँक पहले भी देख चुके थे कि प्रश्न करते ही बाबा उखड़ जाते हैं.

क्षशाँक ने एक बार आनंद की मार्फत कुछ पूछताछ कराई थी तो बाबा ने डाँटते हुए कहा था, “भाग यहाँ से नहीं तो थप्पड़ लगाऊँगा.”

आनंद को बाबा ने पहली बार डाँटा था. उनके कमरे से वो रोता हुआ भागा था और कहा था, “बाबा, बहुत गंदे हैं.”

बड़ी मुश्किल से मीरा ने उसे शांत किया था.

मीरा की मार्फत क्षशाँक ने दूसरी बार कोशिश कराई थी तो बाबा ने चेतावनी देते हुए कहा था, “सवाल करोगे तो मैं भाग जाऊँगा.”

क्षशाँक ने उसके बाद कोशिश करनी बंद कर दी थी और कहा था, “समय पर छोड़ो! कुछ अता पता लगा तो ठीक हैं अन्यथा उनकी सेवा करते रहो. अब उनसे कुछ नहीं पूछना. भाग गये तो न जानें वे कहाँ कहाँ भटकते फिरेंगे? हमें भी दु:ख होगा.”

“जी, ठीक कहा. मुझे उनकी सेवा करने से बहुत सुकून मिलता है. ऐसा लगता है जैसे मैं अपने पिता की ही सेवा कर रही हूँ, ” मीरा ने सहमति जताते हुए कहा.

“इस निस्वार्थ सेवा का फल ज़रूर मिलेगा मीरा.”

“सर, शुभ फल तो हमें उसी दिन मिल गया था जिस दिन आपके यहाँ काम शुरू किया था. एक दिन हमसे भूल हुई थी, वो हमें आज भी सालती रहती है.”

“अरे उसे छोड़ो. वो स्वाभाविक था. हम तो उस प्रकरण को कब के भूल गए थे. आज आपने नाहक याद दिला दिया.”

“डाँट से पूर्व ही हम खिसक लेते हैं,” मुस्कराते हुए मीरा रसोई की ओर भाग गई.

“स्त्री पुरुष के प्रति शक्की ही नहीं बल्कि संवेदनशील भी होती है. अगर स्त्री नहीं होती तो पुरुष कैसा होता?” क्षशाँक ने मन ही मन में सोचा और धीमे से मुस्करा दिया.

27

तीन महीने गुजर गए थे. ट्यूशन का काम अच्छा चल निकला था और मीरा काफी खुश थी.

मार्गदर्शन हेतु क्षशाँक का कई बार आभार जता चुकी थी.

उधर, न तो गुलाब की ओर से कोई सन्देश मिला था न ही क्षशाँक जा सके थे. या जान बूझ कर नहीं गये थे. उस दिन रविवार था. मीरा ने भी ट्यूशन पर पढ़ने वाले बच्चों को रविवार की छुट्टी दी हुई थी.

क्षशाँक के घर के सामने एक घोड़ा गाड़ी आकर रुकी और उसमें से दो स्त्रियाँ उतरी. दरवाज़े पर लगी घंटी बजाई. मीरा ने द्वार खोला और दो अजनबी स्त्रियों को खड़े पाया.

“कहिये, किससे मिलना हैं?” मीरा ने पूछा.

“प्रोफेसर साहब से.”

“वे तो इस समय नहीं हैं.”

“कहाँ गए हैं?”

“प्रात: भ्रमण पर जाते हैं. आज न जानें क्यों देर हो गई? अब तक तो उनको आ जाना चाहिए था?”

“ठीक है. हम बाहर लॉबी में ही इंतज़ार कर लेते हैं. आप उनकी कौन हैं?”

“मैं मीरा हूँ. उनकी सहायक हूँ.”

“ठीक है. आप अपना काम करें. हम बाहर ही इंतज़ार कर लेते हैं,” कह कर वे बेंत की कुर्सियों पर बैठ गई. मीरा ने उनको समाचार पत्र दे दिया और अपने काम में लग गई.

“अरे आप? आप कब आईं?”

दोनों स्त्रियों ने देखा कि प्रोफ़ेसर सामने खड़े हैं.

“बस, कुछ ही देर पूर्व.”

“बाहर क्यों बैठी हो?”

“उन्होंने अंदर आने की कही नहीं और हमने भी यही उचित समझा कि बाहर ही बैठा जाये,” एक स्त्री ने कहा.

“ओह! आइये, अंदर आइये.”

ये गुलाब और खुशबु थी.

“अरे मीरा! देखो तो कौन आये हैं,” आवाज़ लगाते हुए क्षशाँक ने कहा.

मीरा ने रसोई से ही उत्तर दिया, “हम मिल चुकी हैं, सर. आप बताइए ये भद्र महिलाएं हैं कौन?”

“अरे, आप आओ तो बताएं.”

मीरा बाहर आईं. बेसन में हाथ सने हुए थे, बोली, “नाश्ता बना रही हूँ. गैस पर कढ़ाई चढ़ी हुई है. यहाँ देर हुई तो वहाँ सब कुछ जल फुक कर राख जायेगा.”

“अरे, चलिए, हम भी आपकी मदद करती हैं,” गुलाब ने कहा. वे दोनों उठी और मीरा

संग रसोई में चली गई.

बैठक में रह गए प्रोफ़ेसर क्षशाँक और आनंद.

“कहो बेटा, पढ़ाई कैसी चल रही है?”

“चल ही नहीं, दौड़ रही है, अंकल.”

मीरा ने आनंद का उत्तर रसोई में सुन लिया था. उसने कहा, “कितना वाचाल है ये लड़का?”

“बच्चों को वाचाल होना ही चाहिए. तभी उनकी झेंप खत्म हुआ करती है. दूसरी बात, जो बचपन में वाचाल होते है, वे बहुत ज़ल्दी संजीदा हो जाया करते हैं,” रसोई से आवाज़ आई थी.

ये ज्ञात नहीं हो सका कि ये मनोवैज्ञानिक टिप्पणी गुलाब ने की थी या खुशबु ने.

थोड़ी देर बाद आवाज़ आई, “आ जाइये सर, नाश्ता तैयार है.”

आवाज़ मीरा की थी.

क्षशाँक और आनंद उठे, बाबा को साथ लिया, रसोई में पहुँचे और आसन पर अगल बगल बैठ गए. चुपचाप नाश्ता किया. क्षशाँक वापिस बैठक में आ गए. आनंद नाश्ता करता रहा.

“वाह! कितनी शांति है?” गुलाब ने कहा.

“भोजन करते समय सर किसी से बात नहीं करते. हमें भी उनकी आदतों का पता चल चुका है. उनके स्वादानुसार हम परोस देते हैं. इसलिए भी बोलने की ज़रूरत नहीं पड़ती,” मीरा ने कहा.

आनंद ने कहा, “देखो, अंकल देखो, मम्मी आपकी चुगली कर रही हैं.”

सभी ठहाका लगा कर हँस पड़े.

थोड़ी देर बाद तीनों महिलाएं और आनंद बाहर आये. सोफे के सामने दीवार के साथ लग कर बैठ गये.

गुलाब में आये बदलाव को क्षशाँक पहले ही देख परख चुके थे. चेहरे पर पहले जैसे लालिमा, कजरारी आँखें, मस्तक पर पड़ी जुल्फें गवाही दे रही थी कि गुलाब अब अपने पूरे शबाब पर पुन: पहुँच गया है.

“गुलाब, आपसे मिल कर हमें खुशी हुई.” क्षशाँक ने कहा.

“प्रोफ़ेसर साहब, पहले परिचय तो कराइए,” मीरा ने कहा.

“आप तीनों इतनी देर रसोई में रहे. गज़ब है. परिचय अभी तक नहीं हुआ. हमने तो सुना था कि स्त्रियाँ एक क्षण भी चुप नहीं रह सकती. आप तीनों चुप कैसे रही?”

“कभी कभी अनहोनी भी हो जाया करती है प्रोफ़ेसर साहब,” गुलाब ने हँसते हुए कहा.

“और हम चाहती थी कि परिचय आप ही कराएँ,” मीरा ने कहा.

"ओह! दरअसल हमने सोचा था कि परिचय हो गया होगा. खैर, आप हैं सुगंधा की मित्र प्रसिद्ध गायिका गुलाब और साथ हैं इनकी सहेली खुशबु."

"वाह!" मीरा ने कहा.

"आप हैं मीरा, आनंद की माँ और समाज सेविका. दोपहर बाद ये बच्चों को पढ़ाती है. सुबह हमारी मदद करने आ जाती हैं. हम इनके वाचाल बेटे की देखभाल करते हैं."

"वाह! क्या सद्भावनापूर्ण सहभागिता है? हर किसी की ज़रूरत पूरी हो जाती है," गुलाब ने कहा.

"दिल से दिल के रिश्ते को ही प्रेम कहते हैं गुलाब. दिल से दिल मिल जाएँ तो सद्भाव और सहभागिता स्थापित होने में देर नहीं लगती," क्षशाँक ने कहा.

"ठीक कहा प्रोफ़ेसर साहब. आपकी इसी नसीहत ने हमें संबल दिया है और अवसाद से बाहर आ पाए हैं. हम तन से तन के रिश्ते को प्रेम समझ कर भूल कर बैठे थे. उसी के लिए आज आभार जताने आये थे," गुलाब ने कहा.

"अरे, मित्रता में आभार कैसा?"

"तहजीब तो यही कहती है कि खुदा से भी पहले उस्ताद. आप मेरे उस्ताद हैं. अगर आप मुझे राह न दिखाते तो मैं आज भी गम में डूबी होती. आपने जो उपकार मुझ पर किया है, जिंदगी भर नहीं भूल सकती."

"उपकार करने वाले हम कौन होते हैं गुलाब? सब परवरदिगार करते हैं."

"परवरदिगार को भी तो कोई जरिया चाहिए था न? आप जरिया बने. ये क्या कम हैं?"

"ये आपकी जर्रानवाजी है. खैर. चलो, फिर एक गीत हो जाये," क्षशाँक ने पेशकश की.

"बिना गाजे बाजे?"

"मीरा, हमारे शयन कक्ष से हारमोनियम तो उठा लाओ."

मीरा उठी और हारमोनियम लेने चली गई. खुशबु उठी और रसोई से छोटी बड़ी प्लेट और दो चम्मच उठा आई. ये देख कर क्षशाँक हैरान हो गए कि खुशबु और मीरा ने उन प्लेटों से कितनी बढ़िया संगत की थी.

गुलाब ने गीत शुरू किया. खुशबु और मीरा ने उन प्लेटों से संगत दी. थोड़ी ही देर में समाँ बंध गया.

मेंरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई,
जाके सर मोर मुकुट मेरो पति सोई,
मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई

कोई कहे कारो, कोई कहे गोरो,

कोई कहे कारो, कोई कहे गोरो

लियोन हे अक्खियां को कोई

कोई कहे हलको, कोई कहे भारो,

कोई कहे हलको, कोई कहे भारो

लियोन हे तराजू तोल

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई.

गायक, श्रोता और संगत देने वाले, सभी मंत्रमुग्ध थे. सब की आँखें बंद थी. लगता था जैसे बुद्धि ने काम करना बंद कर दिया हो और दिमाग का स्थान दिल ने ले लिया हो.

भावविभोर होकर गुलाब गाती रही और शेष झूमते रहे. किसी को आभास तक नहीं हुआ कि गीत कई बार दोहराया जा चुका है.

श्रोताओं को होश तब आया जब गुलाब सम्मोहन की स्थिति में पहुँच गई. वो रुकी और जहाँ बैठी थी, वहीं की वहीं लुढ़क गई.

“ओह! ये क्या हुआ?” मीरा ने प्रश्न किया.

जवाब खुशबु ने दिया, “फ़िक्र की कोई बात नहीं. ये भक्ति संगीत का प्रभाव है. थोड़ी देर बाद सामान्य हो जायेंगी.”

क्षशाँक ने कहा, “मीरा, इनको सीधा लिटा दो. और तिल के तेल से इनके तलुओं पर मालिश कर दो. उससे लाभ होगा.”

“जी सर,” कह कर मीरा ने गुलाब को सीधा लिटा दिया. उसके पैर भी फैला दिए और तेल लेने चली गई.

खुशबु ने कहा, ‘लाइए, तेल हम मल देती हैं.”

“ठीक है,” मीरा ने कहा और तेल की शीशी खुशबु को थमा दी.

थोड़ी देर बाद गुलाब ने आँखें खोली. क्षशाँक ने कहा, “उठो, गुलाब. चाय लोगी या कॉफी?”

“कॉफी.”

मीरा कॉफी बनाने चली गई. क्षशाँक ने कहा, “जितना मधुर गीत था उतनी ही मधुर आवाज़. आनन्द आ गया?”

“शुक्रिया प्रोफ़ेसर साहब.”

“मैं कहाँ गया था अंकल? मैं तो यही था,” वाचाल बालक फिर चहक उठा.

ठहाका लगा कर सभी हँस पड़े.

मीरा बोली, “सर, जब भी मौका मिले, ये यूँ ही बाल की खाल निकाला करता है. कभी कभी गुस्सा तक दिला देता है तो कभी हँसा देता है.”

“हँसना हँसाना तो अच्छी बात है. गुस्सा करना न करना आपके हाथ में है. क्रोध करती ही क्यों हो?” क्षशाँक ने कहा,

“यही मैं कहता हूँ, अंकल. मम्मी मानती ही नहीं.”

“सर, आपने इसको बहुत सिर चढ़ा रखा है,” मीरा ने उलाहना देते हुए कहा.

“अरे बच्चा ही तो है. बच्चों का सुख भाग्यशालियों को मिला करता है,” गुलाब ने कहा.

“सो तो है,” मीरा ने कहा.

क्षशाँक ने गुलाब के मन की छिपी व्यथा को समझ लिया था. मगर कुछ सोच कर वे चुप रह गए.

कभी गम तो कभी खुश. कभी हँसी तो कभी ठठ्ठे. कभी भक्ति संगीत तो कभी हल्के फुल्के मजाक. दिन अच्छा गुजरा.

“यही तो जिंदगी है जिसमें आशा निराशा लगी ही रहती है. देखो न, गुलाब ने शादी नहीं की फिर भी बच्चों के होने को सौभाग्य मानती है. हमें लगता है कि उसे विवाह कर लेना चाहिए,” क्षशाँक ने मन ही मन सोचा था.

28

“अच्छा प्रोफ़ेसर साहब. अब हमें इजाज़त दीजिए. फिर मिलते हैं,” गुलाब ने कहा.

क्षशाँक जो कहना चाहते थे, वो मीरा ने कह दिया, “दीदी, आज यहीं रुको न? फिर न जानें कब मुलाक़ात हो?”

प्रस्ताव सुन कर क्षशाँक हैरान.

“घोर आश्चर्य, क्या मीरा को भी दूर बोध होता है?” क्षशाँक ने मन ही मन स्वयं से प्रश्न किया था.

“आप तो खुद सहायिका हैं. गृह स्वामी कहें तो कुछ सोचूँ,” गुलाब ने चुटकी लेते हुए कहा.

ये सुन कर मीरा खिलखिला पड़ी और बोली, “अरे, गृहस्वामी के कहने पर ही हम आपसे अनुरोध कर रहे हैं.

“गृहस्वामी न तो गूंगे हैं और न शर्मीले? अनुरोध उनकी ओर से आना चाहिए था,” गुलाब ने कहा.

चूहलबाज़ी सुन कर क्षशाँक ठहाका लगा कर हँस पड़े और बोले, “गप्पों का जाल बुनना तो कोई स्त्रियों से सीखे. आज ज्ञात हुआ कि औरतें चुप क्यों नहीं रह सकती?”

ये सुन कर मीरा तो खिलखिला कर हँस पड़ी मगर गुलाब ने उपालम्भ देते हुए कहा, “प्रोफ़ेसर साहब, थोड़ी देर पूर्व आप कह रहे थे कि हम तीन स्त्रियाँ रसोई में एक साथ रही फिर भी चुप कैसे रहीं? और अब कह रहे हो स्त्रियाँ चुप रह नहीं सकती. आपका मतलब क्या है?”

“अरे, न हमने अनुरोध किया है और न ही एतराज़? मीरा की ये हाज़िरजवाबी है. मीरा के स्थान पर अगर कोई और स्त्री होती तो आपसे बहुत बुरा मान जाती.”

“किस बात का?”

“आपकी उस टिप्पणी का कि आप तो खुद सहायिका हैं. गृह स्वामी कहें तो कुछ सोचूँ,” क्षशाँक ने गुलाब की टिप्पणी को दोहराते हुए कहा.

“ओह! माफी चाहती हूँ.”

“अरे, माफी की क्या बात? मित्रों में न माफी माँगी जाती है न किया जाता है शुक्रिया. अब कहें कि रुकेंगी या जायेंगी?” मीरा ने कहा.

“अब भी यही कहूँगी कि गृहस्वामी क्या कहते हैं?”

“अरे क्या गृहस्वामी, गृहस्वामी लगा रखा है? ये घर आप सब का है. आप रुकेंगी तो हमें अच्छा लगेगा.”

“फिर ठीक है. आप सब के अनुरोध को अस्वीकार करना तो तहजीब के खिलाफ होगा,” गुलाब ने कहा.

“मीरा, अगर घर जाना ज़रूरी न हो तो आप भी यहीं रुकें. हम उतनी गप्पें कहाँ मार सकते हैं जितनी आप,” क्षशाँक ने मुस्कराते हुए मीरा को कहा.

इस पर सभी ठहाका मार कर एक बार फिर हँस पड़े.

शाम हो चली थी. चाय पान चल रहा था. क्षशाँक ने गुलाब से मुखातिब होते हुए पूछा, “प्रश्न बहुत निजी है, गुलाब. अत: बुरा नहीं मानना. लगता है कि आपने विवाह नहीं किया?”

“ठीक कहा प्रोफ़ेसर साहब.”

“वो क्यों?”

“दरअसल विभाजन के समय हमारे परिवार के कई लोग मारे गए थे. दो बचे थे. पाकिस्तान जाने वाली गाड़ी में वे तो चढ़ गए, मारामारी इतनी थी कि हम बिछुड़ गए थे.”

“ओह!” क्षशाँक ने आह भरी.

“भयभीत हुए हम स्टेशन के एक कोने में छिपे बैठे थे कि एक साधु बाबा की नजर हम पर पड़ गई. उन्होंने अपना भगवा चोगा हमें पहनाया और मार काट करती वहशी भीड़ से बाहर निकाल ले गए थे. पाँच छ: महीने हम उन्हीं की कुटिया में रहे.”

“फिर?”

“वे कृष्ण भक्त थे. अपने इकतारे पर वे मीरा और सूरदास के गीत गाया करते थे. धीरे धीरे हम भी उनके साथ गाने लगी.”

“वाह! फिर?” मीरा ने पूछा.

“गाने का शौक हमें बचपन से ही था. बाबा मेरी मधुर आवाज़ सुन कर एक दिन बोले,

“बेटी! भगवान कृष्ण के गीत गाया करो. वे प्रेम रस की वर्षा किया करते हैं. मन को बहुत शांति मिलती है. आपकी जबान पर तो सरस्वती विराजमान हैं. वे ही आपका कल्याण करेंगी?”

“उसके बाद?”

“जब भी हम भिक्षाटन पर जाते तो मैं उनके संग गाने लगी. वे काफ़ी वृद्ध थे. एक दिन वे चल बसे. हम पर एक बार फिर बिजली गिरी. उन्ही की कुटिया की लकड़ियों से हमने उनका दाह संस्कार किया, उनको अन्तिम प्रणाम कर दिशाहीन से हो कर हम चल पड़े.”

गुलाब रुकी. ऐसा लगता था जैसे उसकी साँस फूल गई हो और साँस लेने के लिए रुकी हो.

क्षशाँक ने देखा कि मीरा की आँखों से आँसू टप टप गिर रहे हैं. विस्फारित आँखों से आनंद उसे देख रहा है. खुशबु स्तब्ध है.

अचानक आवाज़ आई, “बेटी! आपकी जबान पर सरस्वती बैठी हैं. भगवान कृष्ण के गीत कल्याण करेंगे. मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है,” किसी अदृश्य शुद्धात्मा ने मुझे संबोधित करते हुए कहा.

“ओह! लगता है वो अदृश्य शुद्धात्मा वही साधु थे जिन्होंने आपकी रक्षा की थी,” क्षशाँक ने अंदाज़ लगाते हुए कहा.

“हाँ, आपका अनुमान ठीक है. आवाज़ से हमने उनको पहचान लिया था. वो उद्बोधन बाबा का ही था. उसके बाद हम उस कोठे पर पहुँच गए जहाँ आप मिले थे,” गुलाब ने बात आगे बढ़ाई.

“अच्छा किया,” क्षशाँक ने कहा.

“मुसीबत ये थी कि वो बदनाम गली थी. उसी समय मुझे खुशबु का खयाल आया. उससे संपर्क किया. वह भी दुखियारी थी. उसका साथ मिला. बचपन का हमारा एक साथी था जोरावर. पहलवानी करता था. उसे अपनी हिफाज़त के लिए बुलाया. वो हमारी सुरक्षा करता है. उसको वेतन देती हूँ. बस, इतनी सी मेरी कहानी है.”

“सद्भावनापूर्ण सामंजस्य और श्रेष्ठ मंजिल,” क्षशाँक ने कहा.

“अब सब कुछ श्री कृष्ण को अर्पण है. मेरे तो गिरधर गोपाल गाते हुए ऐसा लगता है जैसे वे ही मेरे पति हैं, वे ही मेरे सखा,” अपनी दास्तान को विराम देते हुए गुलाब ने कहा.

“वाह, वाह, वाह!” क्षशाँक बोल उठे.

गुलाब नज़र नीचे किए थी. अपने पैर के अंगूठे से वह फर्श को कुरेद रही थी.

“वाह , वाह, कृष्ण भक्त रसखान, उमर अली और खुसरो आदि के बारे सुना था. आज ज्ञात हुआ कि वो श्रृंखला अब भी जारी है. मैं आपको नमन करती हूँ, बहन गुलाब,” मीरा ने नमन करते हुए कहा.

“बहन, आपका आभार. आपको हिंदी सहित्य की अच्छी जानकारी है,” गुलाब ने कहा.

“आपकी क्या कहानी है, खुशबु?” क्षशाँक ने खुशबु की ओर देखते हुए पूछा.

“छोड़ो सर, उस दौर के किसी भी शख़्स से पूछोगे तो वह तन मन से ज़ख़्मी मिलेगा. हम तो इस विचार से जीवन बसर कर रहे हैं कि बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुध लेय,” दार्शनिक भाव से खुशबु ने कहा.

मीरा अब भी ग़मगीन थी.

क्षशाँक ने कहा, “मीरा, खुशबु को अपनी राम कहानी सुनाओ न? या आप भी कहोगी कि बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुध लेय.”

“जी सर. ठीक कहा. हम सोच रही थी कि हमें ही कष्ट हैं. मगर आज पता चला कि बहुत से दुखियों के मुकाबले में हमारा कष्ट तो कुछ भी नहीं,” मीरा ने कहा.

“यही संसार है मीरा. खुशियाँ कम और गम अधिक. फिर भी अपने कर्म करते रहो. प्रेम मार्ग से भी श्रेष्ठ है कर्म मार्ग. राम भी दाता तभी बनते हैं जब हम कर्म मार्ग पर चलते हैं,” क्षशाँक ने कहा.

“अंकल, मेरे शिक्षक ने एक दोहा सुनाया था. वो तो कर्म मार्ग के उलट है,” आनंद बोल उठा.

“वो क्या?”

“अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम, दास मलूका कह गए, सब के दाता राम.”

“कौन कहता है कि अजगर और पक्षी कुछ नहीं करते? भोजन के लिए अजगर को सरकना पड़ता है और पक्षी को उड़ना पड़ता है. हाथ-पाँव उनको भी मारने पड़ते हैं. तब जाकर उनको खाने को कुछ मिलता है,” क्षशाँक ने कहा.

“फिर ये दास मलूका?”

“होगा कोई मेरे जैसा बुद्धू.”

“आप तो कर्म मार्ग पर चलते हो. आप बुद्धू कैसे हुए?” आनंद ने कहा.

“फिर कोई आप जैसा बुद्धू होगा.”

“आप भी खूब हो अंकल. हम कक्षा छह में पढ़ते हैं. कक्षा और गृह कार्य नियमित करते हैं. हमारी कभी कोई शिकायत मिली क्या? फिर हम बुद्धू कैसे हुए?”

“फिर आप ही बताओ कि ये मलूक दास है कौन?”

“छोड़ो न अंकल. होगा कोई बुद्धू,” वाचाल बालक ठहाका मारते और ताली बजाते हुए बोल उठा.

हम तीनों भी उसके ठहाके में शरीक हो गये थे. गुलाब अपने ही खयालों में खोई हुई थी.

“बातूनी कहीं का,” मीरा ने कहा.

“जैसी माँ, वैसा बेटा,” क्षशाँक ने कहा.

“सर, आप भी न!”

तभी क्षशाँक ने देखा कि गुलाब अब भी फर्श को कुरेद रही है. उन्होंने मीरा की ओर इशारा किया. मीरा ने उसके कंधे पर हाथ रखा और बोली, “दीदी, कहाँ खोई हुई हो?”

“चलो, आराम करते हैं,” गुलाब ने कहा.

“जी, चलिए,” गुलाब और खुशबु को लेकर मीरा बाई ओर के कक्ष में चली गई.

बैठक में रह गए क्षशाँक और आनंद जो ऊँघने लगा था. क्षशाँक ने कहा, “जाओ बेटा, तुम भी जाओ और सो जाओ.

उसके बाद क्षशाँक ने बाबा के कमरे में पानी का जग रखा, हल्की ध्वनि में टेप रिकार्डर चलाया और अपने कमरे की ओर बढ़ गए.

घर में गहमा-गहमी खत्म हो गई थी. सब ओर सन्नाटा छाया हुआ था. और जब सन्नाटा हो तो दिमाग अति सक्रिय हो जाया करता है और उसमें कुछ न कुछ उथल पुथल मच जाया करती है.

क्षशाँक के दिमाग में आज फिर से उथल पुथल मची हुई थी. कभी सुगंधा और उसकी आपबीती याद आ रही थी तो कभी मीरा, गुलाब और शबनम की.

अपने कमरे की ओर जाते हुए उसके सामने शबनम का क्षत विक्षत चेहरा और दबा कुचला शरीर बार बार प्रकट हो रहा था. वो कितनी बिंदास थी. झिझक तो उसके आस पास भी नहीं फटकती थी.

हालाँकि उन दोनों के बीच नजदीकियाँ सहपाठी होने के नाते थी फिर भी वो अनेक बार ऐसे व्यवहार कर बैठती थी जैसे वो क्षशाँक पर जान छिड़कती हो. क्षशाँक भी उसके साथ हँसी मजाक किये बिना नहीं रहता था.

सहपाठी शबनम पर तंज कसते, “लो आ गई क्षशाँक की दीवानी.”

वो मुस्करा कर कहती, “बुल्ले शाह को पढ़ो मूर्खो या अपनी नज़र का इलाज़ कराओ. इश्क हकीकी को इश्क मजाज़ी समझते हो. नादानो, तुम दीवानगी को क्या जानो?”

इतना सुनते ही कक्षा कक्ष ठहाके की गूंज से गुंजायमान हो जाया करता.

“अरे खुशबु को भूल कर हम भूत में खोये है. खुशबु ने तो अपनी आपबीती अभी तक सुनाई ही नहीं है जो रहस्य बने रहने के कारण मुझे और अधिक बेचैन किये हुए है,” क्षशाँक बुदबुदाये थे.

किसी ने ठीक ही कहा है कि जिंदगी साँप और सीढ़ी का खेल है. कभी उत्कर्ष तो कभी अपकर्ष. किसी को कुछ ज्ञात नहीं कि कब वो शिखर पर पहुँच जाये और कब रसातल पर जा गिरे?

उसी समय माँ के शब्द क्षशाँक के कानों में गूंज उठे थे, “तुम बिल्कुल नहीं बदले वत्स. नाहक बेचैन हो जाया करते हो. अब अँधेरा है तो कल उजाला भी होगा.”

माँ का परामर्श याद आने पर क्षशाँक अदृश्य शक्ति के सम्मुख नतमस्तक हो गया था.

29

गुलाब और खुशबु लौट गई थी. तीन दिन बाद क्षशाँक को खुशबु का खत मिला था. उसने लिखा था, “शुक्रिया प्रोफ़ेसर साहब. महफ़िल फिर से जमने लगी हैं. मुजरे भी परवान चढ़ने लगे हैं. आइये न कभी.”

सन्देश पाकर क्षशाँक बहुत खुश हुए थे. उनकी खुशी के एक दो कारण और थे. प्रथम, बाबा अपनी बंसी पर खुशी के गीतों की धुन बजाने लगे थे. आजकल उनका सर्वप्रिय गीत है, “न मुँह छुपा के जिओ और न सर झुका के जिओ, ग़मों का दौर भी आये तो मुस्करा कर जिओ.”

दूसरा, मीरा का ट्यूशन का काम अच्छा चल निकला था और आनंद भी प्रगति किये जा रहा था. लगता था जैसे सभी अपने अपने कर्मपथ पर निष्ठा के साथ आगे बढ़ रहे हैं और उनको आंतरिक प्रसन्नता प्रदान कर रहे हैं.

“हे ईश्वर! हम सब पर अपनी कृपा यूँ ही बनाये रखना,” क्षशाँक ने अदृश्य शक्ति को नमन करते हुए कहा था.

पता नहीं ईश्वर ने उनकी सुनी या नहीं मगर उसके बाद क्षशाँक को काफी आंतरिक खुशी और शान्ति मिली थी. शांति मिलनी ही थी क्योंकि दूसरों के लिए निस्वार्थ भाव से की गई विनती सदा सुखदाई हुआ करती हैं.

“माँ भी तो यही कहा करती थी कि मन की शांति के लिए निस्वार्थ भाव से की गई प्रार्थना सदा सार्थक और सुखदाई हुआ करती है,” माँ की राय का स्मरण करते हुए उन्होंने सोचा था.

उन्हीं के खिलाये पिलाये संस्कार आज तक काम आ रहे थे. आज क्षशाँक एक बार फिर मन ही मन उस आनंद से सराबोर थे जिसको शब्दों की माला में कभी नहीं पिरोया जा सकता.

आज उसका चेहरा दमक रहा था. उसे महसूस हुआ था कि चेहरे की चमक विचारों पर निर्भर करती है. अगर आत्मविश्वास है तो चेहरा तेजस्वी दिखता है. अगर पूरी कायनात हेतु प्रेम है तो इंसान का चेहरा सात्विक दिखता है. अगर मन में दूसरों के लिये सम्मान है तो चेहरा विनम्र दिखता है. मन के यही भाव मनुष्य को खूबसूरत बनाते हैं. उसे इंसान बनाते हैं.

गुरु पूर्णिमा पर गुलाब का खत मिला था जिसमें उसने लिखा, “गुरु पर्व पर मुझे आपके पास आना चाहिए था. कृष्ण भगवान के निर्देश पर इस पावन पर्व पर मैं खुले आसमान के तले एक सार्वजनिक कार्यक्रम पेश कर रही हूँ. करबद्ध अनुरोध है कि आप सपरिवार मुख्य अतिथि बन कर मुझे कृतार्थ करे, चरण स्पर्श.”

सन्देश शाम को मिला था. अगले दिन मीरा आई और क्षशाँक के दमकते चेहरे को देख कर बोली, “सर, आज आप बहुत खुश नजर आ रहे हैं.”

“हाँ मीरा, हाँ. हमारी खुशी के कारण भी आप, आनंद, बाबा, गुलाब आदि ही हैं,” कह कर उन्होंने गुलाब का खत मीरा के हाथ में थमा दिया.

उसने खत पढ़ा और बोली, “सर, ये परोपकार का फल है. आपके चरण छूना चाहती हूँ

मगर आप उसकी अनुमति ही नहीं देते.”

“आप सब की सोच में जो सकारात्मक बदलाव आये हैं, हमारे लिए वहीं सब कुछ है मीरा. सबसे अधिक अभिभूत तो हम बाबा में आये बदलावों को देख कर हैं जिनकी हमने कभी उम्मीद नहीं की थी.”

“हाँ सर. उस बदलाव से तो मैं भी आश्चर्यचकित हूँ.”

“वो बदलाव आपकी सेवा का फल है मीरा. वे आज भी आपको अपनी पुत्रवधू समझते हैं. करीब पन्द्रह दिन पूर्व वे हमसे झगड़ बैठे थे.”

“अरे! आपने बताया नहीं. किस बात पर?”

“वे पूछ रहे थे तुम बहू को अपने साथ क्यों नहीं रखते? शाम को रोज कहाँ भेज देते हो?”

“ओह! फिर तो आपके लिए बहुत बड़ी उलझन पैदा हो गई होगी?”

“नहीं, कुदरत की कृपा से इस उलझन को दूर करने में हम कामयाब हो गए थे. हमने कह दिया था कि वे चिकित्सालय में नौकरी करती हैं. जान बूझ कर उन्होंने रात की ड्यूटी ले रखी है जिससे दिन भर आपकी सेवा होती रहे.”

“ओह! आप कितने ज़हीन हैं.”

“अरे! एकबारगी तो हम भी चकरा गए थे. समझ नहीं आया था कि क्या करें और क्या कहें? मगर कुदरत ने ऐन मौके पर सूझ पैदा कर दी थी और हमने बात संभाल ली. क्या करते? समय की ज़रूरत भी वही थी.”

“ओह! आपने बहुत अच्छा किया था. हम अब समझी. करीब पन्द्रह दिन पहले ही उन्होंने मुझे अपने पास बुलाया था और अश्रुपूरित आँखों से ढेर सारा आशीर्वाद देते हुए कहा था, “बहू रानी! तुम कितनी अच्छी हो और मेरा कितना खयाल रखती हो? नींद पूरी नहीं होती होगी. बेटी! दिन में सो लिया करो.”

“फिर!”

“मैं भी हैरान. मैं समझ नहीं पाई थी कि बाबा कह क्या रहे हैं? फिर भी हमने कह दिया था कि ठीक है बाबा. ज़रूरत होगी तो सो लिया करूँगी?”

“आप भी कम ज़हीन नहीं हो, मीरा. आपने बहुत अच्छा उत्तर दिया. आपकी सेवा और आप पर उनके विश्वास ने उनका आत्मबल अब तक बनाये रखा है. वह विश्वास टूटना नहीं चाहिए.”

“जी सर. कोशिश तो यही रहती है कि वे खुश रहें. इसलिये गुलाब दीदी के कार्यक्रम में मैं तो चल नहीं पाऊँगी. आप और आनंद चले जाना.”

“वो क्यों?”

“बाबा की देख भाल कौन करेगा?”

“अरे गुलाब ने सब को बुलाया है. बाबा को भी साथ ले चलेंगे.”

“वे चलेंगे क्या? बाहर कभी निकले नहीं.”

“अवसर भी कहाँ मिला? बाबा संगीत प्रेमी हैं. जब संगीत कार्यक्रम के बारे में बताएंगे तो हमें पूरा विश्वास है कि वे अवश्य चलेंगे.”

“अगर ऐसा हो तो अति श्रेष्ठ,” मीरा ने चहकते हुए कहा.

“देख लेना. ऐसा ही होगा. बाबा किसी संगीत कार्यक्रम को छोड़ दें, ऐसा कभी नहीं हो सकता.”

“फिर तो कोई समस्या नहीं. वैसे गुरु पूर्णिमा कब है?”

“तीन दिन बाद.”

“फिर तो आपको आज ही बात कर लेनी चाहिए. दोपहर करेंगे या नाश्ते बाद?”

“सुबह सुबह मन मस्तिष्क ताज़ा होता है. क्यों न नाश्ते के समय ही बात कर ली जाये. उससे बाबा को सोचने का समय भी मिल जायेगा,” मीरा ने सुझाव दिया.

“ये ठीक है. नाश्ते में क्या बना रही हो?”

“बाबा कल खीर और मीठे पूड़े बनाने के लिए कह रहे थे. हम आपको कहना भूल गई थी कि दूध अधिक ले लेना.”

“कोई बात नहीं. हम दूध वाले से फोन कर पूछ लेते हैं कि दूध उपलब्ध है या नहीं? होगा तो हम अभी ले आयेंगे. डेरी पास ही तो है.”

क्षशाँक ने दूधिया को फोन किया. उसने कहा, “सर, दूध उपलब्ध है. कितना चाहिए?”

“ठीक है. दो किलो दूध चाहिए. बचा कर रखना. हम आ रहे हैं.”

दूधिया ने कहा, “प्रोफ़ेसर सर, आप कहाँ तकलीफ करेंगे. मैं अपने बेटे के हाथ दूध भेज देता हूँ.”

नाश्ते के समय क्षशाँक बोले, “बाबा, आपको गुलाब याद हैं न?”

“फूलों के राजा गुलाब को कौन भूल सकता है? मगर किस गुलाब की बात कर रहे हो? लाल वाले की या पीले की?” बाबा ने पूछा.

“अरे बाबा. वो गुलाब नहीं बल्कि वो गुलाब जो कुछ समय पहले हमसे मिलने आई थी. भगवान कृष्ण का गीत सुनाया था. याद आया?”

“ओह! हाँ, बोलो, उसे क्या हुआ?”

“हुआ कुछ नहीं. गुरु पूर्णिमा पर वो संगीत कार्यक्रम पेश कर रहीं हैं. हम सबको बुलाया है. आपको तो संगीत बहुत अच्छा लगता है. आपको भी चलना चाहिए.”

“अरे, तुम, बहू रानी और बचुआ जाओ. हम बूढ़े आपके साथ क्या करेंगे?”

“बाबा, आप बूढ़े कहाँ? आप तो हमसे भी अधिक जवान हो,” आंनद चहक उठा.

आनंद की बात सुन कर बाबा ने ठहाका मारा और बोले, “हाँ बेटा! तुम ने ठीक कहा.

अभी तो मैं जवान हूँ. मगर तुम्हारे सामने नहीं.”

“हमारे सामने भी बहुत जवान हो बाबा. देखो न आप कितनी मधुर बंसी बजाते हो. अपनी बंसी ले चलना. आप भी अपना हुनर दिखाना,” क्षशाँक ने कहा.

“जैसी प्रभु की इच्छा. चलेंगे. अगर गुलाब बेटी ने बुलाया है तो ज़रूर चलेंगे,” बाबा ने कहा.

उनकी रजामन्दी सुन और देख कर मीरा और आनंद बहुत खुश हुए. क्षशाँक ने भी राहत की साँस ली थी.

किसी अनजान के अट्टहास से कक्ष गूंज उठा.

30

बासठ वर्षीय क्षशाँक अब सोलह वर्षीय क्षशाँक के डिग्री कालिज के समय में डूब उतर रहे थे.

रह रह कर यादें ताज़ा हो रही थी. हालाँकि वे काफी हद तक विरक्त हो चुके थे मगर मुक्त होना अभी भी शेष था क्योंकि यादें पीछा छोड़ती कब और कहाँ हैं?

वे संसार की क्षणभंगुरता को नज़दीक से कई बार देख चुके थे. कौन किसका साथ छोड़ कर कब रुख्सत हो जाये, कुछ नहीं कहा जा सकता? क्षेमा तो सामाजिक कारणों से बिछड़ी थी मगर माँ, पिता जी, सुगंधा, शबनम और बाबा के बच्चों की क्या कहें?

हो सकता है कि बाबा के बच्चे अब भी कहीं हों तो भी उनका क्या लाभ? बाबा उनसे क्यों बिछड़े? बाबा बिछड़ भी गए थे तो वे बच्चे कैसे जिन्होंने उनकी खोज खबर तक नहीं ली.

ये कैसे संबंध हैं? जिसने जन्म दिया, पालन पोषण किया, उसी को धता बता दी या भूल गए.

और क्षेमा?

उसका क्या दोष था? आम युवतियों की तरह उसने प्रेम ही तो किया था. अन्य युवतियों की तरह उसने अपने प्रेम को अपने माता पिता तक से नहीं छिपाया था. उसकी जिंदगी खुली किताब से कम न थी. उसके खुलेपन के कारण हमारे सहपाठी उस पर ताना कसा करते थे तो वो खुल कह देती थी, “हाड़ माँस के पुतलों! मोहब्बत के बारे में तुम क्या जानो?”

आम लड़कियों की तरह वह अपने प्रेम को रत्ती भर भी नहीं छिपाती थी. क्षशाँक उसकी साफगोई से बहुत प्रभावित था. उसकी स्पष्टवादिता को देख कर वह उससे कुछ पूछना चाहता था मगर हिम्मत नहीं होती थी.

एक दिन दोनों कालिज के लॉन में बैठे थे. उसके साहस को देख कर क्षशाँक पहले ही हैरान था, वह बहुत कुछ जानने को उत्सुक था ही. उस दिन उसने पूछ ही लिया था, “क्षेमा, अपनी मोहब्बत को तुरंत मंजूर कर लेती हो. इतना साहस कहाँ से लाती हो?”

“साहस की क्या बात है. पारदर्शी प्रेम तो पूजा है. हाँ, अगर मोहब्बत में कुछ दुराव छिपाव करेंगे तो वो पाप बन जायेगा. उसका अंत भी अच्छा नहीं होता.”

“ओह! फिर भी, अगर हमारा प्रेम परवान नहीं चढ़ा तो?”

“परवान चढ़ने में कोई कमी है क्या?”

“मेरा आशय था कि हमारा विवाह नहीं हुआ तो?”

“कोई बात नहीं. अगर ऐसा होता भी है तो कारण देखूँगी. अगर कारण वाजिब होगा तो आपसे दूरी बना लूंगी क्योंकि मेरी मोहब्बत एक केन्द्र पर आधारित नहीं बल्कि पूरी कायनात पर आधारित है.”

क्षेमा का तर्क सुन कर क्षशाँक गिरते गिरते बचा था. वह पहले से भी अधिक स्तब्ध हो गया था. कुछ देर तक वो इतना स्तब्ध रहा था कि कोई प्रतिक्रिया तक नहीं दे पाया था.

संयत होकर उसने कहा था, “हमसे दूरी बना कर क्या आप अपने प्रेम की तौहीन नहीं करोगी?”

“मैंने दूरी की बात की है. यानि शरीरों की दूरी. मन की दूरी के बारे में तो कुछ कहा ही नहीं है.”

क्षशाँक का मुँह खुला का खुला रह गया था.

थोड़ी देर बाद बोला, “क्या मतलब? हम समझे नहीं. स्पष्ट कहें.”

“तन की दूरी मन की दूरी कभी नहीं होती मेरे प्राणाधार. अगर सच्चा प्रेम हो तो तन की दूरी के बावजूद मन के यानि प्रेम के तार जुड़े ही रहते हैं.”

“अगर आपकी बात थोड़ी देर के लिए मान भी लूँ तो प्रेम के वे तार कब तक जुड़े रहेंगे?”

“जब तक प्रेमी प्रेमिका जीवित हैं, तब तक तो निश्चित है. आध्यात्म तो कहता है कि अगर मन से मन मिले हों तो जीव का जीव से संबंध अनंत काल तक हो सकता है.”

“क्या? ‘अनंत काल तक संबंध’ पर आप भरोसा करती हैं क्या?”

“भरोसा न करने का कारण भी तो नहीं है? भरोसे के कारण ही तो कंकर कंकर शंकर हैं.”

तर्क सुन कर क्षशाँक को चुप रह जाना पड़ा था. माँ के खिलाये पिलाए संस्कारों का तकाज़ा भी यही कहता था.

बस वो इतना ही कह पाया था कि आपके जज़्बे और भरोसे को नमन.

“शुक्रिया मेरे हमसफ़र, शुक्रिया,” कह कर क्षेमा ने क्षशाँक के मस्तक पर झूलती आवारा जुल्फों को संवार दिया था.

मुस्कराते हुए कहा था, “इनको संभाल कर रखा करो. इन पर कोई परी टूट पड़ी तो उससे पहले मैं तुझ पर टूट पड़ूँगी.”

क्षशाँक कुछ नहीं बोला. सिर्फ मुस्करा दिया था.

कालिज के बाद वो घर पहुँचा था और माँ के गले से लग कर झूल गया था और कहा था “माँ, आप कितनी अच्छी हो? मेरी शंका का समाधान किया करती हो. क्षेमा कहती है कि

सच्चे प्रेमियों के तार अनंत काल तक जुड़े रहते हैं."

माँ ने यह कह कर क्षशाँक को अपने वक्ष से लगा लिया था, "वो ठीक कहती है वत्स, प्रेम बलि चाहता है. बलि देने पर प्रेम अधूरा नहीं बल्कि परवान चढ़ा करता है."

बासठ वर्षीय क्षशाँक ने अपने मुँह में कड़वाहट सी महसूस की थी और करवट बदल ली थी.

"सुनंदा, बाबा, मीरा, गुलाब, खुशबु. क्षेमा? माँ के मुताबिक़ क्या इन सबके तार मुझ से जुड़े थे या जुड़े हैं?" बासठ वर्षीय क्षशाँक ने सोचा था.

उसे कोई माकूल उत्तर नहीं मिला. हाँ, सामने की दीवार पर टंगा माँ का चित्र ज़रूर मुस्करा रहा था जैसे कह रहा हो, "क्षशाँक! तुम बिल्कुल नहीं बदले वत्स. नाहक बेचैन हो जाया करते हो."

31

कालिज की यादों ने बासठ वर्षीय क्षशाँक को बेचैन कर दिया था. रह रह कर उसे क्षेमा की याद आ रही थी. "कहाँ होगी क्षेमा? कैसी होगी? क्या कर रही होगी?" जैसे प्रश्न उसको मथने लगे थे.

वो कहा करती थी कि मैं वायु सेना में पायलट बनूँगी. तुम क्या बनोगे? उस प्रश्न को सुन कर क्षशाँक अचकचा जाया करता था क्योंकि उसने कभी सोचा ही नहीं था कि वह क्या बनेगा या क्या करेगा?

"पायलट और प्रेमी. दोनों की राशि एक. दोनों में कितनी समानता है? दोनों हरदम तत्पर. दोनों ऊँची से ऊँची उड़ान भरते हैं. दोनों रोज खतरों से खेलते हैं. दोनों को प्रत्येक क्षण सतर्क रहना पड़ता है. थोड़ी सी चूक जान लेवा हो सकती है," क्षशाँक ने सोचा था.

शून्य से शून्य का मिलन फिर से चूक गया था क्योंकि संसार किसी चक्रव्यूह से कम नहीं है. जो भी इसमें घुसा, इससे बच कर बिरला ही निकल पाया है. फिर क्षशाँक की क्या बिसात?

संसार से मुक्त होने की अपनी नाकामयाबी पर सोचते सोचते क्षशाँक के मुख पर मुस्कान तैर गई थी.

पच्चीस वर्ष की आयु में क्षशाँक प्रोफ़ेसर बन गए थे. एक दिन वे अपने साथियों संग शिक्षक कक्ष में बैठे कुछ पढ़ रहे थे कि एक साथी ने अकस्मात कहा था, "मोहब्बत करनी सीखनी हो तो कोई क्षेमा से सीखे."

क्षेमा का नाम सुन कर क्षशाँक के कान खड़े हो गए थे मगर वे चुप रहे क्योंकि क्षेमा कोई और भी तो हो सकती है.

दूसरे साथी जिनका नाम देव था ने पूछा, "ये क्षेमा कौन हैं?"

"वायु सेना की एक फ्लाईट लेफ्टिनेंट. उसको मेरे भाई ने पसंद कर लिया था. मगर वो अपने कौल पर टिकी रही और कहा था, "प्रेम एक से ही होता है, अनेक से नहीं," प्रशाद ने

कहा.

"क्या मतलब?" देव ने पुन: पूछा था.

"कालिज के दिनों में वो किसी से प्रेम करती थी मगर दोनों की भिन्न भिन्न जातियाँ होने के कारण क्षेमा के बाप को वह रिश्ता मंजूर नहीं था. क्षेमा ने न केवल अपने पिता का मान सम्मान रखा बल्कि अपने प्रेम का भी," प्रशाद ने खुलासा करते हुए कहा.

"वो कैसे?"

"कुँवारी रह कर."

"ताजिंदगी?"

"ताजिंदगी की तो क्या कह सकता हूँ? जब हम उनके संपर्क में आये थे तब तक तो वो कुँवारी ही थी."

"वाह!

अब तक की वार्ता को सुन कर क्षशाँक विश्वस्त हो चुका था कि वो चर्चा उसी की क्षेमा की हो रही है.

उसके मुँह से भी अनायास निकल गया था, "अद्भुत. अविश्वसनीय."

उसकी टिप्पणी को सुन कर दोनों साथी चौंक गए थे. मजाक करते हुए प्रशाद ने पूछा था, "सर, आप पुस्तक पढ़ रहे हो या चोरी चोरी हमारी बातें सुन रहे हो?"

"शिक्षक को तो बहुआयामी होना होता है न?" क्षशाँक ने मुस्कराते हुए कहा.

"सो तो है."

"क्या आप जानते हैं कि क्षेमा जी कहाँ तैनात हैं?" क्षशाँक ने उस साथी से पूछा जो क्षेमा के बारे में बात कर रहा था.

"जिन दिनों की बात मैं कर रहा हूँ, उन दिनों वे शिलौंग में तैनात थी. आजकल का पता नहीं."

"ये कब की बात है?"

"करीब पाँच वर्ष पूर्व."

"ओह! अब तक तो उनका स्थानान्तरण कहीं और हो गया होगा," क्षशाँक ने कहा.

"हाँ. मगर आप इतनी गहरी रूचि क्यों ले रहे हैं?" मुस्कराते हुए प्रशाद ने पूछा.

"वे विलक्षण और दुर्लभ हैं. जिज्ञासा होना स्वाभाविक है," क्षशाँक ने कहा.

"जिज्ञासा असामान्य है," मुस्कराते हुए देव ने क्षशाँक पर करारा व्यंग किया था.

"पात्र भी तो असामान्य हैं," क्षशाँक ने कहा.

"बातों में प्रोफेसर क्षशाँक से आप कभी नहीं जीत सकते दोस्त," प्रशाद ने देव से कहा.

तीनों ठहाका लगा कर हँस पड़े थे.

प्रशाद ने पुन: कहा, "प्रोफ़ेसर क्षशाँक! आपने भी तो अब तक विवाह नहीं किया है. ऐसा क्यों?"

"किसी को हम पसंद नहीं आये और कोई हमें."

तीनो एक बार फिर ठहाका लगा कर हँस पड़े.

"पसंद कर लो प्रोफ़ेसर. जीवन अकेले काटना मुश्किल हो जाता है," देव ने गंभीर होते हुए कहा.

"देखते हैं कि आगे क्या होता है?"

कालिज बंद हुआ और क्षशाँक घर पहुँचे. रास्ते भर सोचते रहे कि क्षेमा कहाँ होगी? उससे संपर्क कैसे हो? इन प्रश्नों के अतिरिक्त अनेक प्रश्न उसके ज़हन में उमड़ घुमड़ रहे थे.

हाँ, इस बात पर वो खुश था कि क्षेमा को वायु सेना में उसकी मंजिल मिल गई थी.

"किसी ने ठीक ही कहा है कि श्रद्धापूर्वक की गई माँग और निष्ठापूर्वक किये गए प्रयास सदैव सफल हुआ करते हैं, आजकल क्षेमा खूब ऊँची ऊँची उड़ान भरती होगी," सोचा था क्षशाँक ने.

32

गुलाब अपने वचन के अनुसार क्षशाँक के निवास पर हर पूर्णिमा पर भक्ति संगीत पेश करने लगी थी. लोगों को समय पर सूचना दे दी जाती थी. इसी कारण श्रोताओं की तादाद हर पूर्णिमा पर बढ़ जाती थी.

यह देख कर न केवल क्षशाँक बल्कि बाबा, गुलाब और उसकी सहायिका खुशबु काफी उत्साहित थे.

क्षशाँक ने ये भी देखा था कि भक्ति संगीत को बाबा बड़े ही मनोयोग से सुना करते थे.

गुलाब कोई प्रवचन नहीं देती थी. सिर्फ भक्ति संगीत पेश करती थी और बाद में श्रोताओं से कह देती थी कि किसी श्रोता का कोई प्रश्न हो तो पूछ लें. अगर कोई श्रोता प्रश्न करता तो वे उस शंका का समाधान करने की भरपूर कोशिश किया करती थी.

क्षशाँक ने उसके व्यक्तित्व, संगीत कार्यक्रम और उसके बाद की प्रक्रिया में चार पाँच बातें खास देखी थी.

एक, वह सिर्फ भक्ति गीत प्रस्तुत करती थी. दो, वे अधिकतर संत कबीर के दोहे प्रस्तुत करती थी. तीन, प्रवचनों से बचती थी. चार, अपने ज्ञानी होने का कोई दावा नहीं करती थी. पाँच, श्रोताओं की जिज्ञासा की कद्र करती थी और अगर किसी का कोई प्रश्न होता तो उसका माकूल उत्तर देने की कोशिश करती थी. छह, उत्तर देने के बाद श्रोताओं को प्रोत्साहित करती थी कि वे भी अपने विचार रखें जिससे चर्चा न केवल आगे बढ़े बल्कि प्रश्न के संदर्भ में किसी समाधान पर भी पहुँचा जा सके.

संगीत कार्यक्रम के इन अवयवों को देख कर क्षशाँक न केवल काफी प्रभावित थे बल्कि

उत्साहित भी थे. कार्यक्रम के बाद एक दिन सभी साथ बैठे थे. चाय पानी का दौर चल रहा था.

उसी समय क्षशाँक ने कहा, “भक्ति संगीत के बाद आप कुछ नहीं बोलती. श्रोताओं से प्रश्न करने को कह देती हैं. इसका क्या राज़ है?”

“प्रश्न करना अगर राज़ है तो वो आपसे ही तो सीखा है. हम प्रवचनों से बचते हैं क्योंकि हमें वे बेमानी लगते हैं. प्रश्न पैदा होता ही तब है जब मन उद्वेलित हो.”

“सो तो है.”

“अधिकतर श्रोता एक कान से सुनते हैं दूसरे से निकाल देते हैं. ऐसे प्रवचनों का क्या लाभ?”

“सटीक.”

“प्रश्न प्रश्नकर्ता और श्रोताओं पर अमिट छाप छोड़ देता है. अपने प्रश्न को प्रश्नकर्ता कभी नहीं भूलता. अगर बदलाव की कोई संभावना दिखाई देती है तो वो होती है प्रश्नकर्ताओं में,” गुलाब ने कहा.

“ठीक कहा,” सहमत होते हुए क्षशाँक ने कहा.

दोनों की वार्ता को आनंद गौर से सुन रहा था. उसने कहा, “चाची, जब मैं सवाल करता हूँ तो गुरु जी भवें चढ़ा लेते हैं. ऐसा क्यों?”

गुलाब को आनंद चाची कहा करता था.

“कौन से गुरु जी?”

“अंग्रेजी वाले.”

“हम उनसे मिलेंगे और पूछेंगे कि वे ऐसा क्यों करते हैं? प्रश्न पूछना तो अच्छी बात है. बेटा, आप प्रश्न पूछना कभी नहीं छोड़ना,” गुलाब ने कहा.

“जी चाची जी.”

तभी मीरा ने कहा, “आनंद, आओ, बगिया में चलते हैं. चिड़ियों का दाना पानी भी तो देना है न?”

“ओह! गीतों में ऐसे मशगूल हुए कि आज पक्षियों को दाना डालना तो भूल ही गए,” आनंद ने कहा.

मीरा, आनंद और खुशबु उठ कर बगिया में चले गए.

“आजकल के शिक्षकों को क्या हो गया है? जब हम शिक्षक थे तो प्रश्न पूछने हेतु छात्रों को प्रोत्साहित किया करते थे,” बाबा ने कहा.

“बाबा, आप शिक्षक थे? किस विषय के?” क्षशाँक ने पूछा.

“तुम बेमतलब के सवाल बहुत पूछते हो,” नाराज़ हो कर बाबा उठे और अपने कमरे में चले गए.

“देखो तो बाबा कितने जटिल व्यक्तित्व हैं? सवाल पूछने हेतु कहते हैं और सवाल करने पर खुद उखड़ जाते हैं,” गुलाब ने मुस्कराते हुए क्षशाँक से कहा.

“अरे, अब तो वे बहुत ठीक हो गए हैं. पहले तो डाँट दिया करते थे. दरअसल हमें लगता है कि उनको अपने अतीत से सख्त नफरत है. उसका कारण हम आज तक न जान सके. चलो छोड़ो. बाबा खुश हैं, ये क्या कम है?” क्षशाँक ने कहा.

“हाँ, सो तो हैं. इनका बाँसुरी वादन कैसा चल रहा है?”

“वो निर्बाध गति से चल रहा है. उसके बिना तो वे न भोजन करते हैं न आराम.”

“और गीत कौन से?”

“अब वे मोहब्बत भरे गीत अधिक बजाते हैं. एक बात फिर भी देखी कि उस गीत को आज तक नहीं भूले हैं जो वे पार्क में बैठे बजाया करते थे.”

“वो कौन सा गाना है?”

“चलचित्र भाभी का वो गीत जिसमें कवि कहता है, “चल उड़ जा रे पंछी.”

“ओह! वो तो बहुत दर्दभरा गीत है,” गुलाब ने कहा.

“हाँ. वो इसलिए कि वो गीत हमें जीवन की सच्चाई के रूबरू कराता है. जीवन की क्षणभंगुरता को उजागर करता हैं. दर्दभरा लगना लाजमी है. सच्चाई को सुनना कौन चाहता है? सच्चाई से सभी डरते हैं,” क्षशाँक ने मुस्कराते हुए कहा.

आखिरी टिप्पणी सुन कर गुलाब गंभीर हो गई थी जिसका राज़ क्षशाँक जान न सके.

उसी शाम गुलाब अपनी सहायिका खुशबु संग लौट गई थी. उसकी गंभीरता ने क्षशाँक को एक बार फिर चिंतित कर दिया था.

मीरा और आनंद अब तक क्षशाँक के परिवारिक सदस्य से बन चुके थे और बाबा उस अनूठे परिवार के प्रमुख. बाबा बहुत खुश रहने लगे थे जिसका श्रेय पूर्णरूपेण मीरा को जाता था जो रात दिन उनकी सेवा करती रहती थी.

बाबा अब भी उसे अपनी पुत्रवधू ही मानते आ रहे थे और क्षशाँक को अपना पुत्र. उस दिन तो हद ही हो गयी थी जिस दिन बाबा ने ऐसी टिप्पणी कर दी थी कि क्षशाँक गिरते गिरते बचा था. अगर मीरा अपनी सूझ बूझ का फिर से प्रयोग नहीं करती तो घर में भूचाल आना निश्चित थे.

हुआ यूँ कि बाबा, मीरा और क्षशाँक शाम को कॉफी पी रहे थे और आनंद बोर्नविटा मिला दूध. बाबा को न जानें क्या सूझी थी कि वे ऐसा मशविरा दे बैठे जिसने क्षशाँक और मीरा को झकझोर दिया था.

मगर मीरा के विवेक ने एक बार फिर बाज़ी मारी थी. उसने कहा, “बाबा! आजकल एक बच्चे की परवरिश ही कठिन होती है. आप आशीर्वाद दें कि हम आनंद को खूब पढ़ा लिखा सकें.”

क्षशाँक ने ईश्वर को चुपचाप आभार जताया था क्योंकि मीरा का तर्क सुन कर बाबा चुप

हो गए थे.

33

शहर में पुस्तक मेला लगा करता था. क्षशाँक ने बाबा, मीरा और आनंद के साथ पुस्तक मेले भ्रमण का कार्यक्रम बना रखा था. पुस्तक मेला पाँच दिन बाद शुरू होना था.

निश्चित दिन चारों पुस्तक मेले में पहुँचे. वे रक्षा मंत्रालय के स्टाल के सामने से गुजरे. चंद पलों बाद पीछे से एक युवक दौड़ा आया और बोला, “साहब, आपको हमारी मैडम साहब बुला रही हैं.”

क्षशाँक ने पूछा, “किसे?”

“सर, आपको.”

“मुझे? मुझे क्यों? मुझसे क्या काम?”

“पता नहीं साहब. मैडम ने सिर्फ ये कहा कि उन नीली कमीज़ वाले साहब को बुला लाओ.”

“ओह! मगर मेरे साथ पूरा परिवार है.”

“कोई हर्ज नहीं साब. सब को साथ ले आइये, सर.”

चारों रक्षा मंत्रालय के स्टाल पर पहुँचे. मैडम ने सभी का गर्मजोशी के साथ स्वागत किया.

“कहिये,” क्षशाँक ने कहा.

“आप आइये, मेरे कक्ष में आइये. वहीं बात करेंगे,” मैडम ने कहा.

“मेरे साथ और भी हैं. उनको बाहर छोड़ना सभ्यता के खिलाफ होगा," क्षशाँक ने कहा.

“उनकी फ़िक्र न करें. हमारे जवान उनकी खातिरदारी करेंगे.”

मीरा ने एक बार फिर अपने विवेक का परिचय दिया और कहा, “सुन लीजिए सर. हम बाहर ही बैठ जाते हैं.”

मैडम ने सबके लिए नाश्ता-पानी मंगवाया और क्षशाँक को लेकर अपने कक्ष में चली गई.

“आपने मुझ को पहचाना नहीं क्या?”

“माफ करना,” क्षशाँक ने अनभिज्ञता ज़ाहिर करते हुए कहा.

“हाँ, पुरुष भूल जाते हैं. स्त्री कभी नहीं,” मैडम ने कहा.

तीखी टिप्पणी सुन कर क्षशाँक को ज़बरदस्त झटका लगा था क्योंकि उसे याद आ गया था कि वो सुगंधा को भी न पहचान पाया था.

फिर भी संयत होते हुए उसने कहा था, “ऐसा भी क्या? पुरुष और स्त्रियाँ सभी भूल सकते हैं. इसमें अचरज की क्या बात?”

“हाँ, मगर हम आपको नहीं भूली हैं.”

“बहुत बहुत शुक्रिया. परिचय तो कराइए.”

“परिचय तो अनजान लोगों का हुआ करता है.”

“ओह! चलिए. याद ही दिला दीजिए कि आप हमें कैसे जानती हैं.”

“प्रोफ़ेसर ने आपको डपटते हुए एक बार कहा था कि क्षशाँक, आपका ध्यान किधर है? याद आया?”

“ओह! क्षेमा! वाह! क्या सुखद मिलन. आपने खूब पहचाना.”

“स्त्रियाँ अपने पहले प्यार को कभी नहीं भूलती. पुरुष भूल जाया करते हैं.”

“नहीं क्षेमा! हम भी भूले नहीं हैं. मगर आपका वो सुतवां शरीर अब कुछ अधिक ही हृष्ट पुष्ट हो गया है. दूसरी बात ये कि इस जगह पर आपसे मुलाकात की कोई संभावना तक नहीं थी.”

“भूले नहीं तो ये परिवार?”

“सब मुँहबोले संबंध है. उनको भी अंदर बुला लें. परिचय करवा देते हैं. एक बात याद रखना कि जो बुज़ुर्ग हैं, वे विक्षिप्त थे. पार्क में बैठे मिले थे. मानवता की खातिर हम उनको घर ले आये थे और उनको संभाला था. वे मीरा और मुझे अपना बेटा और बहू मानने लगे हैं. अगर वे कुछ ऐसी वैसी बातें करें तो उन पर ध्यान न देना. मीरा विवेकवान है. वो स्थिति को संभाल लेंगी.”

“ओह! ये मीरा कौन है?”

“हमारी, खास कर बाबा की सहायिका. उसी की सेवा का फल है कि बाबा कुछ ठीक हो पाए हैं. काश! उनकी याददाश्त भी लौट आती.”

“ओह!” कह कर क्षेमा ने अपने अर्दली को आवाज़ दी और कहा कि चार पाँच कुर्सियाँ ले आओ और बाद में इन साहब के लोगों को अंदर भेज दो.

“यानि, आपने अब तक विवाह नहीं किया?” क्षेमा ने पूछा.

“नहीं. और आपने?” क्षशाँक ने पूछा.

“नहीं.”

“क्यों?”

“इस प्रश्न का हमारे पास कोई उत्तर नहीं. आप बताएं कि अब तक आपने विवाह क्यों नहीं किया?” क्षेमा ने कहा.

“ठाकुर साहब कैसे हैं?”

“काफी अरसा हो गया. वे गुजर गए.”

“और माता जी?”

“वे तो पहले ही गुजर चुकी थी. अगर वे ज़िंदा होती तो हमारी जुदाई कभी नहीं होती. वे जाति पाति में भरोसा नहीं करती थी.”

“ठाकुर साहब को क्या हुआ था?”

“दो दिन के बुखार में ही चल बसे थे. हम उस समय कश्मीर में तैनात थे और उनसे मिल भी न सके थे. अंतिम संस्कार में शरीक हो पाए थे.”

“ओह! यानि आप?”

“हाँ, हम अब अकेले हैं. आपकी यादों और देश की रक्षा करने के सिवाय हमारा कुछ भी कहने को नहीं.”

“देश की रक्षा? यानि?”

“अपनी पसंद और प्राथमिकता के अनुसार मैं वायु सेना में फ्लाईट लेफ्टिनेंट बन गई थी. इस समय स्क्वार्डन लीडर हूँ.”

“वाह! जज्बा हो तो आप के ज़ज्बे जैसा.”

“बाद में पिता जी का लिखा एक खत उनके बटुए में रखा हमें मिला था. उसमें लिखा था कि बेटी, अगर हमें कुछ हो जाए तो तुम मेरी आत्मा की शांति के लिए क्षशाँक से विवाह कर लेना.”

“ओह! बुजुर्गो को अक्ल तो आती है मगर बहुत देर से? काश! वे उसी समय मान जाते.”

“छोड़ो बीती बातों को. अब बोलो क्या कहते हो?”

क्षशाँक उत्तर न दे पाए थे कि तभी बाबा, मीरा और आनंद ने कक्ष में प्रवेश किया. क्षेमा ने उठ कर सभी का पुन: स्वागत किया. क्षशाँक ने सभी का परिचय कराया.

“आप हमारे बाबा हैं और ये हैं मीरा. ये है बाबा का पोता आनंद.”

बाबा कहाँ चुप रहने वाले थे?

वे बोले, “तुम कभी नहीं सुधरोगे क्षशाँक. पूरे उल्लु के पठ्ठे हो. ये कहो न कि मीरा मेरी पत्नि है और आनंद मेरा बेटा.”

क्षेमा और आनंद ठहाका लगा कर हँस पड़े. क्षशाँक बगलें झाँक रहे थे.

मीरा ने मोर्चा संभाला और हँसते हुए कहा, “बाबा! आप भी खूब हैं. पत्नि होने का बार बार दावा करना ठीक है क्या? मैडम खुद समझदार हैं. वे जान गई होंगी हम कौन हैं?”

“सो तो है,” बाबा ने हथियार डालते हुए कहा.

क्षेमा ने उठ कर बाबा के पैर छुए और बोली, “बाबा! आशीर्वाद दीजिए.”

“बेटी, अखंड सौभाग्यवती हों. दूधों नहाओ, पूतों फलो.”

“बाबा! हमारा अभी विवाह नहीं हुआ है?”

“तो कर लो बेटी. देर क्यों कर रही हो?”

“कैसे करूँ? जिससे मैं प्रेम करती हूँ, वो मानते ही नहीं.”

“वो कौन उल्लू का पठ्ठा है जो आप जैसी सुघड़ और सुंदर युवती से भी विवाह नहीं करना चाहता?”

“ये आपके बेटे क्षशाँक,” क्षेमा ने क्षशाँक की ओर उँगली से इशारा करते हुए कहा.

“लेकिन इसका विवाह तो हो चुका है.”

मीरा ने पुन: मोर्चा संभाला और कहा, “दूसरा विवाह भी तो हो सकता है बाबा. मुझे कोई एतराज़ नहीं.”

बाबा ने ठहाका लगाया और बोले, “मियाँ बीबी राजी, तो क्या करेगा क़ाज़ी?”

बाबा के ठहाके में सभी शरीक हो गए.

“अब कहिये? आप क्या कहते हैं?” क्षेमा ने पूछा.

“क्षेमा, हमें थोड़ा समय चाहिए.”

“मुझे कोई एतराज़ नहीं,” क्षेमा ने कहा.

“अबे उल्लू, मीरा ने अपना हक छोड़ने में एक मिनिट नहीं लगाया और तुझे समय चाहिए. गधा कहीं का,” बाबा ने क्षशाँक को झिड़कते हुए कहा.

क्षशाँक को चुप रह जाने में ही भलाई लगी. अत: उसने कोई उत्तर नहीं दिया.

“कोई बात नहीं बाबा. मैं इंतज़ार कर लूँगी,” क्षेमा ने कहा.

“तुम क्या कहती हो मीरा बेटी?”

“ठीक है बाबा.”

“फिर ठीक है,” बाबा ने कहा.

34

क्षशाँक इस सोच में पड़ा था कि उसके साथ आँख मिचौनी करती उसकी मोहब्बत कितनी बार और परीक्षा लेगी? सुगंधा, क्षेमा, शबनम और अब एक बार फिर से क्षेमा. मेरे साथ ये हो क्या रहा है?

गुलाब ने कहा था कि स्त्री बिना पुरुष के रह सकती है मगर पुरुष कभी नहीं. अगर अब विवाह करता हूँ तो वो क्या कहेगी?

उसके मुँह से एक शब्द अकस्मात फूट पड़ा. “ओह!”

पास बैठी क्षेमा ने पूछा, “कुछ कहा क्या?”

“हाँ क्षेमा! देखो न उपयुक्त और अनुपयुक्त में अंतर करना कितना कठिन है? माँ थी. राह दिखा दिया करती थी. अब कौन राह दिखाए?”

“माँ के पल्लू से कब तक बंधे रहोगे?”

“माँ तो माँ होती है. उनको कैसे भुलाया जा सकता है?”

“मैं भूलने के लिए नहीं कहती. आत्मनिर्भर बनने हेतु कह रही हूँ. आत्मनिर्भर तो एक दिन होना ही होता है. मैं तो स्वावलंबी होने को कह रही हूँ,” क्षेमा ने कहा.

तभी बाबा ने कहा, “अच्छा बच्चो! चलो, फिर मिलते हैं.”

“बाबा दोपहर के भोजन का समय हो गया हैं. आनंद बच्चा है. उसको भी भूख लगी होगी. भोजन कर के जाइयेगा. भोजनालय में चलेंगे या यहीं मंगवाऊं?” क्षेमा ने कहा.

“भोजनालय में ही ठीक रहेगा. गर्मागर्म भोजन ठीक रहता है,” बाबा ने कहा.

सभी ने साथ भोजन किया और क्षेमा से विदा ली. विदा होने से पूर्व क्षशाँक और क्षेमा ने एक दूसरे के फोन नम्बर ले लिए जिससे संपर्क बना रहे.

चलते वक्त बाबा बोले, “बेटी क्षेमा, संभव हो तो हमारे घर ज़रूर आना. हमें खुशी होगी.”

“अवश्य बाबा, अवश्य. यहाँ से जाने से पूर्व एक बार ज़रूर मिलूंगी,” चरण छूते हुए क्षेमा ने कहा.

तीन दिन बाद क्षेमा बाबा के साथ थी. उसको देख कर बाबा चहक उठे, “अरे देखो, मेरी बेटी पार्वती आई है.”

पार्वती नाम सुन कर क्षशाँक चौंका. क्षेमा ने मुस्कराते हुए कहा, “बाबा, मैं क्षेमा हूँ. पार्वती कौन?”

क्षशाँक ने क्षेमा की ओर चुप रहने का संकेत कर दिया. वो आगे बढ़ा और बोला, “चलो अच्छा है, बाबा. आपकी बेटी मिल गई. अब आप इनके साथ जाओगे या हमारे पास ही रहोगे?”

“अबे उल्लू! तेरी अक्ल घास चरने गई है क्या? क्या बेटी के घर बाप रहा करते हैं?”

“ओह! याद आया. मगर ये बेटी आई कहाँ से हैं?” क्षशाँक को शंका थी कि बाबा नाराज न हो जाएँ, इसलिए उसने डरते डरते पूछा था.

और वही हुआ. बाबा उखड़ गए.

“फिजूल के सवाल बहुत करते हो,” बाबा ने कहा और नाराज़ होकर अपने कमरे में चले गए.

“बड़ी विकट समस्या है. बाबा की याददाश्त लौट तो रही है मगर टुकड़ों टुकड़ों में. और कुछ पूछते हैं तो नाराज़ हो जाते हैं,” क्षशाँक ने कहा.

मीरा ने कहा, “सर! उनकी देख रेख करने की हमने भीष्म प्रतिज्ञा ली है. कर्तव्य पूरा करना है. विचलित न हों. संतोष से काम लेना होगा.”

क्षेमा ने मीरा की ओर प्रशंसात्मक दृष्टि से देखा और बोली, “आप अनूठी स्त्री हैं. आप जैसी विवेकवान महिला आज तक देखने को नहीं मिली?

“ये सर का आशीर्वाद है. हम भी विचलित हो जाया करते थे. एक बार हमसे एक भयंकर भूल हो गई थी. उसी समय सर ने जो सबक सिखाया था, वो आज तक काम आ रहा है,” मीरा ने कहा.

“भूल और आपसे? यकीन नहीं होता.”

“बहन, हाड़ माँस के हर पुतले से कभी न कभी कोई गल्ती होना स्वाभाविक है. हाँ, सर से सीखा है कि वही भूल बार बार न हो,” मीरा ने कहा.

बाबा के जाने के बाद क्षेमा ने कहा, “कहिये! विवाह के बारे में क्या निर्णय लिया है?”

इसके पहले कि क्षशाँक कुछ उत्तर देते, मीरा ने कहा, “विवाह कर लेना चाहिए. कुदरत भी यही चाहती है.”

“क्या मतलब?”

“आप दोनों का दोबारा मिलन सबूत है कि कुदरत चाहती है कि आप विवाह सूत्र में बंध जाएँ. अंत में ही सही, दीदी के पिताजी का मान जाना भी विवाह कर लेने का संकेत है,” मीरा ने कहा.

क्षेमा मुस्करा दी मगर क्षशाँक गंभीर हो गया. उसने कुछ नहीं कहा. दूसरी ओर उसका दिमागी मंथन शुरू हो गया था.

क्षशाँक को चिंतन-मनन करते देख कर मीरा ने कहा, “चलो दीदी. सर को शांति से सोचने दें. रसोई में चल कर हम नाश्ते पानी का इंतजाम करते हैं.”

दोनों उठी और पाकशाला की ओर बढ़ गईं.

रसोई में पहुँच कर क्षेमा ने मीरा से कहा, “क्षमा करना बहन! एक बात पूछनी थी.”

“पूछो दीदी. संकोच क्यों?”

“हम दोनों के विवाह से आपको दुःख तो नहीं होगा?”

“दीदी, यही गल्ती एक बार मैंने की थी. सर ने ऐसा सबक सिखाया था कि आज तक अक्ल ठिकाने लगी हुई है,” मीरा ने हँसते हुए कहा.

“आपकी भूल? वो क्या थी?”

“सर ने बोर्नविटा का डिब्बा देते हुए कहा था कि आनंद के दूध में मिला दिया करूँ. इस पर मैंने उनको तिरछी नज़र से देखते हुए कहा था, “जी अच्छा.”

“हम समझे नहीं.”

“अरे औरत होकर भी नहीं समझी? औरत मर्द को तिरछी नज़र से कब देखती है? मुझे भ्रम हो गया था कि सर मुझसे मोहब्बत करने लगे हैं.”

“ओह! फिर?”

“मेरी तिरछी नज़र से सर बहुत अधिक विचलित हो गए थे. विचलित इतने कि अपना पसंदीदा पेय कॉफी भी पीना भूल गए थे.”

“फिर?” बेचैन होते हुए क्षेमा ने कहा.

“मैंने दूसरी कॉफी बनाई. मगर मेरी उनके सामने जाने की हिम्मत नहीं हुई. आनंद के हाथों कॉफी भेज दी थी जिस पर वे और अधिक नाराज़ हो गए थे और हमें सलाह दी थी कि बच्चों के हाथ गर्म चीज़ें नहीं भेजनी चाहियें.”

“वो तो उन्होंने ठीक ही कहा था! फिर?”

मैंने कहा, “सर, आपका वो रूप देख कर मुझे डर लग रहा था.”

“कौन सा रूप?” सर ने पूछा था.

“तीखे तेवर वाला. सर ठहाका लगा कर हँस पड़े थे. मैंने पूछा था सर आप हँसे क्यों? सर ने कहा कि हम कोई भूत है जो आप डर गई थी?”

यह सुन कर क्षेमा ठहाका लगा कर हँस पड़ी और बोली, “आगे क्या हुआ?”

“मैंने कहा, सर भूत से नहीं डरती. मगर क्रुद्ध पुरुष से बहुत डरती हूँ. इस पर सर ने कहा था कि हम आप पर नहीं, अपने आप पर क्रुद्ध थे. मैंने पूछा कि वो क्यों? सर का जवाब था कि आपने हमारी बदनीयती जो पकड़ ली थी. सर की बात सुन कर मैं बहुत लज्जित हो गई थी. मैंने कहा, सर मैं छमा चाहती हूँ. वैसी भूल फिर कभी नहीं करुंगी.”

“ओह! मैं भी कितनी बेवकूफ थी. मैं भी आप दोनों पर शक करने लगी थी. माफ करना बहन,” क्षेमा ने कहा.

“नहीं बहन. ये स्त्री स्वभाव है. इसमें माफी मांगने जैसी कोई बात नहीं.

“आप पर शंका कर बैठी थी.”

“आपने अपनी शंका दूर ली, यह आपने ठीक ही किया है. शंकाएं जीवन दूभर कर देती हैं.”

“जी, ये आपने ठीक कहा.”

“मैं तो समझती हूँ कि अब आपका दाम्पत्य जीवन सरल रहेगा,” मीरा ने प्रसन्न होते हुए कहा.

इस पर क्षेमा मुस्करा दी और मीरा को अपनी बाजुओं में भर लिया.

“अरे, अरे, अब ये बाजुएं सर के लिए हैं. इनको यूँ न बरबाद करें और सर के लिए सुरक्षित रखे,” मीरा ने ठहाका मारते हुए कहा.

“आप बहुत हँसमुख हैं,” क्षेमा ने कहा.

“बहन, जीवन इतना कठिन है न कि हँसने में ही सुकून मिला करता है. ये तो शुक्र है कि सर जैसा सरपरस्त मिल गया था वरना न जानें हम माँ बेटे आज किन हालातों से गुजर रहे होते.”

“आपके सत्कर्मों का फल है. सर की प्रकृति के बारे में जो कुछ आपने कहा, वो शत प्रतिशत ठीक है. वे बहुत सीधे हैं.”

“क्या मतलब”

“कक्षा में वे मेरी ओर टकटकी लगा कर देख रहे थे. प्रोफ़ेसर ने डपटते हुए कहा था कि क्षशाँक, आपका ध्यान किधर है?”

“फिर?” मीरा ने पूछा.

“क्षशाँक ने कहा, सर क्षेमा की ओर. ऐसे सीधे या कहो बुद्धू है आपके सर,” क्षेमा ने कहा.

दोनों ठहाका लगा कर हँस पड़ी.

“उनको बुद्धू कहना तो दीदी अन्याय होगा,” मीरा ने कहा.

“अरे, हँसी कर रही थी. जब मैं उनसे नाराज़ हुई तो कहने लगे मोहब्ब्त में शर्म क्यों? फिर मुझे उनको समझाना पड़ा था. उसके बाद उन्होंने मुझसे माफी मांगी थी.”

“चलो, अच्छा हुआ दीदी कि आपका भ्रम दूर हो गया,” मीरा ने संतोष व्यक्त करते हुए कहा.

35

मीरा और क्षेमा के जाने के बाद यह सोच कर क्षशाँक चिंतन मनन में डूबे थे कि मीरा कितनी ज़हीन है. विवेकवान इतनी कि कठिन से कठिन परिस्थिति में भी धीरज नहीं खोती और स्थिति को संभाल लेती है.

अगर मैंने क्षेमा से विवाह कर लिया तो मीरा और आनंद का क्या होगा? क्या उनको घर छोड़ कर जाना होगा?

“नहीं, नहीं. मैं ऐसा हरगिज़ नहीं होने दूँगा. पत्नि तो मिल सकती है मगर मीरा जैसी विवेकवान मित्र कहा मिलेगी? और आनंद तो खिलता हुआ पुष्प है. यहाँ से जाने पर वो तो मुरझा ही जायेगा,” क्षशाँक ने अपने आप से कहा.

क्षशाँक अहसानफरोश नहीं था. वह कैसे भूल सकता था कि मीरा बाबा की कैसे सेवा करती रही है? यह मीरा ही है जिसने बाबा में फिर से आत्मविश्वास जगाया है. मानवता की खातिर उसने उनकी पुत्रवधु तक होना भी स्वीकार कर लिया. कौन स्त्री ऐसी निस्वार्थ सेवा कर सकती है?

“ऐसे निस्वार्थ शख़्स के प्रति कृतघ्न कैसे हुआ जा सकता है? माँ के खिलाये पिलाए संस्कार आज तक मेरा मार्गदर्शन कर रहे थे. अगर वे आज होती तो स्पष्ट राय देती. आजकल तो उन्होंने खयालों में भी आना बंद कर दिया है,” क्षशाँक ने अफ़सोस के साथ सोचा था.

उसी समय उसे क्षेमा की चुटकी याद आ गई थी, “माँ के पल्लू से कब तक बंधे रहोगे?”

जैसे ही कटाक्ष याद आया था, क्षशाँक के चेहरे पर मुस्कान तैर गई थी और मन ही मन बुदबुदा उठे थे, “माँ की यादों को कैसे भुलाया जा सकता है? माँ तो माँ होती है. स्वर्गवासी होने के बाद भी मार्गदर्शन करती रही हैं.”

क्षेमा और मीरा पाकशाला के काम निबटा कर जब बाहर आईं तो उन्होंने देखा कि क्षशाँक अब भी वैसे ही गंभीर मुद्रा में बैठे हैं और अपने विचारों में खोये हुए हैं जैसा वे उनको छोड़ कर गई थीं.

क्षशाँक के स्वभाव को मीरा बाखूबी जानती थी. इस लिए वो चुप रही मगर क्षेमा चुप न रह सकी.

वो बोली, "ओ कालिदास! किस रहस्यमई नाटक का कथानक बुन रहे हो?"

क्षशाँक ने मुड़ कर देखा. मीरा और क्षेमा सामने खड़ी थी. वो उनको देख सुन कर मुस्करा दिया. उधर क्षेमा तो मुस्करा रही थी मगर मीरा थी गंभीर.

मीरा आगे बढ़ी और बोली, "सर! नाश्ता तैयार है. बाबा और आनंद को बुला लाती हूँ."

"ओह! ठीक है. आप नाश्ता परोसो. बाबा और आनंद को हम बुला कर लाते हैं."

सभी ने पाकशाला में बैठ कर नाश्ता किया. सभी चुप थे. मगर बाबा उद्विग्न नज़र आ रहे थे.

नाश्ते के बाद बाबा बोले, "क्षशाँक, तुमने क्या फैसला किया?"

"बाबा! आप फ़िक्र न करें. जो भी होगा, अच्छा ही होगा," मीरा ने स्थिति को एक बार फिर संभालते हुए कहा.

बाबा कुछ नहीं बोले। वे उठ कर अपने कक्ष में चले गए. उनके जाने के बाद क्षेमा ने अपना प्रश्न पुन: उछाल दिया, "कहिये, आपने क्या निर्णय किया है?"

क्षशाँक ने उसके प्रश्न का उत्तर दिए बिना अपना एक अटपटा प्रश्न क्षेमा की ओर उछाल दिया, "क्षेमा, आपकी सेवानिवृति में कितने वर्ष शेष हैं?"

"मेरे प्रश्न से आपके प्रश्न का कोई संबंध नज़र नहीं आता. फिर भी बताए देती हूँ कि ठीक दस वर्ष बाद मैं सेवानिवृति ले सकती हूँ," क्षेमा ने कहा.

"फिर ठीक है. क्यों न हम सेवानिवृति के बाद विवाह करें? निश्चिन्त जीवन अधिक आनंदपूर्ण हुआ करता है. कहिये, आपका क्या विचार है?"

दोनों की बातें सुन कर मीरा उठने लगी तभी क्षेमा ने उसका हाथ पकड़ कर अपने पास बिठा लिया और बोली, "दीदी, आप हम दोनों की शुभ चिन्तक हैं. आप कहें कि क्षशाँक के प्रस्ताव में कितना दमखम है?"

"ये तो आप दोनों को ही तय करना होगा कि विवाह कब करें? हम क्या कहें? हम तो बस इतना चाहते हैं कि जल्दी से जल्दी आप दोनों एक हो जाएँ? कब हों. ये आपको तय करना है," मीरा ने कहा.

"देखिये! वायुसेना में आपकी नौकरी है. कभी इस शहर में तो कभी उस शहर. दाम्पत्य जीवन निश्चितता, निश्चिन्तता और स्थायित्व चाहता है. इसलिए हमने यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया था," क्षशाँक ने स्पष्टीकरण देते हुए कहा.

"आपकी बात में दम है. चलिए, जब इतने वर्ष इंतज़ार किया तो दस वर्ष और सही. कम

से कम अब ये तो निश्चित हो गया कि हमारा प्रेम भी परवान चढ़ेगा," क्षेमा ने मुस्कराते हुए कहा.

"क्या सेवानिवृति पहले नहीं ले सकती?" मीरा ने पूछा.

"ले सकती हैं. मगर देश सेवा करने की एबज़ में जो सेवा लाभ मिलते हैं, वे निश्चित अवधि के सेवा काल के बाद ही मिला करते हैं," क्षेमा की बजाय क्षशाँक ने उत्तर दिया.

"ओह! फिर तो सेवानिवृति पहले लेना उपयुक्त नहीं होगा," मीरा ने कहा.

"अच्छा, फिर मिलते हैं. दो दिन बाद मुझे अपने कार्यालय में उपस्थिति दर्ज करानी है," कह कर क्षेमा ने विदाई लेनी चाही तो मीरा ने पूछा, "दीदी, फिर कब मुलाकात होगी?"

"जब बुलाओगे, तभी."

"क्षेमा, फौज में इतनी आसानी से छुट्टी कहाँ मिलती है?" क्षशाँक ने कहा.

"हाँ, ये ठीक कहा. फिर भी कोशिश करूँगी कि जब भी आप याद करेंगे, आने में सक्षम हो जाऊँ," क्षेमा ने कहा.

"सेना की मजबूरियों से मैं वाकिफ हूँ. अत: जब भी आपको अवसर मिले, मिलते रहना. आपने कालिज के दिनों की यादों को तरो ताज़ा कर दिया," क्षशाँक ने कहा.

"अवश्य. आपके सिवाय मेरा है कौन? जब भी छुट्टियों पर आऊँगी, आपके पास ही वक्त गुजरा करेगा," क्षेमा ने कहा.

"ह्रदय से स्वागत," मीरा और क्षशाँक ने एक स्वर में कहा.

क्षेमा को जोधपुर पहुँचना था. रेलवे स्टेशन पर मीरा और क्षशाँक भीगी आखों से उसे विदाई दे रहे थे.

लौटते वक्त क्षशाँक और मीरा मौन थे. मीरा ने अचानक पूछा, "सर, विवाह करना है तो आपने उसे इतने वक्त के लिए क्यों टाल दिया?"

"ज़रूरी था मीरा."

"वो क्यों?"

"दस वर्षों में आप दोनों आत्मनिर्भर हो जाओगे."

"सर, आपका ये क़र्ज़ कैसे चुकाऊँगी?"

"अरे, आप तीनों का कर्ज मैं चुका रहा हूँ."

"तीसरा कौन?"

"बाबा," क्षशाँक ने कहा.

"यानि?"

"मीरा, संबंध बनते ही तब है जब पूर्व जन्मों का कुछ लेन देन शेष रह गया हो. देखो न! आप तीनों के साथ कितना नाटकीय ढंग से मिलन हुआ था और स्थाई संबंध बनता चला गया

था? इतने वर्षों बाद अब क्षेमा से मिलन. अगर कुछ लेन देन शेष होगा तो हमारा विवाह होगा अन्यथा नहीं."

"पूर्वजन्म और भाग्य में इतना अटूट विश्वास?" मीरा ने अचरज करते हुए कहा.

"हाँ, आप खुद ही देख लें. आप तीनों का हमारे साथ कैसे रिश्ता बना था और मजबूत होता चला गया था? और अब बाबा के प्रति आपका समर्पण? एक दम अनूठा. जो वो चाहते हैं आप वही करती जाती हैं क्योंकि आपको भी बाबा का कोई कर्ज चुकाना था."

"विश्वास नहीं होता."

"कोई बात नहीं. आज नहीं तो कभी न कभी विश्वास हो जायेगा."

36

क्षेमा चली गई थी. क्षशाँक के सामने वो अनेक जटिल प्रश्न छोड़ गई थी. वे प्रश्न उनको विचलित कर रहे थे. वह यह याद कर के मन ही मन शर्मिंदा हो रहा था कि न तो वह सुगंधा को पहचान पाया था और न ही क्षेमा को.

उसी समय उसके मन में एक प्रश्न कोंधा था, "क्या गुलाब ठीक थी? उसने कहा था कि माफ करना प्रोफेसर साहब. हम आपकी मोहब्बत पर बिल्कुल शक नहीं करते. मगर यह भी सच है कि स्त्री बिना विवाह के मोहब्बत कर जीवन गुजार सकती है मगर पुरुष कदापि नहीं. पुरुष अपनी मोहब्बत को भूल सकता है स्त्री कभी नहीं."

जैसे ही गुलाब का कथन याद आया, उसे करारा झटका लगा था. उसी समय उसे गुलाब की याद आई.

गुलाब कुछ दिनों से अस्वस्थ चल रही थी. खुशबु के कई सन्देश मिल चुके थे मगर क्षशाँक चाह कर भी उसे देखने नहीं जा पाया था. वो चुपचाप उठा और मुख्य दरवाज़े की ओर बढ़ा चला.

उस दिन मीरा आई नहीं थी मगर आनंद क्षशाँक के पास ही था. आनंद ने क्षशाँक को जाते देखा तो बोला, "सर, किधर जा रहे हैं? बाबा या अम्मा पूछेंगी तो मैं क्या उत्तर दूँगा?"

"बोल देना बाज़ार गए हैं. मैं ज़ल्दी ही लौट आऊँगा," इतना कह कर क्षशाँक घर से बाहर निकल गया.

बाहर निकलते ही उसने रिक्शा लिया और गुलाब के कोठे पर जा पहुँचा. खुशबु ने देखा और उछलते हुए बोली, "बाई जी, देखो तो कौन आये हैं?"

गुलाब ने करवट बदली और अपने सामने क्षशाँक को खड़े पाया.

"ज़हे नसीब! हम बदनसीब की आखिर याद आ ही गई? इतने निष्ठुर कैसे हो गए हैं प्रोफेसर? आप तो ऐसे नहीं थे."

"माफी चाहता हूँ गुलाब. सच बात तो ये है कि आज भी अपने मन की शांति के लिए आपकी शरण में आया हूँ," नर क्षशाँक ने शर्मिंदा होते हुए नारी गुलाब से कहा.

“हुक्म करें प्रोफेसर साहब. ये बीमार आपकी क्या खिदमत कर सकती है?”

“आप तो तन से बीमार हैं. खुदा ने चाहा तो ठीक हो जाओगी. मगर हम तो मन के मरीज़ हैं जिसका कोई इलाज़ नहीं.”

“ऐसा भी क्या हुआ?”

नर क्षशाँक ने कालिज से लेकर वर्तमान तक की पूरी नर नारी की कहानी नारी गुलाब को सुना डाली.

“ओह! ये बात है.”

“हाँ, अब आप बताएं कि हम क्या करें? आपके सामने ही हमने सुगंधा की याद में जिंदगी गुजार देने का प्रण किया था. क्या पता था कि हम ऐसी भूलभुलैया में फँस कर रह जायेंगे?”

“आप विचलित न हों प्रोफेसर. हालात बदलते रहते हैं और उन्ही के अनुसार कर्तव्य निभाने पड़ते हैं,” यह कह कर गुलाब ने गाना शुरू किया.

होइहि सोइ जो राम रचि राखा,
को करि तर्क बढ़ावै साखा,
अस कहि लगे जपन हरिनामा,
गईं सती जहँ प्रभु सुखधामा॥
राम नाम मनि दीप धरु, जीह देहरी द्वार,
तुलसी भीतर बाहिरौ, जो चाहसी उजियार।।
घर दीन्हे घर जात है, घर छोड़े घर जाय,
तुलसी घर बन बीच रहू राम प्रेम-पुर छाय।।
तुलसी साथी विपति के विद्या, विनय, विवेक
साहस सुकृत, सुसत्य-व्रत राम भरोसे एक।।

गुलाब गाए जा रही थी और क्षशाँक तन्मय हो कर सुन रहे थे. गुलाब भावविभोर होकर गाये जा रही थी और क्षशाँक मन्त्रमुग्ध होकर सुने जा रहे थे. लगता था जैसे गायक, श्रोता और गीत एकाकार हो गए हों.

गुलाब गाते गाते अचेतावस्था में पहुँच चुकी थी. क्षशाँक भी लगभग उसी अवस्था में पहुँच गए थे. जहाँ गुलाब बैठी थी, वहीं के वहीं वो लुढ़क गई. मसनद की टेक लिए क्षशाँक भी दीवार के साथ लग कर वहीं के वहीं पसर गए.

गुलाब को सम्मोहित होते हुए और लुढ़कते देख कर खुशबु पानी का गिलास लेकर भागी. उसने देखा कि गायक और श्रोता दोनों अचेत पड़े हैं.

“ओह! ये तो दोनों अचेत हो गए,” सोचते हुए उसने गुलाब के चेहरे पर छींटे मारे. गुलाब होश में आई तो दोनों का ध्यान क्षशाँक की ओर गया.

“अरे बाई जी, सर भी बेहोश हो गए हैं. इनके चेहरे पर भी पानी के छींटे मारने पड़ेंगे

क्या," खुशबु ने कहा.

"नहीं, ये बेहोशी नहीं, भावविभोरता का चर्मोत्कर्ष है. घबराने की कोई बात नहीं. जो उपचार उनको चाहिए था, वही हो रहा है. जाओ, तुम भोजन तैयार करो," गुलाब ने कहा.

खुशबु मुस्कराई और पाकशाला की ओर बढ़ गई. उसकी बाई साहब और सर, दोनों को खीर पसंद थी. उसने खीर बनाई और ये सोच कर कि जब भोजन का समय होगा तो पूरियाँ तल देगी. इसलिए, उसने पूरियों के लिए आटा गूंद कर रख दिया.

37

संयत और संतुष्ट हो कर क्षशाँक घर लौटे ही थे कि उनको खुशबु का सन्देश मिला, "सर, जल्दी आयें. आपके लौटते ही बाई जी की हालत बिगड़ गई है. मैं उनको लेकर चिकित्सालय जा रही हूँ. मेरे पास रूपये कम हैं. हो सके कुछ रकम जेब में डाल लाएं."

सन्देश पढ़ कर क्षशाँक स्तब्ध रह गए. उनको न जानें क्यों लगा जैसे कि कुछ अनर्थ होने वाला है. ईश्वर को वो कम ही याद करते थे मगर उस वक्त वो अदृश्य शक्ति के सामने घुटने टेक कर नत मस्तक हो गए थे और कहा था, "हे प्रभु, अगर आप हैं तो उस आत्मा को शान्ति प्रदान करें."

बाबा, मीरा और आनंद ने क्षशाँक को नत मस्तक होते हुए देखा. तीनों समझ गए कि कुछ गंभीर बात है.

"क्या हुआ क्षशाँक," बाबा ने पूछा.

"बाबा, गुलाब चिकित्सालय में भर्ती है," इतना कह कर क्षशाँक बिलख पड़ा.

"अरे, रोने की क्या बात है? सब ठीक होगा. चलो, बेटी गुलाब को देखने हम भी चलते हैं," बाबा ने ढाढ़स बंधाते हुए कहा.

गुलाब की बिगड़ी हालत की सुन कर चारों चिकित्सालय पहुँचे और देखा कि उनके पहुँचने से पूर्व ही गुलाब अपनी अंतिम यात्रा पर कूच कर गई है और खुशबु विलाप कर रही है.

क्षशाँक ने देखा कि गुलाब के चेहरे पर दिव्य मुस्कान तैर रही है जैसे कह रही हो, "ओ ज़ालिम जमाने! कर ले ज़ुल्म, जितने ज़ुल्म करना चाहते हो, कर लो. तुम्हारे जुल्मों को सहते हुए हम जीवन जीते रहे क्योंकि यहाँ मरना मना है."

क्षशाँक ने आगे बढ़ कर खुशबु को संभाला और कहा, "खुशबु, देखो तो. आपकी बाई जी इतनी शांत मुद्रा में हैं कि उनके चेहरे पर दिव्य मुस्कान तैर रही है. आप क्यों विलाप कर रही हो?"

खुशबु ने कही अनकही को सुना या नहीं, ज्ञात नहीं मगर उसी समय वो क्षशाँक की बाहों में लुढ़क गई.

"डाक्टर!" क्षशाँक चीखे.

चिकित्सक दौड़ा आया, खुशबू की उसने जाँच परख की और कहा, “माफी चाहता हूँ. शी इज न मोर.”

क्षशाँक पर दूसरा वज्रपात हुआ.

वह यह कहते हुए, “ओह! मित्रता की ऐसी दुर्लभ मिसाल,” वहीं के वहीं बैठ गए.

मीरा ने आगे बढ़ कर खुशबु की निर्जीव देह का संभाला और क्षशाँक से कहा, “सर, सब्र कीजिये. बाई जी कहा करती थी न,

होइहि सोइ जो राम रचि राखा,
को करि तर्क बढ़ावै साखा,
अस कहि लगे जपन हरिनामा,
गईं सती जहँ प्रभु सुखधामा॥

उसी समय खुशबु की मुठ्ठी स्वत: खुल गई थी. उसमें एक तुड़ा मुड़ा कागज़ था. उस पर लिखा था, “प्रोफेसर सर! हम दोनों का अंतिम संस्कार सनातन विधि से करा देना. हमारी संपत्ति को बेच कर उस राशि से अनाथ बच्चों हेतु विद्यालय स्थापित कर देना. हम दोनों के बैंक खातों में हमने आपको नामित किया हुआ है. उस राशि को आप जहाँ चाहें, प्रयोग कर लेना. आपका बहुत बहुत आभार.”

बाबा अब तक न केवल स्तब्ध थे बल्कि सब कुछ चुपचाप देखे जा रहे थे. अचानक वे फर्श पर बैठ गए और चीखते हुए बोले, “ओ अल्लाह! तूँ इतना क्रूर क्यूँ है? मुझसे मेरी बेटियों को छीन लिया और मुझे छोड़ दिया.”

“अल्लाह,” सुन कर क्षशाँक चौंके और मीरा की ओर देखा. मीरा ने एक बार फिर विवेक से काम लिया और अपने होठों पर उँगली रख कर क्षशाँक को चुप रहने का इशारा कर दिया.

दोनों का विधि विधान के साथ अंतिम संस्कार कराया गया. ग्यारह दिन मौन रह कर क्षशाँक और मीरा ने दिवंगत आत्माओं को अपनी श्रद्धांजलि दी.

उनकी अस्थियों को गंगा में विसर्जित किया और इक्कीस विप्रों को भोजन करा कर अंतिम श्रद्धांजलि पेश की. गुलाब और खुशबु कि समाधि सुगंधा की बगल में बनवा दी जिस पर लिखा गया.

यहाँ सोई हुई हैं वे दो

जो अपार कष्टों के बावजूद जीती रही क्योंकि यहाँ मरना मना है.

इस बीच बाबा बड़बड़ाते रहे थे. गुलाब और खुशबु, उन दोनों को वे अपनी बेटी मान रहे थे. सभी को डर था कि वे कुछ गलत न कर बैठें. इसलिए आनंद उनका हर समय ध्यान रख रहा था.

क्षशाँक को अचरज तब हुआ था जब ग्यारहवाँ संपन्न होने के तुरंत बाद बाबा एकाएक अपनी पूर्व स्थिति में आ गए थे. एक दम शांत मगर सतर्क.

उन्होंने क्षशाँक को डपटते हुए कहा था, “तुम दोनों ने बोलना भी बंद कर दिया है? बताओ

तो क्यों? पति पत्नि में संवादहीनता कभी ठीक नहीं होती. मैंने भी यही बेवकूफी अपनी बीबी संग की थी. उसी का नतीजा मैं आज तक भुगत रहा हूँ."

मीरा ने ठहाका लगाया, बाबा के चरण छूए और बोली, "बाबा, क्षशाँक अंतिम संस्कारों के काम धाम में लगे रहे. मैंने उनको परेशान करना अनुचित लगा. जब आप सो जाते हो तो जरूरत अनुसार हम बात कर लेते हैं."

"फिर ठीक है," बाबा ने निश्चिन्त होते हुए कहा और अपने कमरे की ओर बढ़ गए.

"मीरा, आपकी जितनी तारीफ़ करूँ, कम ही रहेगी. आप कितनी विवेकवान और हाजिरजवाब हैं?"

"इसे छोड़ो सर. समय की माँग अनुसार चलने में ही सबकी भलाई होती है," मीरा ने कहा.

"आपने एक बात देखी?"

"क्या सर?"

"अल्लाह और अब बीबी. बाबा मुस्लिम हैं क्या?" क्षशाँक ने अचरज करते हुए कहा.

"बाबा मुस्लिम है या सनातनी? हमारे लिए वे इंसान हैं. हम तो इंसानियत को महफूज़ रखने की छोटी सी कोशिश कर रहे हैं सर. बाबा कौन हैं, क्या फर्क पड़ता है? समय पर छोड़ दें. कहा है न कि होई है सोई जो राम रचि रखा," मीरा ने कहा.

"सो तो है. काश, बाबा अपना नाम बता देते?"

"वही तो? वे एक प्रश्न करने पर ही उखड़ जाते हैं. परेशान न हों सर, समय पर छोड़ दें," मीरा ने राय देते हुए कहा.

"ठीक कहा. अगर बाबा का नाम ज्ञात हो जाता तो बड़ी मस्जिद पर ये सूचना दे दी जाती कि एक मुस्लिम वृद्ध को हम अपने पास रख कर उनकी देखभाल कर रहे हैं. शायद उनके परिवार का कुछ अता-पता लग जाता."

"मुझे नहीं लगता कि वे मुस्लिम हैं? बीबी और अल्लाह का नाम तो गाहे बगाहे सनातनी भी लेते रहते हैं. अगर वे मुस्लिम होते तो कभी न कभी सामिष भोजन की माँग अवश्य करते, नमाज़ आदि कुछ करते ," मीरा ने कहा.

"वाह! क्या तर्क दिया है? आपने शंका दूर कर दी." क्षशाँक ने तारीफ़ करते हुए कहा.

38

गुलाब और खुशबु कि आखिरी इच्छा के अनुसार क्षशाँक ने अनाथ बच्चों हेतु एक आवासीय विद्यालय खुलवा दिया था. विद्यालय का नाम रखा, 'खुशबु-ए-गुलाब विद्यालय.' मीरा ने भी अपना मकान बेच दिया और जो राशि उसे मिली, उसने वो राशि विद्यालय में लगा दी.

क्षशाँक के साथियों ने भी योगदान दिया. दो तीन रईस जो गुलाब के भक्ति संगीत के प्रसंशक थे, उन्होंने भी दिल खोल हर सहायता की और दिवंगतों की अंतिम इच्छा पूर्ण करने में

सहयोग दिया.

चूँकि विद्यालय आवासीय था, क्षशाँक ने मीरा को उसका अध्यक्ष बना दिया था. मीरा में वे सभी गुण थे जो एक व्यवस्थापक में होने चाहियें थे. वह न केवल दूरदर्शी थी बल्कि उसमें सद्भावना और सहभावना भी कूट कूट कर भरी हुई थी. विद्यालय परिसर में ही उसके निवास की व्यवस्था कर दी गई थी.

इस व्यवस्था को स्थापित करने में पाँच छह वर्ष लग गए थे. मीरा जिसने विद्यालय का कार्यभार संभाल लिया था.

क्षेमा की सेवानिवृति का समय निकट आ रहा था. सिर्फ तीन वर्ष बाद वो स्वैच्छिक सेवानिवृति ले सकती थी. क्षशाँक बेकरारी के साथ उसका इंतज़ार कर रहा था क्योंकि बाबा के अलावा अब उस पर कोई जिम्मेवारी शेष नहीं थी. मीरा विद्यालय प्रबंधन में व्यस्त थी और आनंद अपने भविष्य निर्माण में सतत अग्रसर था.

क्षेमा से फोन पर निरंतर संपर्क बना हुआ था. मगर इस बार क्षेमा ने पहली बार पत्र लिखा था.

प्राणों से प्रिय क्षशाँक,

बहुत याद आती है. जी करता है उड़ कर आपके पास चली आऊँ. प्रोफेसर के प्रश्न, 'क्षशाँक, आपका ध्यान किधर है?' के प्रत्युत्तर में दिये गए आपके मासूमियत भरे जवाब, 'सर, क्षेमा की ओर' की जब याद आती है तो हँसी रुकने का नाम नहीं लेती. आपकी क्षेमा.

पत्र पढ़ कर क्षशाँक भी मुस्करा दिए थे क्योंकि अब तक वे कुछ समझदार हो गए थे.

क्षेमा के संक्षिप्त पत्र का छोटा सा उत्तर देते हुए क्षशाँक ने लिखा था, "प्रिय क्षेमा, अब वैसी भूल कभी नहीं करूँगा. आपका क्षशाँक."

एक पंक्ति का उत्तर तुरंत मिला, "मैं तो चाहती हूँ कि वैसी भूल आप रोज रोज किया करें. क्षण क्षण किया करें. मुझे अच्छा लगता है."

पत्र पढ़ कर क्षशाँक ठहाका लगा कर हँस पड़े थे. बाबा ने उसका ठहाका सुना था. अपने कक्ष से बाहर आते हुए उन्होंने कहा था, "वाह! क्या उन्मुक्त हँसी है? बहुत खुश नजर आ रहे हो, क्षशाँक."

"हाँ बाबा, "आपकी दूसरी बहू मजाक करती रहती है. ये देखो उसके पत्र," बाबा की ओर तीनों पत्र बढ़ाते हुए क्षशाँक ने कहा.

"उल्लू हो. आपको लिखे बहू के पत्र मैं पढ़ूँ? गधा कही का," बाबा ने डपटते हुए कहा था.

"बाबा, इनमें ऐसा कुछ नहीं है जो आप न पढ़ सकें," हँसते हुए क्षशाँक ने कहा.

"ठीक है, ठीक है. पुत्र पुत्रवधु के अंतरंग पत्र उन्हीं दोनों के बीच रहने चाहियें. वे अमूल्य और निजी निधि होते हैं."

बाबा की बात सुन कर क्षशाँक हैरान रह गए थे.

बाबा कई बार ऐसी गूढ़ बात कह देते हैं जो उसे तो क्या मीरा और आनंद को भी हैरान कर देती हैं. लगता ही नहीं कि वे कभी विक्षिप्त रहे होंगे या याददाश्त खो चुके होंगे.

तभी आनंद भाग कर आया था और कहा था, "सर, नई अम्मा के पत्र मुझे दें. मैं पढ़ता हूँ और देखता हूँ कि उन्होंने क्या लिखा है?"

"उल्लू का उल्लू पुत्र," बाबा ने उसको भी डपटते हुए कहा.

आनंद कहाँ चुप रहने वाला था. वो बोला, "नहीं बाबा. उल्लू के उल्लू पुत्र का पुत्र."

"चल हट. बदमाश कहीं का," बाबा जोरदार हँसी हँसे और आनंद को एक बार फिर से झिड़क दिया था.

आनंद ने ठहाका लगाते हुए बाबा के चरण छू लिए और कहा था, "पोता भी तो आपका हूँ."

बाबा और आनंद आपस में खूब चूहलबाज़ी किया करते थे.

कुछ माह बाद क्षेमा ने बताया कि वो विंग कमांडर बन गई है और अम्बाला में उसकी तैनाती हुई है.

उसने लिखा था, "मैं आगामी बारह सितम्बर को अम्बाला पहुँच जाऊँगी. समय मिला तो आप लोगों से ज़रूर मिलने आऊंगी."

क्षशाँक ने उत्तर दिया था, "स्वागत प्रिये, अब हमारे मिलन में कोई बाधा नहीं है. ईश्वर करें कि सेवानिवृति से पूर्व आप और तरक्की करें."

बासठ वर्षीय क्षशाँक ने आह भरते हुए करवट ली और मन ही मन बुदबुदाए, "काश, क्षेमा वायु सेना में भर्ती ही नहीं होती."

39

उच्च शिक्षा प्राप्त कर आनंद एक कम्पनी में प्रबंधक लग गया था और वो बैंगलोर चला गया था. मीरा विद्यालय प्रबंधन में लगी थी. इन हालातों में अब बाबा और क्षशाँक ही घर में बचे थे.

हालांकि बाबा काफ़ी स्वस्थ हो गए थे और वे अपनी देख भाल खुद करने लगे थे फिर भी क्षशाँक को उनकी विशेष निगरानी रखनी पड़ती थी.

इसी कारण क्षशाँक चिंतित रहने लगे थे. कालिज के कार्य से भी उदासीन होते जा रहे थे. प्राचार्य ने उसकी मनस्थिति को देखा और समझा था. इसी वज़ह से वे उसको कई बार टोक भी चुके थे.

एक दिन कालिज बंद होने के समय वे बोले, "क्षशाँक, आप तो बहुत नियमित और समयनिष्ठ होते थे. क्या बात है? आपकी प्रकृति में आजकल आमूल-चूल बदलाव देख रहा हूँ?"

"हाँ सर," कह कर उसने अपनी जिम्मेवारी और व्यथा प्राचार्य को सुना डाली.

"अरे, इतनी सी बात है? बाबा बच्चे तो हैं नहीं. उनको भी किसी कल्याणकारी काम में

लगा दो. वे व्यस्त हो जायेंगे और आपकी समस्या हल हो जायेगी," प्राचार्य ने कहा.

"धन्यवाद सर. आपने तो मेरी समस्या चुटकी बजाते हल कर दी. क्या आप मुझे एक सप्ताह की छुट्टी दे सकते हैं." कुर्सी से उछलते हुए क्षशाँक ने कहा.

"अगर आपको अपने पहले रूप में आने का रास्ता और मौका मिलता है तो मैं खुशी खुशी छुट्टी दे दूँगा."

"अवश्य सर, अवश्य."

"ठीक है. कल से आपको एक सप्ताह की छुट्टी. मगर वैसे ही प्रफुल्लित होकर लौटना जैसे पहले थे."

"अवश्य सर, अवश्य," आश्वासन देते हुए क्षशाँक बाहर आये और घर पहुँचे.

दोपहर का खाना गर्म किया और बाबा को खाने के लिए बुलाया. दोनों ने चुपचाप भोजन किया. आज बाबा कुछ अधिक ही शांत लग रहे थे.

भोजनोपरांत बाबा बोले, "क्षशाँक, आजकल बहू कहाँ रहती है? अकेले मन नहीं लगता. अपने पीहर गई है क्या?"

"बाबा, आप अकेले कहाँ हैं? आपकी मित्र बंसी सदा आपके पास होती है. आप बजाते भी खूब हो. दिन में खूब रियाज़ किया करो."

"अबे उल्लू हो क्या? क्या सारा दिन बंसी बजाया करूँ?"

"तो कहें कि मैं क्या करूं जिससे आपका मन लगे?"

"करना क्या है? बहू को ले आ."

"वो मुझसे रूठ कर चली गई है. वो तो अब आने से रही. तो क्या आप अपनी बहू के पास जाना चाहते हो?" मुस्कराते हुए क्षशाँक ने पूछा.

"अबे काठ के उल्लू? बहू के पीहर में कितने दिन रहूँगा? एक दिन. दो दिन. मेहमान तो होता ही है चार दिन का. बस, उसे जाकर ले आओ."

"ठीक हैं बाबा. कल आपको आपकी बहू के पास ले चलूँगा."

"क्या मतलब? और कहाँ?"

"बाबा, इस समय आप इतना ही जान लो कि अपनी बहू को देख कर आप इतने खुश होंगे कि खुशी से उछल पड़ोगे."

"ऐसा भी क्या?"

"हाँ बाबा, हाँ. आप खुद ही देख लेना," क्षशाँक ने आश्वासन देते हुए कहा.

"ठीक है."

अगले दिन क्षशाँक बाबा को लेकर गुलाब-खुशबु विद्यालय पहुँचे और मीरा के कार्यालय में प्रवेश किया. मीरा को देख कर बाबा उछल पड़े.

“अरे, तुम यहाँ?”

मीरा ने चरण छुए मगर चुप रही.

अवसर देख कर क्षशाँक बोले, “बाबा, जैसे मीरा आपकी देख भाल किया करती थी वैसे ही अब इसने अनाथ बच्चों की देख भाल शुरू कर दी है. ये अनाथ बच्चे बच्चियाँ इनको अम्मा जी कह कर बुलाते हैं.”

“वाह बिटिया वाह! ये तो पुण्य का काम शुरू किया है. मैं तो सोचता था कि तुम अपने पीहर गई हुई हो.”

“बाबा, यही मेरा पीहर है और यही ससुराल. इन बच्चों से वैसा ही प्रेम मिलता है जैसा माता पिता और आप से मिला करता था,” मीरा ने मुस्कराते हुए ने कहा.

“क्षशाँक, फिर हम वहाँ क्या कर रहे हैं? हम भी यहाँ क्यों न आ जाएँ?”

“बहुत खूब बाबा. मैं भी यही चाहता था. मगर आपकी राय लेना चाहता था,” मुस्कराते हुए क्षशाँक ने कहा.

“तूँ रहेगा उल्लू का उल्लू. इसमें पूछने की भला क्या बात है? याद है न कि मुझे बच्चे बहुत अच्छे लगते हैं,” बाबा ने क्षशाँक को झिड़कते हुए कहा.

“याद है बाबा, याद है. सबसे पहले आपने अपने पोते आनंद को ही पहचाना था,” क्षशाँक ने कहा.

“आजकल वो भी दिखाई नहीं देता,” बाबा ने उलाहना देते हुए कहा.

“बाबा, आप भूल गए हो. उसकी नौकरी लग गई है न? आप ही तो उसे बैंगलोर की रेल गाड़ी में बिठा कर आये थे.”

“ओह! याद आया.”

“बाबा, आप बूढ़े हो गए हो. याददाश्त कम हो गई लगती है,” मुस्कराते हुए क्षशाँक ने कहा.

“बूढ़े होगे तुम. उल्लू कहीं का. हमको बूढ़ा बोलता है,” बाबा ने झुंझलाते हुए कहा.

मीरा, क्षशाँक और कार्यालय में मौजूद ठहाका लगा कर हँस पड़े.

“बाबा, आप बेशक बूढ़ा कहो. मगर आपके सामने तो मैं आपका बच्चा ही हूँ. दूध पीता बच्चा. कहो, ठीक कहा न?”

“हाँ, वो तो है. तभी तो उल्लू का खिताब देता रहता हूँ,” बाबा ने हामी भरते हुए कहा.

“अच्छा बाबा! अब मैं कालिज के लिए निकलता हूँ. दोपहर के भोजन पर मिलूंगा,” कह कर क्षशाँक कालिज के लिए निकल लिए.

40

दो वर्ष बाद ही क्षेमा भारतीय वायु सेना में ग्रुप कमांडर के पद को सुशोभित कर रही थी.

क्षशाँक को अपनी होने वाली दुल्हन पर गर्व हो रहा था. इंतज़ार था मिलन का.

क्षेमा का छोटा सा खत मिला था. उसने लिखा था, "विंग कमांडर से ग्रुप कमांडर बन गई हूँ. सेवा काल बढ़ेगा. मगर मैं कोशिश करूँगी कि अब हमारे मिलन में और देरी न हो."

पत्र पढ़ कर क्षशाँक के तन बदन में झुरझुरी वैसे ही दौड़ गई थी जैसे प्रथम मिलन के समय दौड़ा करती है.

बाबा को गुलाब खुशबु विद्यालय में छोड़ दिया गया था. उनके तीखे प्रश्नों से बचने के लिए क्षशाँक घर, विद्यालय, कालिज, विद्यालय और घर के बीच फिरकी बन चुका था. रात को बाबा जब सो जाते तो वो घर लौटता और बाबा के जगने से पूर्व वह विद्यालय पहुँच जाता जिससे बाबा कोई उटपटांग प्रश्न न उछाल दें.

क्षशाँक को अब मीरा के पद, प्रतिष्ठा और विद्यालय के परिवेश का भी खयाल रखना पड़ता था. वो चाहता था कि सबका भ्रम बना रहे और किसी प्रकार का चरित्र संबंधी झंझट न उठ खड़ा हो.

उस रात क्षशाँक काफी देर तक सो नहीं पाया था. वो सोचता रहा कि वो अजीब भूलभुलैया में फँस कर रह गया है जिससे वो निकलने के लिए छटपटा रहा है मगर निकलने की राह उसे नहीं मिल रही है.

बहुत दिनों बाद उसे आवाज़ सुनाई दी थी, "क्षशाँक, घबराओ नहीं वत्स, ये पतझड़ भी गुजर जायेगा. पतझड़ आया है तो बसंत भी आएगा."

आवाज़ किसकी थी, बताने कि कोई ज़रूरत नहीं क्योंकि अब तक पाठक जान गए हैं कि इस प्रकार का परामर्श क्षशाँक को कौन दिया करता था?

उसके बाद उसको पता नहीं कि नींद ने उसे अपने आगोश में कब ले लिया था?

अगले दिन वो बहुत देर से उठा, विद्यालय में बाबा उधम मचाये हुए थे और बार बार पूछ रहे थे, "क्षशाँक कहाँ है?"

जब उनको कोई माकूल उत्तर नहीं मिला तो वे विद्यालय से चुपचाप निकले, रिक्शा पकड़ा और क्षशाँक के निवास पर आ धमके.

जब दरवाज़े पर लगी घंटी घनघनाई तो आँखें मलते हुए क्षशाँक उठे और उसने द्वार खोला. देखा बाबा खड़े हैं. देख कर स्तब्ध.

"तुम यहाँ क्या कर रहे हो?" बाबा चिल्लाये.

क्षशाँक प्रश्न सुन कर अवाक रह गया. उसने उनको तुरंत अंदर खींच लिया और द्वार बंद कर लिया जिससे सुनसान गली में हलचल और कोलाहल न मच जाए.

"बाबा, मैं कल कालिज से देर से लौट सका था. जब तक मैं विद्यालय पहुँचा, मुख्य द्वार बंद हो चुका था."

"द्वारपाल को बुलाना चाहिए था."

"कई आवाज़ दी थी. वो शायद गहरी नींद में होगा," क्षशाँक ने बहाना बनाया.

“उस उल्लू को सोने की इजाज़त किसने दी?”

“बाबा, आखिर वो भी इंसान है. थक गया होगा. वहाँ न सो कर मैं इधर आ गया और सो गया. इसमें कौन सी आफत आ गई. बहुत देर तक नींद नहीं लगी. इसलिए देर हो गई.”

“उल्लू पठ्ठा.”

बाबा गाली देते रहते थे. क्षशाँक सहर्ष सहन भी करता रहता था. मगर उस सुबह बाबा की गाली सुन कर वह पहली बार झुंझला उठा था.

“बाबा गाली न दिया करो.”

“ओह! बहुत बड़े हो गए हो? खैर, जिस दिन तुम सुधर जाओगे, गाली देना बंद कर दूँगा?”

यह सुन कर वह और अधिक बौखला गया. वो कुछ कहना ही चाहता था कि उसे आवाज़ सुनाई दी, “क्षशाँक, तुम किये कराए पर पानी फेर रहे हो? बचपन वाला वही उतावलापन. तुम बिल्कुल नहीं बदले.”

आवाज़ सुन कर क्षशाँक ठिठक गया. आवाज़ किसकी थी, वो अच्छी तरह जानता था.

“माँ माँ होती है. स्वर्गवासी होकर भी संतान को राह दिखाती रहती है,” वो बुदबुदाया.

“कुछ कहा क्या?”

“हाँ बाबा. माँ माँ होती है.”

“माँ माँ न होगी तो क्या बाप होगा?” बाबा झल्लाये.

क्षशाँक मुस्कराया और बोला, “बाबा, ऐसी भूल फिर न होगी. बोलो, कॉफी पीओगे या चाय?”

“बहू ने बना रखी होगी. चलो वहीं पीयेंगे.”

दोनों गुलाब खुशबु विद्यालय पहुँचे. वहाँ देखा कि बाबा को लेकर सभी परेशान हो रहे थे और उनकी खोज हो रही थी.

जैसे ही मीरा ने बाबा को देखा, वो रो पड़ी और बोली, “बाबा, बिना बताए आप कहीं न जाया करें. मेरी तो जान ही निकल गई थी.”

“अपने इस भौंदू को संभाल. ये और तुम संभल जाओ तो फिर मैं फ़िक्र क्यों करूँ?”

शुक्र है कक्ष में मीरा, बाबा और क्षशाँक के अतिरिक्त कोई नहीं था. मीरा बोली, “बाबा, क्या मैंने या इन्होंने कोई एतराज़ किया? आप क्यों फ़िक्र करते हो?”

“तुम भी बुद्धू हो,” कह कर बाबा अपने कक्ष में चले गए.

41

उस दिन क्षशाँक बहुत खिन्न रहा. उसे खुद पर शर्म महसूस हो रही थी. उसके मन मस्तिष्क में

बार बार एक ही प्रश्न उछल कूद मचा रहा था कि वो बाबा पर उस दिन झुंझला कैसे बैठा था? वो इतना असभ्य कैसे हो गया था कि बाबा को भी टोक बैठा था?

जानी पहचानी आवाज़ फिर आई, "वत्स! भूल का अहसास होने पर भूल भूल नहीं रहती. मुझे खुशी है कि मेरे दिए संस्कार आज तक बचे हुए हैं. जाओ, बाबा से क्षमा माँग लो. उनके और तुम्हारे मन को शान्ति मिलेगी."

क्षशाँक को कुछ राहत महसूस हुई. अदृश्य के सम्मुख वह अनायास नतमस्तक हो गया.

वह बाबा के कक्ष में पहुँचा और चरण छू कर माफी माँगी, "बाबा, क्षमा करना आज मुझसे बहुत बड़ी भूल हो गई थी."

"कौन सी भूल?"

क्षशाँक मुस्कराया और अपने आप से मन ही मन पूछा, "बाबा का भूल जाना वरदान है या बीमारी. मेरे लिए तो ये वरदान ही साबित हो रहा है."

संतुष्ट हो कर वह बाहर आया ही था कि उसे तार मिला जिसमें लिखा था, "क्षेमा ने दुश्मन देश के एक टोही विमान को मार गिराया था. मगर उसका पीछा करते हुए उसका विमान पाकिस्तान की सीमा में चला गया है. पाकिस्तानी फौज ने उसके विमान को भी मार गिराया. क्षेमा सकुशल बताई जाती है. उनको वापिस लाने की भरपूर कोशिश जारी है."

तार पढ़ कर क्षशाँक हैरान कि क्षण क्षण सचेत रहने वाली क्षेमा से ऐसी गलती हुई कैसे कि वो दुश्मन देश की सीमा में अतिक्रमण कर बैठी?

अचानक उसे याद आया कि उनका एक मुस्लिम सहपाठी अपने माता पिता संग पाकिस्तान चला गया था और अब वह पाकिस्तान के गृह विभाग में किसी उच्च पद पर है. ये बात उसे सुगंधा से ज्ञात हुई थी.

क्षशाँक ने उससे संपर्क किया, सुगन्धा और अपनी याद दिलाई और क्षेमा की सकुशल वापसी की गुजारिश की. नाम था उसका खुदा बख्श जिसने सेना के उच्च अधिकारियों से तुरंत संपर्क किया और उनको कहा कि जो पूछताछ करनी हो. वे करें मगर क्षेमा को कोई कष्ट न हो. तसल्ली होने पर उसे जल्दी से जल्दी रिहा कर दिया जाए.

क्षशाँक और भारत सरकार के प्रयासों से क्षेमा लौटी मगर एक टांग गँवा कर.

क्षशाँक अपने निवास पर था. दरवाज़े पर लगी घंटी घनघनाई थी. उसने द्वार खोला था और द्वार खोलते ही उसने देखा कि क्षेमा बैसाखी के सहारे खड़ी उसका इंतज़ार कर रही है. उसके चेहरे पर मुस्कान तैर रही थी.

क्षशाँक ने मुस्कराते हुए उसे गले लगा लिया था और कहा था, "कोई फ़िक्र नहीं मित्रश्रेष्ठ. योद्धा तो जीवन तक न्योछावर करते रहे हैं. आपने तो एक टांग ही राष्ट्र को अर्पित की है. दूसरी टांग मैं हूँ ना?"

क्षशाँक के गले से लिपटी क्षेमा कातर भाव से अपने प्रेम को प्रेम से तक रही थी. आँखों से आँसू बह रहे थे. वे आँसू गम के थे या मिलन की खुशी के, उन पर किसी तरह की राय देना बचकाना प्रयास होगा क्योंकि आँसुओं की न तो कोई बिरादरी होती है और न ही

सम्प्रदाय. न ही कोटि होती है और न ही कोई श्रेणी.

वायु सेना के अधिकारी जो क्षेमा को छोड़ने आये थे, आतिथ्य को विनम्रता के साथ अस्वीकार कर और अपने अधिकारी को सेल्यूट मार कर लौट गए थे. क्षशाँक को अपने प्रेम पर गर्व हो आया था कि विकलांग होते हुए भी उसे इतना सम्मान मिल रहा है.

उनके लौटने पर क्षेमा ने कहा, "मित्रश्रेष्ठ, हमें यकीन नहीं था कि आप मुझे इस रूप में स्वीकार करोगे. आपने तो मुझे ऋणी बना डाला."

"माफ करना मित्रश्रेष्ठ. अगर मुझे आपके आगमन की पूर्व सूचना होती तो गाजे बाजे के साथ आपका स्वागत होता. आपने ये सोच कैसे लिया कि हम इतने निष्ठुर हो जायेंगे?"

अपनी कटी टांग को आगे बढ़ाते हुए कहा, "इसके कारण."

"आप भूल गईं कि इस देश में देशभक्तों को आँखों पर बिठाया जाता है. और आप तो ठहरे हमारी मित्रश्रेष्ठ. अब और न तो कुछ कहो और न ही सोचो."

यह सुन कर क्षेमा ने नज़रें नीची कर ली.

क्षशाँक ने कहा, "वीरांगनाओं की नजर ऊपर होती है मित्रश्रेष्ठ. हम कभी नहीं चाहेंगे कि हमारे मित्रश्रेष्ठ की नज़र कभी भी और किसी भी कारण से नीची हो."

"ठीक है प्राणनाथ," क्षेमा ने कहा.

"गलत. प्राणनाथ नहीं, मित्र कहो. साथ साथ चलने वाले और एक दूसरे का हाथ थामे मित्र. सहयात्री."

"आप कितने अच्छे हैं. बिल्कुल नहीं बदले. वही बिंदास मिजाज और वही समर्पण. मैं तो धन्य हो गई."

"मैं नहीं, हम कहो. साथ साथ चलने वाले स्वछन्द यायावर. किसी ने कहा है न हम दीवानों की क्या हस्ती, आज यहाँ कल वहाँ चले ,मस्ती का आलम साथ चला, हम धूल उड़ाते जहाँ चले."

"हम तो आपको विवाह करने की राय देने वाले थे. मुझ अपाहिज संग क्या!"

क्षशाँक ने क्षेमा के होठों पर ऊंगली रखते हुए कहा, "भूल कर भी ये कभी न कहना. स्वीकार में ही स्वर्ग है मित्रश्रेष्ठ. भटकाव में भटकने के सिवाय कुछ नहीं रखा. आप हमारी मंजिल हैं और वो हमने पा ली."

क्षशाँक ने देखा कि उसे सुन कर क्षेमा अपने पाँव के अंगूठे से फर्श को कुरेदने लगी थी. वह आगे बढ़ा, क्षेमा का चेहरा दोनों हथेलियों में लिया और उसके मस्तक को चूम लिया.

क्षेमा ने आँखें मूँद ली. क्षशाँक की आँखें तो पहले ही बंद थी. प्रेम की वर्षा में दोनों एक साथ भीग रहे थे.

दोपहर हुई. क्षशाँक ने अपने मित्रश्रेष्ठ की पसंद का भोजन बनाया. क्षेमा उसे टुकुर टुकुर देख रही थी. क्षशाँक के जीवट पर वो मुग्ध थी.

उसी समय उसे प्रोफेसर की टिप्पणी याद आ गई. "क्षशाँक, आपका ध्यान किधर है?"

“सर, क्षेमा की ओर.” वो स्वत: खिलखिला पड़ी.

“ये हुई न बात. ऐसे ही खिलखिलाती रहो. फिर देखो जीवन में वसंत ही वसंत है.”

“आपको पता है मैं किस बात पर हँसी?”

“आप हँसी, यह क्या कम है? हमारे लिए यही काफी है कि आप हँसी. क्यों और क्या से हमें क्या लेना देना? चलो, आओ. भोजन करते हैं.”

क्षशाँक ने एक कौर तोड़ा और क्षेमा के मुँह में डाल दिया. क्षेमा ने भी प्रतिदान किया और एक कौर क्षशाँक के मुँह में डाल दिया.

मौन होकर दोनों भोजन कर रहे थे फिर भी एक दूसरे को देख कर मुस्करा रहे थे. जीवन गति पकड़ने लगा था.

क्षशाँक प्रात: भ्रमण का न केवल शौकीन था बल्कि उसकी दिनचर्या का प्रमुख हिस्सा था. अब तो उसे क्षेमा का साथ मिला. दोनों उसी पार्क में घूमने जाते जिसमें बाबा से प्रथम मुलाक़ात हुई थी.

“बाबा नहीं दिखाई दिए,” क्षेमा ने पूछा.

उत्तर में क्षशाँक ने गुलाब, खुशबु और उनकी स्मृति में बनाए गये विद्यालय की बात बताई तो क्षेमा बोली, “वाह! प्रेम हो तो खुशबु जैसा.”

“हाँ मित्रश्रेष्ठ. खुशबु ने इन्ही बाँहों में दम तोड़ा था. उधर गुलाब ने अंतिम साँस ली थी और इधर हमारे पास खड़ी गुलाब ने. अगर हम उसे न संभालते तो वो गिर ही पड़ती,” आह भरते हुए क्षशाँक ने कहा.

“ईश्वर दोनों को अपने श्रीचरणों में स्थान दें,” क्षेमा ने कहा.

42

अस्वस्थता के आधार पर क्षेमा सेवानिवृत हो चुकी थी. उसे सब मान सम्मान मिला था जिसकी वो हकदार थी. राष्ट्रपति ने उसे वीर चक्र से सम्मानित किया था.

क्षशाँक को अब फ़िक्र थी कि उसकी अनुपस्थिति में क्षेमा की देख भाल कौन करे? उसने अपनी समस्या मीरा को बताई. मीरा ने विद्यालय की सबसे निष्ठावान सहायिका को क्षशाँक के यहाँ भेज दिया.

एक समस्या हल हुई तो दूसरी तैयार थी. एक दिन क्षेमा और क्षशाँक साथ साथ बैठे कॉफी पी रहे थे कि क्षेमा ने अकस्मात कहा, “मित्रश्रेष्ठ, मैं तो अकर्मी होती जा रही हूँ. बिना काम किये मन नहीं लगता. ऐसे जीवन का क्या लाभ?”

“अरे, ऐसा भी क्या? जो आपका शौक हो, वो शुरू करें. बताएं किस चीज़ का शौक है? गीत, संगीत, चित्रकला या कुछ और?”

“आपको याद होना चाहिए कि मुझे खेलों का शौक रहा है. अब कहाँ खेल और कहाँ शौक?”

क्षशाँक ने क्षेमा के मस्तक को चूम कर उसे मानसिक सुख देने का प्रयास किया. क्षेमा मुस्करा दी.

“मित्रश्रेष्ठ, यूँ ही मुस्कराया करो. मुस्कराती हुई कितनी अच्छी लगती हो.”

क्षशाँक ने मीरा का पुन: सहारा लिया और समस्या बताई. मीरा सोच में पड़ गई. अचानक वो बोली, “आप उनको इधर छोड़ कर कालिज चले जाया करें. शाम को लौटते हुए उसे ले लिया करें. इससे वे मशरूफ हो जायेंगी और उनकी देख भाल भी अच्छी होगी.”

“वाह! एक पंथ दो काज.”

“मुझे लगता है कि बाबा को भी क्षेमा के बारे में बता दिया जाए. उसे वे अचानक देखेंगे तो न जानें क्या और कैसी प्रतिक्रिया दें? हो सकता है मानसिक आघात तक लग जाए जो किसी सूरत में उनके लिए ठीक नहीं होगा. ”

“हाँ, ये ठीक कहा. ये काम आप करें. मुझे तो वे गालियाँ देने लगते हैं,” हँसते हुए क्षशाँक ने कहा.

“ठीक है. नवमी कक्षा से रक्षा अध्ययन की पढ़ाई शुरू कर देते हैं. दीदी इस विषय की विशेषज्ञ हैं. आप देखें कि बाज़ार में इस विषय पर कोई पुस्तक उपलब्ध है या नहीं?” मीरा ने कहा.

“ठीक है. क्षेमा को कब लेकर आऊँ?”

“मैं आपको बता दूँगी. पहले बाबा को जरा तैयार कर लूँ? मुझे उनकी चिंता है,” मीरा ने कहा.

“मीरा, आप न होती तो मैं दुविधाओं में फँसा रहता. आप हर हालात को कुशलता से संभाल लेती हैं,” क्षशाँक ने आभार जताते हुए कहा.

“छोड़ो सर. ये आपका बडप्पन है. सहारा तो आपने दिया था और मैं मूर्ख उसे भी गलत समझ बैठी थी,” मीरा ने कहा.

“मीरा, भूल को स्वीकार कर लेने पर भूल भूल नहीं रहती. आप नाहक ही पश्चाताप करती रहती हैं. आगे से इस प्रकरण को न उठाना. हमें अच्छा नहीं लगता. अब तो आप इस परिवार की वरिष्ठ सदस्य बन चुकी हैं,”

“आपका बहुत बहुत आभार, सर. ध्यान रखूँगी.”

“ठीक है. मैं कालिज के लिए चलता हूँ. जब तक कोई इंतजाम न हो तब तक क्षेमा से फोन पर या वहाँ जाकर उससे बात करते रहना जिससे वो अकेलापन न महसूस करने लगे. वो सदा कर्मरत रही है. भाग्य ने उससे उसकी कर्मशीलता छीन ली है. हमें देखना होगा कि वो अकर्मण्य महसूस न करे.”

“आप निश्चिन्त रहें. मैं उनको ऐसा कभी न महसूस होने दूंगी. मैं आज ही उनके पास जाऊँगी. अपने पुस्तकालय से कुछ उपन्यास ले जाऊँगी और उनको सुझाव दूँगी कि वे उनको पढ़ कर हमारे छात्रों में उन उपन्यासों को पढ़ने हेतु प्रेरित करें. मुझे यकीन है कि वे इसे पसंद भी करेंगी,” मीरा ने कहा.

“वाह! आपने एक बार फिर साबित कर दिया कि आप कितनी सृजन योजनाकार है,” क्षशाँक ने कहा.

“शुक्रिया सर. जो भी हूँ, आपकी बदौलत हूँ.”

“स्नेह बना रहे. अच्छा, कालिज हमारा इंतजार कर रहा है. मिलते हैं,” क्षशाँक ने कहा और कालिज के लिए निकल लिए.

43

मीरा कुछ उपन्यास लेकर उसी दिन क्षेमा से मिलने पहुँच गई. द्वार पर लगी घंटी बजाई, सहायिका ने द्वार खोला, मीरा को बैठक में बिठाया और क्षेमा को जा कर बताया कि विद्यालय से मीरा दीदी आई हैं.

“उनको मेरे कमरे में ही भेज दो,” क्षेमा ने कहा.

“जी, मैडम.”

“चलिए दीदी, मैडम आपको अपने कमरे में ही बुला रही हैं,” सहायिका ने मीरा से कहा.

जब मीरा को छोड़ कर सहायिका जाने लगी तो क्षेमा ने कहा, “तीन कप कॉफी बना लाओ.”

सहायिका को जो सम्मान क्षेमा दे रही थी, उसको देख कर मीरा बोली, “दीदी, आपने बहुत बड़ा दिल पाया है.”

“आप बताएं कैसे आना हुआ?” क्षेमा ने मुस्कराते हुए पूछा.

“दीदी के पास आने के लिए कारण ढूँढना होगा क्या,” मुस्कराते हुए मीरा ने पूछा.

“इतने दिन हो गए, आज दीदी की याद आई?”

“याद तो कभी भूली ही नहीं थी. जब भी किसी यान को उड़ते देखती थी, सोचती थी कि ज़रूर मेरी दीदी ही उड़ा रही होंगी.”

“वाह! आपने तो निरुत्तर कर दिया. वाकई में आप ज़हीन हैं. क्षशाँक आपकी तारीफ़ यूँ ही नहीं करते?”

“ये उनका बड़प्पन है,” नीची नज़रें किये मीरा ने कहा.

“और आपकी विनम्रता.”

“कहिये, आप कैसी हैं?” मीरा ने पूछा.

“सब ठीक. मगर समय काटे नहीं कटता.”

“मेरे पास इसका उपाय है. इज़ाज़त दें तो कहूँ?”

“अरे, ऐसा भी क्या?”

“आपसे एक प्रार्थना है.”

“प्रार्थना कैसी? कहिये न?”

“बहुत कोशिश करने के बावजूद हमारे छात्र अतिरिक्त पुस्तकें कभी नहीं पढ़ते. अगर आप उनको प्रेरित कर सकें तो मैं आपकी आभारी हूँगी.”

“वो कैसे?”

“मैं आपके लिए कुछ उपन्यास लाई हूँ. मुझे उम्मीद है कि आपकी इनमें रूचि अवश्य होगी. आप पढें और फिर छात्रों से इनके कथानक पर विमर्श करें. इससे आपका समय भी अच्छा गुजरेगा और छात्रों की ज्ञानवृद्धि भी होगी. उनकी स्वाध्याय में रूचि बढ़ेगी जो मैं नहीं कर पाई,” मीरा ने खुलासा करते हुए कहा.

“जब आप नहीं कर पाई तो मैं कैसे कामयाब होऊंगी?” क्षेमा ने पूछा.

“मानव स्वभाव है कि वो अपनों की बजाय अनजान लोगों को अधिक गौर से सुना करता है. किशोर तो इस बारे में और अधिक आश्रित होते हैं. मुझे पूरा यकीन है कि आप छात्रों में स्वाध्याय की प्रवृति को उभारने में अवश्य कामयाब होंगी.”

“आपको मानव स्वभाव और किशोर मनोविज्ञान की अच्छी समझ है,” क्षेमा ने कहा.

“सब गुरुदेव के पास सीखा है.”

“गुरुदेव कौन?”

“आपके क्षशाँक,” कह कर मीरा हँस पड़ी.

“बहुत खूब. मुझसे पहले तो वे आपके हैं. आपने ही तो उनको संभाला है,” क्षेमा ने कहा.

“हाँ, मगर आपके लिए.”

यह सुन कर क्षेमा की आँखें नम हो गई. उसने मीरा का हाथ अपने हाथ में लिया और चूम लिया.

“ठीक है. ये पुस्तकें हमारे पास छोड़ दें. उपन्यास पढ़ने का मुझे शौक है, ये आपको कैसे मालुम हुआ?”

“बस, यूँ ही. अनुभूति हुई थी. कहें तो सिर्फ अंदाज़ था. अंदाज़ ठीक निकला, मुझे खुशी हुई.”

“आप सलाह दें कि कौन सा उपन्यास पहले पढूँ?”

“जो भी आपको अच्छा लगे. ये चुनाव आपका.”

“मेरा खयाल है कि शरत जी का देवदास ठीक रहेगा. किशोर प्रेम कहानियों में अधिक रूचि लिया करते हैं,” क्षेमा ने कहा.

“बहुत खूब. सच पूछो तो दीदी, मैं भी यही सुझाव देने वाली थी. मगर हर पाठक का अधिकार होता है कि वो कब और क्या पढ़े? इसलिए चुप रह गई थी.”

“मुझसे संकोच न किया करें. आपने तो मेरी धरोहर को सँजो कर रखा है. आपकी किसी

बात पर मुझे कभी कोई एतराज़ न होगा," क्षेमा ने कहा.

"धरोहर? समझी नहीं."

"क्षशाँक."

एकमेव शब्द सुन कर मीरा खिलखिला पड़ी.

"ठीक है दीदी. भविष्य में संकोच कभी नहीं होगा. जब इस आप उपन्यास को पढ़ लें तो फोन कर देना. मैं आपको लेने हेतु गाड़ी भेज दूँगी. अब मैं चलती हूँ."

"ठीक है," क्षेमा ने कहा.

विद्यालय लौटती मीरा काफी खुश थी. क्षेमा को व्यस्त रखने हेतु जो योजना उसने बनाई थी, वो कामयाब होती नजर आ रही थी.

विद्यालय पहुँच कर मीरा ने कक्षा आठ और नौ के छात्रों को ग्रुप कमांडर क्षेमा के बारे में विस्तारपूर्वक बताते हुए उनको जानकारी दी कि वे कितनी बहादुर और राष्ट्रप्रेमी है. क्षेमा के बार में सुन कर लड़कियाँ और अधिक खुश और उत्सुक नज़र आई.

एक लड़की ने पूछा, "ग्रुप कमांडर क्या होता है दीदी?"

मीरा अपने आपको दीदी कहलवाना पसंद करती थी. उसने कहा, "ग्रुप कमांडर भारतीय वायु सेना का बहुत बड़ा पद होता है."

"वाह! वे हवाई ज़हाज़ उडाती हैं?"

"हाँ. वे बहुत अच्छी पायलट हैं. मगर एक दुर्घटना में उनके पाँव पर गहरी चोट लगी. अब वे सेवानिवृत होकर आ गई है."

"ओह! ये तो बुरा हुआ. उनको वायु सेना जैसे जोखिम भरे विभाग में नहीं जाना चाहिए था," एक लड़की बोली.

दूसरी ने उत्तर दिया, "दुर्घटना तो कहीं भी हो सकती है. इसमें वायु सेना की क्या बात?"

"बिल्कुल ठीक कहा. क्या आप उनसे मिलना चाहोगे?"

"जी दीदी, जी," छात्रों ने एक स्वर में कहा.

ठीक है. मैं उनको जल्दी ही निमंत्रित करती हूँ. वे बैसाखी के सहारे चलती हैं. आप सब समझदार हो. फिर भी याद दिला दूँ कि कोई अभद्रता न हो," मीरा ने कहा.

"कभी नहीं दीदी, कभी नहीं," छात्रों ने कहा.

44

पाँच दिन बाद मीरा को क्षेमा का सन्देश मिला कि उपन्यास पढ़ लिया है. जब चाहो, गाड़ी भेज सकती हो.

तीन दिन बाद क्षेमा और मीरा छात्रों के सम्मुख थीं. क्षेमा देवदास के कथानक से परिचय

करवा रही थी और मोहब्बत जैसे मानवीय पहलु पर विचार विमर्श कर रही थी.

छात्र गौर से सुन रहे थे.

जब कथा पूरी हुई तो क्षेमा ने पूछा कि कहानी कैसी लगी?

प्रश्न सुन कर भानु बोला, "मैडम, कहानी तो अच्छी है मगर प्रेम तो किसी का भी सफल नहीं हुआ."

"अति उत्तम प्रश्न," मुस्कराते हुए क्षेमा ने कहा.

दूसरे छात्र ने कहा, "फिर इसे प्रेम कथा कैसे कह सकते हैं?"

"अच्छा. आप ये बताओ कि इस कथा में आप किन किन पात्रों को प्रेम के सागर में डूबा हुआ पाते हो?"

"देवदास और पारो," एक छात्र ने कहा.

"पारो को पूरा नाम?"

"पार्वती."

"अति उत्तम. दूसरा युग्ल कौन?"

"चन्द्रमुखी और देवदास."

"बहुत खूब."

"तीसरा युग्ल?

छात्र चुप. कुछ इधर उधर देखने लगे और कुछ सिर खुजलाने लगे.

"तीसरा युग्ल तो कोई नहीं है मैम," एक छात्र ने उत्तर देते हुए कहा.

"नहीं, कुछ और भी हैं. सोचो और बताओ," क्षेमा ने प्रेरित करते हुए कहा.

"पारो और भुवन चौधरी," एक छात्र ने उत्तर देते हुए कहा.

"भुवन चौधरी तो बूढ़ा है और पारो जवान. उनका क्या प्रेम?" एक अन्य छात्र ने टीका करते हुए कहा.

टिप्पणी सुन कर सभी छात्र हँसने लगे.

"मुझे खुशी है कि आप लोगों ने कहानी ध्यान से सुनी है. उस पर मंथन भी किया है. मगर प्रेम में उम्र का क्या सवाल?" क्षेमा ने पूछा.

छात्र चुप.

"अच्छा और कोई युग्ल?" क्षेमा ने पुन: पूछा.

छात्र फिर चुप.

"कोई बात नहीं. इस विषय पर हम अपना विचार विमर्श कल जारी रखेंगे. पूरी कहानी पर आप सब चिंतन मनन करें कि उसमें और ऐसे युग्ल कौन कौन से हैं जो एक दूसरे से बेहद

मोहब्बत करते हैं. कल हम फिर मिलेंगे," क्षेमा ने चिंतन मनन हेतु और समय देते हुए कहा.

"मैम, आज और अभी क्यों नहीं?"

"चिंतन मनन से अनेक प्रश्न स्वत: हल हो जाया करते हैं. प्रश्न फिर भी हल नहीं होते हैं तो हम हैं न?"

"ठीक है मैम. आपके परामर्श अनुसार इस रोचक मुद्दे पर हम भी चिंतन मनन करते हैं. कल मिलते हैं," भानु ने कहा.

"अति उत्तम भानु, आप काफी विवेकवान लगते हो. एक काम करो. इस मुद्दे पर चिंतन मनन हेतु आप अपने साथियों का एक समूह बनाओ."

"मैडम, वो किस लिए?"

"जिससे एक दूसरे को अपने विचार रखने का मौका दिया जा सके. एक बात का विशेष खयाल रखना. जब कोई अपने विचार रख रहा है तो उसके प्रस्तावों में विघ्न न डालना. एक दूसरे की बात को सुनना और उस पर मंथन करना भी एक कला है. मुझे पूरी उम्मीद है आप और आपका समूह अवश्य ही कुछ नायाब विचार खोज लेगा."

"बहुत बहुत शुक्रिया मैडम. हम कोशिश अवश्य करेंगे कि उन युगलों को चिह्नित कर सकें जो मोहब्बत के तारों से आपस में जुड़े हैं," भानु ने कहा.

"ठीक है. कल मिलते हैं. शुभ कामनाएं," क्षेमा ने कहा और चर्चा अगले दिन के लिए स्थगित कर दी गई.

45

अगले दिन क्षेमा और छात्र फिर मिले. क्षेमा ने पूछा कि क्या कोई छात्र देवदास कहानी में किन्ही और युगलों की पहचान कर पाया?

प्रश्न सुन कर सभी छात्र एक दूसरे का मुँह तकने लगे थे. जब कोई नहीं बोला तो क्षेमा ने पूछा, "अच्छा, धर्मदास कौन है?"

"देवदास का नौकर."

"अति उत्तम. क्या देवदास के साथ धर्मदास का प्रेम नहीं है?" क्षेमा ने पूछा.

"प्रेम तो लड़की और लड़के में होता है मैडम. वे तो दोनों पुरुष हैं," एक छात्र ने कहा.

साथी का तर्क सुन कर सभी छात्र खिलखिला पड़े.

"ओहो! अरे अगर धर्मदास का देवदास के साथ प्रेम नहीं होता तो अंतिम समय तक वह देवदास के साथ क्यों भटकता रहता? याद है न रेल यात्रा के दौरान उनकी बातचीत?" मुस्कराते हुए क्षेमा ने प्रश्न किया.

प्रश्न सुन कर सभी छात्र चुप.

"प्रेम में न तो उम्र आड़े आती है न ही मर्द स्त्री का भेद. प्रेम न सीमाओं को मानता है न

धर्म और जाति को.”

“जी मैडम.”

“दूसरी बात, भानु ने कहा था कि प्रेम किसी का पूरा नहीं हुआ. जबकि मैं कहती हूँ कि प्रेम सभी का पूरा हुआ है,” क्षेमा ने कहा.

“वो कैसे मैडम?” भानु ने पूछा.

“अगर प्रेम नहीं होता तो देवदास अंतिम साँस लेते हुए भी पारो के गाँव क्यों जाता और पारो बदहवास होकर देवदास की ओर क्यों भाग खड़ी होती?”

छात्र चुप.

“अगर देवदास संग चन्द्रमुखी का प्रेम नहीं होता तो वो नाच गान जो देवदास को पसंद नहीं था, क्यों छोड़ती?”

छात्र फिर चुप.

“अगर धर्मदास का देवदास संग प्रेम नहीं होता तो वो उसके साथ रेल यात्रा में क्यों भटकता रहता?”

छात्र फिर चुप.

“बच्चो, आप सब हैरान हो क्योंकि प्रेम का अर्थ आपको किसी ने बताया ही नहीं. प्रेम अनुराग है. प्रेम समर्पण है. प्रेम त्याग है. प्रेम निस्वार्थ है. इसीलिये निकट न होते हुए भी प्रेम अक्षुण्ण है.”

“अक्षुण्ण का मतलब?” भानु ने पूछा.

“अखंडित, अविभाजित, समूचा, पूरा. यानि देवदास कहानी में सभी पात्रों का एक दूसरे के प्रति प्रेम पूरा हुआ है. किसी का भी अधूरा नहीं रहा,” क्षेमा ने कहा.

“जी,” भानु ने कहा.

“अगर आप ध्यान से देखें तो प्रेम की कुछ नजीरें इस कहानी में और भी मिल जाएंगी. जैसे पारो और देवदास का अपने माता पिता के प्रति समर्पण और त्याग,” विमर्श को विराम देते हुए क्षेमा ने कहा.

“जी मैडम,” भानु ने कहा.

“और कोई प्रश्न?” क्षेमा ने पूछा.

“मैडम, एक सवाल है. मगर पूछने में शर्म आ रही है,” नितेश ने कहा.

“पूछो वत्स. माँ, पिता और गुरु से प्रश्न पूछने में शर्म कभी नहीं करनी चाहिए,” क्षेमा ने कहा.

“अगर देवदास और पारो का प्रेम सच्चा था तो उनको विवाह कर लेना चाहिए था न?”

“वाजिब प्रश्न.”

“फिर?”

“एक बात बताओ नितेश? आपको सबसे अधिक प्रेम कौन करता है?”

“मेरी माँ और पिताजी.”

“तो आप खुद बताओ कि आपको अपने माता पिता की बात माननी चाहिये या उस लड़की की जो एक दो वर्ष से ही आपके जीवन में आई है?”

“शुक्रिया मैडम. मैं समझ गया.”

“अति उत्तम. और किसी का कोई प्रश्न? शरमाना नहीं. मैं बुरा नहीं मानूँगी,” क्षेमा ने प्रोत्साहित करते हुए कहा.

“तो क्या प्रेम विवाह नहीं करना चाहिए?” पूछा था शांता ने.

“माता-पिता की रजामंदी से प्रेम विवाह करने में कोई बुराई नहीं. अगर वे राजी न हों तो जिद नहीं करनी चाहिए,” क्षेमा ने कहा.

“जी, समझ गई. आभार.”

“किसी का और कोई प्रश्न? शरमाएं नहीं. आपके मन में जो भी प्रश्न हो, पूछ लें. ऐसे अवसर बार बार नहीं मिला करते हैं.”

सभी छात्र चुप रह गए.

“अच्छा, हाथ उठा कर अब ये बताओ कि इस पुस्तक को सबसे पहले कौन पढ़ना चाहेगा?”

प्रश्न सुन कर दस छात्रों ने हाथ उठा दिया.

“ओहो, पुस्तक एक और पढ़ने वाले दस. ठीक है. आप सबको इस उपन्यास की प्रति कल मिल जायेगी. दस दिन बाद मैं फिर मिलूँगी. ठीक है?”

“जी मैडम.”

“कहानी अच्छी लगी क्या?”

“जी मैडम. तभी तो हम इसे पढ़ना चाहते हैं,” भानु ने कहा.

“मुझे खुशी हुई. आप सब दो तीन काम और करेंगे.”

“बताएं मैडम.”

“हमारे विषय की एक कापी अलग बना लें. उस कापी में इस कहानी को लिख कर लाना और मुझे दिखाना. दूसरी बात, उपन्यास पढ़ते समय जो भी प्रश्न आपके दिमाग में आये, उसे लिखते रहना. जब फिर से मिलेंगे तो हम उनका उत्तर देने की कोशिश करेंगे. तीसरी बात, अगर कोई कठिन शब्द आपकी समझ में न आये तो उसका अर्थ मुझसे या अपनी हिंदी की अध्यापिका से पूछ लेना, संकोच नहीं करना.”

“ठीक है, मैडम.”

“ठीक है. आपसे फिर मिलेंगे,” क्षेमा ने कहा.

विमर्श से फारिग होकर क्षेमा मीरा के कार्यालय में पहुँची. मीरा ने उठ कर उसका स्वागत किया और पूछा, “कहिये, छात्रों से वार्ता कैसी रही?”

“बहुत अच्छी,” क्षेमा ने कहा.

“क्या लेंगी? चाय या कॉफी?”

“कॉफी ठीक रहेगी. मुझे उसकी महक बहुत अच्छी लगती है. कॉफी की महक जैसे ही नासारंध्रों में प्रवेश करती है, दिमाग तक को सक्रिय कर देती है,” क्षेमा ने मुस्काते हुए कहा.

“बहुत खूब. कलाकार अधिकतर कॉफी ही पसंद करते हैं,” मीरा ने भी मुस्कराते हुए स्वीकार किया.

46

“दीदी, आपने तो गज़ब कर दिया. पहली गोष्ठी में ही छात्रों को सम्मोहित कर लिया. सब आपके भक्त हो गए हैं,” कॉफी पीते हुए मीरा ने कहा.

“आपको कैसे पता?”

“आप जिस कक्ष में छात्रों संग चर्चा कर रही थीं, उस कक्ष में कैमरे लगे हैं और मेरे कार्यालय के टीवी से जुड़े हुए हैं. मैं सब देख और सुन रही थी.”

“ओह! आप हमारी जासूसी कर रही थीं?”

“नहीं दीदी, जासूसी नहीं बल्कि आपसे सीख रही थी कि छात्रों को आप अपना कैसे बनाती है और प्रेरित करती हैं? छात्रों संग कितने सहज तरीके से आपने सामंजस्य स्थापित कर लिया था? काश! हर शिक्षक इतना निपुण हो,” मीरा ने कहा.

“ये हुनर मैंने भी फौज में सीखा था. वहाँ जवानों को अपना बनाना पड़ता है क्योंकि बीबी-बच्चों से दूर अपने आपको वे उजड़ा उजड़ा महसूस किया करते हैं.”

“वाह!”

“अच्छा, जब आप सब कुछ देख और सुन रही थी तो आपको जिज्ञासु छात्रों को दिए गए मेरे वायदे की जानकारी भी मिल गई होगी.”

“कौन सा वायदा?”

“देवदास की दस प्रतियाँ मँगा कर उन छात्रों को कल देने वाला. आप दस प्रतियाँ मंगवा कर उन छात्रों को दे देना जो इस उपन्यास को पढ़ना चाहते हैं. ये प्रतियाँ मेरी ओर से उन छात्रों को उपहार हैं. बिल मुझे दे देना. उसकी अदायगी मैं कर दूँगी,” छात्रों की सूचि देते हुए क्षेमा ने कहा.

“फिर तो ये उपहार आप ही देना. ये प्रतियाँ मैं अभी मँगा देतीं हूँ. कल पर क्यों छोड़ना?” मीरा ने कहा.

“दस प्रतियाँ तुरंत कहाँ उपलब्ध होंगी?”

“देखती हूँ. मिल जाएँ तो सोने पर सुहागा,” कह कर मीरा ने पुस्तक विक्रेता को फोन किया और कहा कि मुझे एक घंटे के अंदर अंदर देवदास उपन्यास की दस प्रतियां चाहियें.

उधर से उत्तर मिला, “ठीक है मैडम. दस प्रतियों की अचानक क्या ज़रूरत आन पड़ी?”

“बच्चों को उपहार देने हैं. आप भेजो तो.”

थोड़ी देर बाद पुस्तकें मिल गई. छात्रों को हस्ताक्षरयुक्त पुस्तकें उपहार देकर क्षेमा जब घर लौटी तो देखा कि क्षशाँक कालिज से लौट आये हैं और सहायिका पर बिगड़ रहे हैं, “ऐसी क्या मुसीबत आन पड़ी थी कि क्षेमा को घर से बाहर जाना पड़ा.”

“अरे क्या हुआ? क्यों आसमान सिर पर उठा रखा है?” क्या मैं सारा दिन घर में कैद रहूँ?”

क्षशाँक ने पीछे मुड़ कर देखा. क्षेमा सामने खड़ी थी और मुस्करा रही थी.

क्षेमा को व्यस्त करने हेतु मीरा की योजना के बारे में जब क्षशाँक को जानकारी मिली तो उस की तारीफ़ करने के मोह को वो भी नहीं छोड़ पाया और मन ही मन कहा, “वाह मीरा, वाह!”

“आपने कुछ कहा क्या?” क्षेमा ने पूछा.

“हाँ, क्या आपको रोज जाना होगा?”

“देखते हैं. छात्रों को कह कर आई हूँ कि दस दिन बाद मिलूँगी. मगर यहाँ पड़े पड़े भी क्या करूँगी? मीरा दीदी की सोहबत अच्छी लगी. अगर आपको एतराज़ न हो तो रोज ही जाया करूँ?”

“रोज क्या करेंगी?”

“क्यों न छात्रों को रक्षा और सुरक्षा का ज्ञान दिया जाए? वे अच्छे नागरिक बनेंगे.”

“क्या मतलब?”

“क्यों न हम रक्षा अध्ययन की पढ़ाई शुरू कर दें. इस विषय के हम विशेषज्ञ हैं ही,” क्षेमा ने कहा.

“उत्तम विचार.”

क्षेमा जैसा चाहती थी, वह गुलाब खुशबु विद्यालय में व्यस्त हो चुकी थी और बहुत खुश थी.

खुश भी क्यों न हो? किशोर किशोरियाँ किसी बगिया से कम नहीं होते. हँसते और खिलखिलाते हुए, उछल कूद करते हुए, तरह तरह का अभिनय करते हुए.

जब किसी छात्र को रस्से पर चढ़ते हुए और फिसलते हुए देखती तो क्षेमा की हँसी छूट जाती और उसे उत्साहित करती, “शाबाश, पुन: कोशिश करो.”

उस समय उसे अपने वे दिन याद भी आने लगते जब वो खुद पायलट का प्रशिक्षण ले रही

थी और भरपूर कोशिश के बावजूद वह रस्से से फिसल जाया करती थी और प्रशिक्षक उसे हौंसला देता था, “शाबाश, पुन: कोशिश करो.”

47

विद्यालय से संबंधित शिकायतें बाबा सुना करते थे. आगुन्तकों के साथ उनके मृदु व्यवहार को देख कर मीरा ने वह महत्वपूर्ण काम उनको सौंप दिया था.

बाबा द्वारा किये समाधान से शिकायतकर्ता अमूमन संतुष्ट होकर जाया करते थे. इसलिए उनको व्यस्त रखने के लिए उसने बाबा को यह काम और कार्यालय सौंप दिया था और निश्चिन्त हो गई थी.

एक दिन बाबा के पास एक व्यक्ति आया और उनको पहचानते हुए बोला, “अरे चाचा! आप? और यहाँ इस विद्यालय में? आपकी बेटी तो आपको खोजती फिर रही हैं.”

बाबा चुप रहे और आगुन्तक को ऐसे देखने लगे जैसे किसी भूत हो देख रहे हों.

संयोग कुछ ऐसा हुआ कि मीरा उसी समय बाबा से मिलने आ गई थी और आगुन्तक की बात सुन ली थी.

“इनकी बेटी कहाँ हैं?” मीरा ने पूछा.

“लखनऊ में.”

“वो वहाँ क्या करती है?”

“ये लखनऊ के मूल निवासी हैं. ये बहुत बड़े रईस हैं. ये अनेक अचल संपत्तियों के स्वामी है,” आगुन्तक ने कहा.

“फिर ये भटकते क्यों फिर रहे थे? हमने इनको बड़ी बुरी हालत में एक पार्क में पाया था और मनुहार कर इनको अपने साथ ले आये थे,” मीरा ने कहा.

“पक्का तो मुझे मालुम नहीं. इतना पता है कि ये एकदम से गायब हो गए थे.”

“बेटी तलाश कर रही है. इनका बेटा नहीं है क्या?” मीरा ने पूछा.

“हैं न? इनके तीन बेटे हैं. मगर इनकी गुमशुदगी का उनको कोई मलाल या गम नहीं.

इतना सुनना था कि बाबा भड़क उठे और अपने कार्यालय से बाहर भाग लिए. आगे आगे बाबा और पीछे पीछे मीरा. बड़ी मुश्किल से उनको पकड़ा और शांत किया.

“मैं कहीं नहीं जाऊँगा, मैं किसी के साथ नहीं जाऊँगा, मैं कभी नहीं जाऊँगा, मैं कहीं नहीं जाऊँगा,” बदहवास होकर बाबा चिल्ला रहे थे.

आगुन्तक और छात्र हतप्रभ होकर बाबा को देख रहे थे.

“बाबा, चिंता न करें. आपको कौन, कब और कहाँ भेज रहा है? आप हमारे पास ही रहोगे,” मीरा ने बाबा को आश्वस्त करते हुए कहा था.

एक छात्र ने कहा, “बाबा तो बहुत ही शांत रहते हैं. आज इनको क्या हुआ है?”

मीरा ने कहा, “कुछ खास नहीं. आप लोग अपने छात्रावास में जाओ और पढ़ो.”

उसके बाद उसने आगुन्तक से पूछा, “आप कौन है और क्या करते हैं?”

“मैं विद्यालयों में पुस्तकें और वर्दियों का कारोबारी हूँ. उसी उद्देश्य से आपके यहाँ आया था कि आप अपने विद्यालय में भी कारोबार करने की अनुमति दें.

“ठीक है. आप अपने प्रस्ताव के कागज़ात कार्यालय में दे दें. हम उनको देख लेंगे. अगर आपकी शर्तें हमारे माफिक हुई तो आपको सूचित कर देंगे.”

“जो शर्तें आप कहेंगी, वही मुझे मंजूर होंगी. आप अनाथ बच्चों का जीवन संवार रही हैं. मेरा भी कुछ योगदान हो जायेगा, मेरा अहोभाग्य होगा,” आगुन्तक ने कहा.

“ठीक है. आपका बहुत बहुत आभार. मैं अकेली कोई फैसला नहीं करती. मैं समिति की बैठक में आपका प्रस्ताव रख दूँगी. जो निर्णय होगा, आपको सूचित कर देंगे.”

“जी मैडम,” कह कर आगुन्तक लौट गया.

उसके जाने के बाद मीरा ने क्षशाँक से संपर्क किया और बाबा की बेचैनी के बारे में बताया.

क्षशाँक आये, बाबा से मिले और कहा, “बाबा, हम आपको कहीं नहीं भेजेंगे. आप अधीर क्यों हो गए थे?”

बाबा बोले, “क्षशाँक, क्षेमा से विवाह कर लो. मैं तुम्हारा सेहरा देखना चाहता हूँ.”

“ठीक है बाबा. मगर क्षेमा दुर्घटना के आघात से अभी तक उबर नहीं पाई है. वो संयत हो जाये. जैसे ही वो तैयार होंगी, हम विवाह कर लेंगे.”

“उल्लू के पठ्ठे हो तुम, तुझे पता है न कि समय किसी की इंतज़ार नहीं किया करता.”

“क्या मतलब, बाबा?”

“वो आदमी लखनऊ जा कर सब को बता देगा और वे यहाँ आ धमकेंगे. वे मुझे पकड़ ले जायेंगे. मैं उनके पास नहीं जाना चाहता. मैं कहीं नहीं जाना चाहता,” बाबा ने क्षशाँक को झिड़कते हुए कहा.

“मैंने कहा न बाबा कि हम आपको कहीं नहीं जाने देंगे. फिर आप यूँ क्यूँ डर रहे हो?”

“तुम नहीं जानते कि वे कैसे जल्लाद हैं.”

“आप फ़िक्र न करें बाबा. मैं उनको देख लूँगा.”

“तुम रहोगे वही के वही, उल्लू के पठ्ठे ,” झुंझलाते हुए बाबा बोले.

बाबा को बेचैन देख कर क्षशाँक को चुप रह जाना पड़ा था.

अगले दिन क्षशाँक को बाबा के तकिये के नीचे से एक खत मिला जिसमें लिखा था, “जैसे भी होगा, मैं जी लूँगा. मगर मरना नहीं चाहता क्योंकि मरना मना है.”

बाबा की खूब खोज खबर हुई. मगर वे न जानें कहाँ गए? पुलिस में गुमशुदगी की तहरीर लिखवा दी गई. पुलिस भी उनको नहीं ढूँढ़ पाई.

भरपूर प्रयासों के बावजूद बाबा नहीं मिले. क्षशाँक और क्षेमा बाबा की राह देख रहे हैं कि वे आयें तो विवाह करें.

इसी कारण अब दोनों काफी विचलित रहने लगे थे.

तभी आवाज़ आई, "तुम बिल्कुल नहीं बदले, क्षशाँक. वही ढुलमुलपन, अस्थिरमन. पता है न कि न तो समय इंतज़ार करता है और न ही जाने वाले कभी लौटते हैं."

आवाज़ किसकी थी, क्षशाँक अच्छी तरह से जानते थे? अदृश्य के सम्मुख वे नतमस्तक होते चले गए थे और मन ही मन कहा था, "माँ माँ होती है. स्वर्गवासी होकर भी संतान को राह दिखाती रहती है."

बाबा का डर सच साबित हुआ. लखनऊ से उनकी बेटी आ धमकी और कहा कि वो अपने बाबा को लेने आई है.

"जिस दिन वो अजनबी लखनऊ से आया था और बाबा से मिला था, वे उसी दिन कहीं चले गए हैं. हमने काफी खोज खबर की. पुलिस ने भी खोजा, मगर वे मिल नहीं पाए," मीरा ने उसको कहा था.

बेटी बड़बड़ाती हुई लौट गई.

उसके बाद तो मीरा को भी अवसाद ने अपने आगोश में ले लिया. वो बाबा के साथ बहुत ही अधिक घुली मिली थी. उनके गायब होने से बहुत विचलित रहने लगी थी. एक दिन वो जल्दी जल्दी सीढ़ियों से उतर रही थी. उसका पैर फिसला और नीचे के तल्ले पर धड़ाम से जा गिरी. उसकी रीढ़ की हड्डी में गहरी चोटें लगी.

हतप्रभ क्षशाँक ने उसका इलाज़ कराने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी थी. फिर भी वो क्षशाँक का साथ सदैव के लिए छोड़ कर स्वर्ग सिधार गई.

क्षशाँक पर बार बार बिजली गिर रही थी, वे हर बिजली को बर्दाश्त किये जा रहे थे मगर मीरा के जाने से उनको लगा था कि प्रियतमा का साथ होते हुए भी वे एक बार फिर से अकेले हो गए हैं.

प्रियतमा मौन साध कर आगे बढ़ी थी और टूटे हृदय को संभाला था. उसने कहा था,

आये हैं सो जाएँगे, राजा रंक फकीर।

एक सिंहासन चढ़ी चले, एक बँधे जात जंजीर।।

तभी एक बार फिर आवाज़ आई, "तुम बिल्कुल नहीं बदले, क्षशाँक. वही ढुलमुलपन, अस्थिरमन, विचलनशील, अस्थिरमना, दुविधाग्रस्त और संशयग्रस्त. पता है न कि जाने वाले कभी नहीं लौटते."

आवाज़ किसकी थी, क्षशाँक अच्छी तरह से जानते थे. अदृश्य शक्ति के सम्मुख वे पुन: नतमस्तक होते चले गए थे और मन ही मन कहा था, "माँ माँ होती है. स्वर्गवासी होकर भी संतान को राह दिखाती रहती है."

क्षेमा और क्षशाँक जानते हैं कि मीरा तो अब लौटने वाली नहीं है मगर बाबा की राह दोनों

देख रहे हैं कि वे आयें तो वे विवाह करें. बाबा आयेंगे या नहीं, लेखक को भी नहीं पता.

इति